श्रीगणेशाय नमः

तुलसीदासजीकृत रामचरितमानस

किष्किंधा काण्डम् ।

टीका—मानस तत्व भास्कर संस्कृत टिप्पणी सहित काशी निवाशी प्रसिद्ध रामायणी

प० रामकुमारजी कृत

जिस्को

उनके सुयोग्य पुत्र पं० रामभरोस जी नें श्री५ राय गंगाप्रसाद सिंह बहादुरस्यात्मज श्रीर लक्ष्मीप्रसाद सिंह जी के अनुमती वो सहायता से सज्जनों के हितार्थ

कन्हैयालाल कृष्णदास, के

"श्रीरमेश्वर,, यन्त्रालय, दरभंगा में छपवाकर प्रसिद्ध किया शाके १८२९ सं १९६४



पं० रामकुमार व्यासजी

भूमिका

हांकि श्री १०८ गोस्वामी तुलसीदास रचित
चरित मानस जो शिवजी के प्रसाद से इस काल
तलव में

पी चहुत
है

यह मानसतत्व भास्कर नाम रक्ख कर तिलक रचना
से किष्किन्धा काण्ड छपने योग ठीक
थे इस बीच
नारी र

यण के प्रेमी वैश्य कुलभूषण श्रीलक्ष्मी प्रसाद सिंह जी
उत्साह और सहायता से इस काण्ड को आप
" " यन्त्रा
में छपवा कर प्रसिद्ध किया अगर किसी विषय का त्रुटि
सज्जन गण सम्भारलें ॥

भवदीय शुभाकांक्षी

पं० रामभरोस

			पंक्ति
टिका	टीका	१	५
सबहिं	पुनिपुनि प्रभुका	२	१
हतेभगवाना,	हतभुजशीसा	२	
सितहिं	सीतहि	२	१६
	चौपाई	२	४
यति	द्युति	२	२४
	होतेहैं	३	६
पुष्टता	पुष्टता	३	१०
पूर	पुर	३	१८
क्योकिया	क्योंकिया	३	२१
	श्रीमच्छम्भु	४	६
ब्रह्मरामतैं	ब्रह्मरामतैं	४	१२
अमर है	अमर हैं	४	२२
	तैसेही	५	१४
सोरठा	सोरठा	६	१४
कठीन	काठिन	६	१८
सुचित	सूचित	८	२
छाय	छाया	८	७
क्योकि	क्योंकि	८	११
सिवा	सींवा	८	१३
	रक्खे है	८	१९
पंपासरही	पंपासरहि	८	२०
उतर	उत्तर	९	१४
सीव	सींव	९	१५
बुझाइ	बुझाई	९	१८
उतर	उत्तर	१०	१४
भूमार	भूभार	११	२१
दिन्हा	दीन्हा	१२	९
उमायोग्या	उमौयोग्या	१२	१९

अथ शुद्धा शुद्धी।

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
करते है	करते हैं	१४	६
रुप कहा	रूप कहा	१५	१
सम्बध	सम्बन्ध	१५	३
हरि	हरी	१६	१३
पूछीं	पूंछी	१६	१६
प्रमुदो	प्रमदो	१८	२३
प्रभु कहै	प्रभु कहे	१९	१५
जनते हैं	जानते हैं	२०	१६
कुछ	कछु	२०	१७
मया	माया	२०	२१
जे	ये	२०	२१
मात	मातु	२१	८
क्योकि	क्योंकि	२२	९
रोषु	रोषू	२३	११
जे भजन्ति	ये भजन्ति	२३	२०
उपर	ऊपर	२४	१६
सुग्रीष	सुग्रीव	२४	२५
पूष	पुत्र	२५	२५
तेहिं	तेहि	२६	१३
फहे	कहे	२६	१८
की	कि	२९	५
गमजी	रामजी	२९	१३
श्वार	चार	२९	२१
गुह्म	गुह्य	३०	२१
कहै	कहे	३१	८
दुर	दूर	३१	२४
पसा	ऐसा	३२	१९
द्रिष्टवा	दृष्ट्वा	३२	२१
सीव	सींव	३३	१८

अथ शुद्धाशुद्धी।

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पांक
करते है	करते हैं	३३	२४
लिए	लिये	३५	३
उपर	ऊपर	३६	१६
हष्वा	हष्वा	३७	२३
भूवन	भुवन	३८	९
कहै	है	३९	५
माही	माहीं	३९	६
शिघ्र	शीघ्र	४०	२१
रम	राम	४१	७
करिहौ	करिहौं	४४	११
बाढो	बाढ़ौ	४५	१५
बूझो	बूझौं	४५	२३
घड़ाइ	घड़ाई	४६	२३
कहे	कहे	४७	३
कहतेहै	कहतेहैं	४७	११
दौडा	दौड़ा	५१	२२
सुनतेहि	सुनतेही	५१	२२
चौपाइ	चौपाई	५४	१
शत्रू	शत्रु	५५	२४
सुग्रवि	सुग्रीव	५६	१७
गासांई	गोसाईं	५६	११
अधाओं	अघाओं	५७	२१
गिरपडा	गिरपड़ा	५८	११
लाखित	सुखित	६१	१३
बूडता	बूड़ता	६२	२०
तबही	तबहीं	६३	१४
तेहिं	जेहि	६४	९
तेहि	तेहि	६४	१०
कहे	कहे	६५	८

अथ शुद्धा शुद्धी।

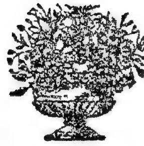
अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
पातेहै	पातेहैं	६६	१५
विनप	विनय	६९	१
द्वितिय	द्वितीय	७२	१
गुसाइँ	गुसाई	७२	२
धिरज	धीरज	७२	७
बिलाम	बिलाप	७२	९
त्यक्धा	त्यक्वा	७२	२२
होगया	होगया	७२	२३
सिध्यर्थ	सिद्धयर्थ	७३	१३
शास्त्रोक	शास्त्रोक्त	७५	२१
प्लुयतेंद्रियः	प्लुतद्रियः	७५	२३
सचित	सुचित	७६	३
उन्होने	उन्होंने	७७	६
होतेहै	होतेहैं	७७	२४
मोहि	मोहिं	७८	१
पुहि	पुनि	७८	१६
हुपभार	वृषभार	७९	११
वल्मीकीय	वाल्मि...ीय	८०	२१
पहाड	पहाड़	८१	६
बनाई	बनाई	८१	१०
कहतेहै	कहतेहैं	८२	१६
विवेक	विवेका	८४	६
नभोमेघै	नभोमेघैः	८५	१८
रहता	रहती	८७	४
नाचतेहै	नाचतेहैं	८७	६
समिप	समीप	८७	७
इसीसै	इसीसे	८८	१५
पडत	पड़त	८९	७
डावर	डावर	८९	७

अथ शुद्धा शुद्धि ।

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
डावर	ढावर	८९	८
डावर	ढावर	८९	९
डावर	ढावर	८९	११
डावर	ढावर	८९	१४
डावर	ढावर	९१	१४
है	हैं	९२	१७
विपट	विटप	९२	११

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
अचल है	अचल	९२	१७	नही	नहीं	१३४	१२
पढने	पढ़ने	१२	२२	भृग	मृग	१३६	१३
बूक्ष	वृक्ष	९३	१३	चरणो	चरणों	१३६	१७
मेघों	मेघों	९४	२२	अथात्	अर्थात्	१३८	६
	मैं	९८	११	जुरय		१३८	१८
बिष्णौ	विष्णौ	१०१	१६	मान	मास	१३८	१९
हैं	है	१०१	१९	यदे	यदि	१३८	२१
कुटुंव्य	कुटुम्ब्य	१०३	२०	प्लवमेश्वर:	प्लवगेश्वरः	१४०	२२
	दुर्लभ	१०४	१७	वांलिमकीये	वाल्मीकिये	१४०	२२
	हैं	१०५	२३	वामर	वानर	१४०	२४
अधा	अगाधा	१०६	१३	पृष्टेन	पृष्ठेन	१४२	२१
है	हैं	१०७	२३	पदार्थो	पदार्थों	१४४	१४
चाकत	चातक	१०९	६	बडे	बड़े	१४५	१२
है		११०	१३	चरणो	चरणों	१४५	१६
न्दू	इन्दु	११०	१६	चरणो	चरणों	१४५	२०
		१११	१५	उडते	उड़ते	१५१	११
		११२	२	क्रौंच	क्रौंच	१५१	२०
सकुल	संकुल	११२	९	मिकलते	निकलते	१५१	२०
वशास्तु	वंशास्तु	११२	२२	पुष्पितान्	पुष्पितान्	१५३	१५

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
द्वाचर	द्वापर	११४	१४	मारेंगें	मारैंगे	१५९	२०
सूधि	सुधि	११७	२	आनस	आसन	१६२	७
				नही	नहीं	१६५	१२
मुळ	मूल	११९	१६	व्रड	बड़	१६७	११
ताम्राक्षो	ताम्राक्षो	१२४	२०	की	कि	१६८	१९
अथात्	अर्थात्	१२५	९	सठ	सब	१६९	२१
लक्षमण	लक्ष्मण	१२५	१७	मनि	मुनि	१७३	८
चरणो	चरणों	१३०	११	एकोम	एकोन	१७४	१८
चरणो	चरणों	१३०	११	वाभवा	वानवा	१८०	१८
पातेहै	पातेहैं	१३२	५	जाघवती	जामवन्त	१८२	०१



श्री ५ राय गंगाप्रशाद सिंहवहादुरस्यात्मज बाबू श्रीलक्ष्मीप्रशाद सिंहकृत

पद ।

सोरठ

भजन मे भावै सुखद सदा । भाव विना सब अनरस लागे भावै सरसमुदा ॥१॥ भावैसे जग उपजत बिन सत जिमि उलटत परदा । भक्ति ज्ञान वैराग्य योग सब भाव विना मुरदा ॥२॥ भाव उपाजि भवरोग नसावत मङ्गल सकल अदा । लक्ष ईश वस भाव रहत नित भावै गहत पदा ॥३॥

मन मधुकर हरि चरण कमल भजु । जहँ नहिं निशिशशि बिपति बियोगी भक्ति मरन्द पाइ नित सुख सजु ॥१॥ भाव पराग सुवास सुचिन्तन पुलक प्रफुल्लित मञ्जु मानतजु । लक्ष ईश पद पद्म सरस यश गावत गुंज पुंज कुंजन गजु ॥२॥

श्रीगणेशायनमः



किष्किन्धाकाण्ड प्रारम्भ

मानस तत्व भास्कर ॥

❀ श्लोक ❀

कुन्देन्दी वरसुन्दरावतिवलौ विज्ञान धामाबुभौ ।
शोभाढ्यौवरधन्विनौश्रुतिनुतौ गोविप्रवृंदप्रियौ ॥
मायामानुषरूपिणौ रघुबरौ सद्धर्म वर्मौ हितौ ।
सीतान्वेषणतत्परौपाथिगतौभक्तिप्रदौतौहिनः ॥१॥

टिका—कुन्द कहे गौरवरण के कुन्द नाम फूलसम लक्षमण जी हैं यथा, चौ० गौरकिशोर वेषवरकाछे औ इन्दीवर कहे नील कमल सम रामजी हैं यथा, चौ० श्यामसरोज दामसमसुन्दर, सुंन्दर कहे दोनोभाई मनोहर हैं यथा, चौ० कहहुनाथ सुन्दरदोउ वालक, औ इनहिंविलोकत अतिअनुरागा, वरवसब्रह्मसुखहिमन त्यागा, अतिवलौ

१. सुन्दरंमनोहरंरुचिरं इत्यमरः । सुन्दर मनोहर रुचिर यह अमर ॥

कहे, अत्यन्त वली यथा, चौ० छनमहसवहि हतेभगवाना, दो० लषण लखेउ रघुवंशमणी ताकेउहरकोदण्ड । पुलकिगातबोले वचन चरण चापिब्रह्मण्ड ॥ १ ॥ विज्ञानधामावुभौ, कहे, दोनोभाई विज्ञान के धाम, यथा, कवित्त रामायणे, संगसु वन्धुपुनीतप्रिया मानोधर्म्म क्रियाधरिदेह सुहाई राजिवलोचन रामचलेतजि बापकोराजवटाउ किनाइ, शोभाढ्यौ कहे शोभासे युक्त यथा, शोभासीव सुभगदोउ वीरावरधन्विनो कहे, श्रेष्ट धनुषवान धारणकिये यथा, करशरधनुषवामवरकांधे, श्रुतिनुतौ कहे वेदसेअस्तुति कियेगए यथा, जय सगुणनिर्गुणरूप रूपअनूपभूप सिरोमणे, गोविप्रवृन्दप्रियौ, कहे गौब्राह्मण के प्यार करने वाले यथा, दो० भक्तभूमिभूसुरसुरभि सुरहितलागि कृपाल । करतचरितधरिमनुज तन सुनतमिटहिंजगजाल, मायामानुषरूपिणौ, कहे माया से मनुष्य रूपधरे, यथा, चौ० कृपासिन्धुमानुषतनुधारी, रघुवरौ कहे, रघुकुल में श्रेष्ठ, यथा, चौ० रघुकुलमणिदशरथके जाये, सद्धर्मवर्मौहितौ, कहे, निश्चै करके उत्तमधर्म्म के वखतर यथा, छन्द धर्म्मवर्मनर्म्मदगुणग्रामं, सीतान्वेषणतत्परौ, कहे सीताजी के खोजने में तत्पर यथा, चौ० पुनि सितहिं खोजतदोउभाई, पथिगतौ कहे पथमे प्राप्त यथा, चौ० चलेविलोकत वनबहुताई, भक्तिप्रदौतौहिनः, कहे वेदोनोभाई हमकोभक्ति के देनेवाले हैं यथा, सखासमुझि असपरिहरमोहू सियरघुवीर चरण रतिहोहू औ भक्ति ज्ञान विज्ञान विरागा, योग चरित्र रहस्यविभागा, चौ० जानवतैंसवहींकरभेदा ममप्रशादनहिंसाधनखेदा, इत्यादि अर्थात्, गौरवरण कुन्दके फूलसम लक्ष्मणजी औ श्याम कमल सम रामजी मनोहर अत्यन्त वली विज्ञानके धाम शोभा करके युक्त श्रेष्ट धनुष वान धारन किये वेदसे स्तुति किये गये मायासे मनुष्य रूपधरे रघुकुलमे

२. शोभाकान्तिर्द्युतिश्छविः इत्यमरः शोभा कान्ति द्युति छवि [illegible]

श्रेष्ठ निश्चै करके उत्तम धर्म्म के वख्तर सीताजी के खोजने मे तत्पर मार्ग मे प्राप्त वे दोनो भाई हम को भक्तिदेने वाले हैं भाव फूल के समान कोमल औ सुन्दर कहने से बलविषे शंकानहो इसीसे अति वलौ कहा औ वलवान हो ने से अहंकार होकर ज्ञान नष्ट होताहै इस शंका के निवारण को विज्ञान के धाम कहा विज्ञानी लोग शोभा से युक्त होतेहै इसी से शोभाढ्यौ कहा शोभासे युक्त देष कर वीरता धोखा नहो इसीसे वरधन्विनौ कहा ये सब बात एक साथ मनुष्य में हो ना असम्भव है इसीसे श्रुति नुतौ कहकर ईश्वर ता सूचित किया वेद अस्तव करता है इस महान्ता को पाकरभी गौ ब्राह्मण प्रिये हैं इसी से गो विप्र वृन्दप्रियौ कहा औ उसी के पुष्टता वास्ते माया मानुषरूपिणौ कहा औ रघुवरौ कहने का ये आशय है कि रघुकुल मे हरिश्चन्द्र आदि वहुत से सद्धर्म्म धारण करने वाले हुये पर उन-मे ये श्रेष्ट हैं इसीसे सद्धर्मवर्म्मौ कहा औ सीतान्वेषण तत्परौ कहकर उस को प्रत्यक्ष देषलाया कि पतिव्रता स्त्री का खोजकरना पति का धर्म्म है सो खोज करते हैं पथिगतौ भी उसी आशय को रखता है यदि कोइ कहे तुहें यतना स्तव करने से क्या प्रयोजन है तो ये दोनो भाई हमारे भक्ति के देने वाले हैं प्रश्न किष्किंधा कांड इस का नाम क्यों रक्खा गया उत्तर कीस के किये हुये पूरका चरित्र वर्णन है इसी से किष्किन्धा कांड नाम रक्खा वा कीसको धावनकिया है जिसपुरमे सो कहा वे किष्किन्धा- (शंका) रामजी से पहिले लक्ष्मण जीका विशेषण क्योकिया, समाधान, रामजी से पहिले लक्ष्मण जी के विशेषण देने का यह आशय है कि लक्ष्मण जी जीवों के आ-चार्य हैं विना आचार्य के प्रभुका मिलना दुर्लभ है यथा, चौ० गुरु-विनु भवनिधितरैन कोई, जौविरंचि शंकरसम होई। शंका, वेदोनेतो

राम जी का स्तुति किया इससे लक्षमण जी का स्तुति न निकला समाधान, चौ० अंशनसहित मनुजअवतारा, लेइहों दिनकर वंशउदारा। इस राम जी के आकाश वाणी से औ जयसगुण निर्गुणरूपरूप अनूपभूप शिरोमणे। इस वेद के अस्तव से लक्षमण जी का भी अस्तव सावित होता है।

ब्रह्मांभोधिसमुद्भव कलिमलप्रध्वंसनं चाव्ययं।
श्रीमच्छम्भु मुखेन्दु सुन्दरवरं संशोभितं सर्वदा॥
संसारा मय भेषजं सुखकरं श्रीजानकी जीवनं।
धन्यास्तेकृतिनःपिबन्तिसततंश्रीरामनामामृतम् ॥२॥

टीका ब्रह्माम्भोधिसमुद्भवं कहे वेदरूपसमुद्रसे उत्पन्न यथा छन्द भवखेद छेदनदच्छहमकहँरक्षरामनमामहे, कलिमलप्रध्वंसनं कहे कलि केमलकानाशक यथा, चौ० नामसकलकालिकलुषनिकन्दन, च, पुनः अव्ययं, कहेनाशरहित, यथा, चौ० कहउँनामवड ब्रह्मरामतें, श्रीमच्छम्भुमुखेन्दुसुन्दरवरेसंशोभितंसर्वदा, कहे श्रीमान्‌शिवजीके सुन्दरमुख रूपीचन्द्रमामे सदैव शोभायमान्, यथा, चौ० तुमपुनिराम राम दिन राती सादर जपहुअनंग अराती, संसारामयभेषजं, कहेसंसाररूपीरोग काऔषध यथा, छन्द, संजम जप तप नेम धर्म्म ब्रत वहुभेषजसमुदाई। तुलसिदास भवरोग रामपद प्रेमहीन नहिजाई, इति विनयपत्रिकायां सुखकरं, कहे सुख के करनेवाला- यथा- चौ० जपहिंनाम जनआरतभारी मिटहिंकुशंकट होहिंसुखारी- श्री जानकी जीवनं कहे- श्रीजानकीजी

(१) वेदस्तत्वं तपो ब्रह्म ब्रह्मा विप्रः प्रजापतिरित्यमरः टीका- वेद. तत्व. तप. ब्रह्म. ब्रह्मा विप्रप्रजापति ये अमरहै (२) रामसे नाम वडा है इसीसे अव्यय है।

काजीवनस्वरूप· यथा· दो॰नामपाहरू दिवसानिशि ध्यानतुह्मारकपाट। लोचननिजपदजंत्रिका प्राण जाहिंकेहिवाट· । धन्यास्तेकृतिनःपिवन्ति सततं श्रीरामनामाऽमृतं· कहे· धन्यवह पुण्यात्माहैं जो श्रीराम नाम रूप अमृत सदा पानकरतेहैं· यथा· सकल कामना हीनजे· रामभक्ति रसलीन· नाम प्रेमपियूषहृदतिनहुं कियेमनमीन· अक्षरार्थ· वेद रूप समुद्र से उत्पन्न कलिके मल का नाशक नाशरहित· श्रीमान् शिवजीके मुखरूपी चन्द्रमामें सदैव शोभायमान· संसार रूपीरोग का औषध सुख को करने वाला· श्रीजानकीजीका जीवन स्वरूप ऐसे श्रीरामनाम रूप अमृतको सदापान करने वाले पुण्यात्माधन्यहैं· भाव· श्रीराम नाम रूपी अमृत जो अन्तमे कहाहै यदि इसमे शंका होकि यह अमृत किस समुद्रसे निकला· इसीलिये पूर्वके चरण में वेद रूप समुद्र से उत्पन्न कहा· औ कलिमल प्रध्वंसनं कहने का यह आशय है की कलिकाल के मलके नाश करनेमें रामनाम रूप अमृत ही समर्थहै औ अमृत जैसेचन्द्रमा मे सदा शोभित रहताहै तैसैही यह राम नाम रुपी अमृत श्रीमान् शिवजीके मुखचन्द्रमें सर्वदा शोभित रहताहै· औ संसारामयभेषजं· कहकर समुद्र से निकले हुये अमृत से इसको विशेष ठहराया अर्थात् वह संसारिक जीवन देसक्ताहै किन्तु संसार रूपरोगसे नहीं छोड़ासक्ता· औ श्रीजानकीजीवनं कहकर इस्के गुणका अन्त वतलाया· इसी सववसे श्रीराम नाम रूपी अमृत के सदा पीनेवाले धन्यहैं ॥ २ ॥

सोरठा

मुक्तिजन्म महिजानि, ज्ञान खानि अघ हानिकर।
जहँ बस संभु भवानि, सो कासी सेइय कसन ॥

जो काशी मुक्ति[1] की जन्म भूमि है अर्थात् मुक्ति की उत्पन्न करने वाली है ज्ञान की खानि है पापको नाश करती है जहांशम्भु भवानी बसते हैं ऐसी जानि के सो काशी को क्योंन सेइये अर्थात् अवश्य सेइये ॥ सेइय कहने से सूचित करते हैं कि जन्म भर काशी सेवन करना चाहिये यथा सेइय सहित सनेह देह भरि कामधेनु कलि काशी ॥ इति विनयपत्रिकायां ॥ काशी मुक्ति की जन्म भूमि है सो मुक्ति[2] ज्ञानविना नहीं होती ॥ इससे ज्ञान की खानि कहा ज्ञान[3] पाप के नाश से होता है, इसी से अघहानि कर कहा है काशी में शंभु भवानी को बसव कहते हैं यथा, ॥ जहँवस संभुभवानि ॥ जीव को काशी सेवन करने को कहते हैं, सो काशी से इयकसन ॥ तात्पर्य, काशी महादेव पार्वती का स्थान है वह अपने स्थान में बसते हैं। जीव काशी को इष्ट देव मानकर सेवन करे इस निमित्त सेइय कहा है॥ काशी की बड़ाई करके आगे काशी के स्वामी की बडाई करते हैं ॥ इस सोरटा में वस्तु निर्देशात्मक मंगला चरण है॥

सोरठा।

जरतसकलसुरबृंद, विषमगरलजेहि पानकिय।
तेहिनभजसि मनमंद, कोकृपालु शंकरसरिस ॥

सब सुरन के वृन्द जरते रहे तिनकी रक्षा के निमित्त कठीन विष पानकिया ॥ हे मनमंद तिनको नहीं भजता शंकर के समान कौन कृपालु है जरतसकलसुरवृन्द,कहने से विष की विषमता कही की जिसकी विषमता देवता न सहसके जरनेलगे ॥ विषम गरल को जि-

१ काश्यांमरणान्मुक्तिः। इति श्रुतिः ॥ टीका काशी में मरण से मुक्ति होती है
२ ऋतेज्ञानान्न मुक्तिः इति श्रुतिः टीका ज्ञान विना मुक्ति नहीं होती। ३ ज्ञान मुत्पद्यते पुंसांछ पापस्य कर्मणः। टीका पाप के नाश होने से पुरुष को ज्ञान उत्पन्न होता है ॥

न्होंने पानकिया यह कहने से शिवजी की सामर्थ्य कहा की जिस विष की ज्वाला से तीनलोक जरते रहें तिसको पानकिया ऐसे सामर्थमान हैं ॥ मनमन्द कहने का भाव, ऐसे उपकारी कृपालु शिव को नहीं भजता ॥ तात्पर्य जैसे शिवजी ने सबको विष की अग्नि से बचाया तैसे हे मन भजन करने से तुझको भी विषय की अग्नि से बचावेंगे क्योंकि तू विषय रूपी अग्नि से जर रहा है यथा, मनकरि विषय अनलवन जरई, इत्यादि कृपालु कहने का भाव, सब पर कृपा करके सब के कल्यान के अर्थ विष पानकिया इसीसे शंकर कहा है ॥ सकल और वृन्द पुनरुक्ति है ॥ उत्तर, सकल सुर कहे जितने देवताओं के भेद है तिनके वृन्द अर्थात् वसु वृन्द रुद्र वृन्द आदित्य वृन्द इत्यादि दोनो सोरठों के क्रम का भाव प्रथम सोाठा में काशीवास करने को कहा है, दूसरे सोरठा में शिवजी के भजन करने को कहते हैं ॥ तात्पय, प्रथम काशी में बास करे तब पाप का नाश होय ज्ञान मिले तब शिवजी की सेवा का अधिकारी होय, शिवजी की सेवा से श्रीरामचन्द्रजी की अविरल भक्ति मिले, यथा, शिव सेवाकर फल सुतसोई, अविरल भक्ति रामपद होई ।

आगेचलेबहुरिरघुराया । रिष्यमूकपर्वतनियराया ।

श्रीरघुनाथ जी बहुरि कहे पुनि आगे चले रिष्यमूक पर्वत को नियराते भए सीता जी के खोजने के निमित्त आगे चले परन्तु, यहां सीताजी का खोजना नहीं लिखते क्योंकि प्रथम लिख आए हैं, यथा, ॥ पुनि सीतहिंखोजत द्वौभाई, चलेविलोकत वनवहुताई ॥ बहुरि कहने का भाव रामजी प्रथम चलते रहें पंपासर में स्नान कर के वैठ गए अब फिर आगे चले आरण्य काण्ड में रामजी ने नारद

१ शं कल्याणं करोतीति शंकरः ॥

जी से स्त्री के अनेक दोष वर्णन किये और आप सीताजी को खो जते हैं, इससे यह सुचित करते हैं, कि गृहस्थ को स्त्री संग्रह उचित है, विरक्तको अनुचित है ॥ किष्किन्धा काण्ड के प्रारंभ में रघुराय शब्द कहने का भाव रामजी रघुवंश के राजा हैं नीति के अनुकूल काम करेंगे ॥ सुग्रीव से मैत्री करेंगे सुग्रीव के शत्रु को मारेगें और अपना कार्य करावेंगें ॥ रघुराय शब्द का दूसरा भाव रघुराय शब्द से चलने का प्रसंग छूटा है । यथा, ॥ देखीसुन्दर तरुवर छाय, वैठे अनुज सहित रघुराया ॥ बीच में नारद सम्बाद कहा अब फिर रघु राय शब्द से चलने का प्रसंग कहते हैं, यथा, आगेचले वहुरि रघु राया । रामजी को बीच में अनेक पर्वत् [illegible] किसी का नाम नहीं लिखा यहां ऋष्यमूक पर्वत् का नाम लिखत[illegible] क्योंकि ऋष्यमूक में सुग्रीव से रामजी की मित्रता होगी कार्य्य [illegible] आरंभ होगा ॥

तहँरहसचिवसहितसुग्रीवा। आवतदेखिअ[illegible]लबलसिवा ॥

तिस पर्वत् में मंत्री सहित सुग्रीव रहते हैं उन्हो[illegible] अतुल वलके सींव राम लछिमन को आते देखकर ॥ सचिव [illegible] कहने का भाव राज्य के सात अंग हैं यथा स्वामी १, मंत्री २, [illegible] ३, खजा ना ४, देश ५, किला ६, सेना ७, सुग्रीव के पाच अग नष्ट हो गए दो वचे एक आप एक मंत्री । सात अंग मे मंत्री प्रधान है तिनको संग में रक्खे है ॥ सवरी ने रामजी से कहा कि तुम से और सुग्रीव से मित्रता पंपासर में होगी यथा पंपासरही जाहु रघुराई तहँ ॥ सो मित्रता पंपासर में न भई ऋष्यमूक में

१ श्लोक-स्वाम्यमात्यसुहृत् कोशराष्ट्र दुर्गवलानिच इत्यमर ॥

भई इसं[२] से निश्चय भया कि यहां तक पं
सुग्रीव ने राम लछिमन को अतुल
रूप देख कर अतुल बल के सींव जा
कहहिं हमहिं असमूझे तेज प्रताप रूप जहँ तहँ बल ती जा-
नकी मंगल ग्रंथे । टीका—सुजान राजा कहते हैं कि
समझ पडता है कि जहां तेज प्रताप रूप है तहां है
कि यह पुरुष बलवान है ॥

जुगलबलरू

अत्यन्त डर के बोले कि हे हनुमान सुनो जुगल कहे दोनों पुरुष बलरूप के निधान हैं ॥ अति सभीत कहने का भाव सुग्रीव बालि से सदा सभीत रहतेहैं । प्रमाण यहां साप बस आवत नाहीं तदपि सभीत रहौं मन माहीं ॥ अब इन को अतुल बली देख कर अति सभीत भये ॥ आवत देखि अतुल बलसीवां और पुरुष जुगल बल रूप निधाना । दो वेर बल कहने से पुनरुक्ति भइ उतर सुग्रीव ने राम लछिमन को आप बल के सीव समझा तव हनुमान जी से कहतेहैं कि ये पुरुष बलरूप के निधान हैं इससे पुनरुक्ति नहीं है ॥

धरिबटु रूप देखुतें जाई कहेसु जानि जिय सैंन बुझाइ ॥

बटु कहे ब्राह्मण का रूप धारण करके तुम जाय के देखो और उनके हृदय की बात जान के हमसे सैन से बुझाके कहो । बिप्र रूप

२ श्लोक इतः समीपे रामास्ते पंपानाम सरोवरम् रिष्यमूकगिरिर्नाम तत्समीपे महानगः॥ अर्थ हे राम इसके समीपही पंपानाम सरोवर है तिसके समीप रिष्यमूक गिरिनामका महापर्वत है ॥ इति अध्यात्मे आरण्य काण्डे दशम सर्गे ॥

१ अति सभीत कहने से यह सूचित भया कि सुग्रीव के हृदय में भयानक रसका स्थाईभाव भय बहुत दिनसे है ॥

धारण करके जाव कहने का भाव यह क्षत्रीरूप देख पड़ते हैं धनुषबान धारण किये हैं ॥ क्षत्री ब्राह्मण का भक्त है और ब्राह्मण अवध्य है ॥ देखुतें जाई कहने का भाव हनुमानजी बड़े बुद्धिमान हैं यह काम उन्हीं से बनने लायक है ॥ अनेक ग्रंथों में अनेक प्रकार से सैनबुझाना लिखा है इसीसे सबकामत ग्रहण करने के वास्ते गोशाईंजी ने सैन बुझाने का प्रकार कोई नहीं लिखा ॥

पठए बालि होंहिं मन मैला। भागौं तुरित तजौं यह सैला ॥

मन में मैल कहे पाप है जिसके ऐसा जो वालि है तिसके पठए होंय तौहम तुरित भागैं और यह सैल तजैं ॥ बालि को पापी कहने का भाव उसने सुग्रीव की स्त्री से भोग किया यथा हरि लीन्हेसि सरबसु अरुनारी ॥ तात्पर्य जो ये पापी के पठाए होंगे तो इनके हृदय भी पापी होंगे वार्ता करने से जाने जांयगे। तुरित भागने का भाव इनके नगीच आजाने से हम इनसे नबचेंगे ॥ शंका जो सुग्रीव भागने को कहतेहैं तो यहां से भाग के कहां जाँयगे। उतर सुग्रीव को भागने का वल है कि भागने से बालि हमको न पावेगा जैसे प्रथम नहीं पाता रहा तैसे अबभी न पावेगा बालि दौडने में सुग्रीव को क्यों नही पाता उत्तर सुग्रीव सूर्य के अंश है सूर्य अत्यन्त शीघ्र गामी हैं ॥

१ यदितौ दुष्ट हृदयौ संज्ञां कुरु कराग्रतः ॥ इति अध्यात्मे प्रथम सर्गे ॥
टीका—यदि येदोनो दुष्ट हृदय होंय तो हाथ के अग्रभाग से संज्ञा कहें इशारा करना ॥

१ बालिना प्रेषितौ किंबा मां हन्तुं समुपागतौ ताभ्यां संभाषणं कृत्वा जानीहि हृदयंतयोः ॥ इति अध्यात्मे प्रथम सर्गे ॥
टीका यदि बालि के भेजेहुवे मेरेमारने के लिये उपस्थितहुये हैं तो उनसे वार्ताकरके उन दोनों के अभिप्राय को जानो ॥ यहांभयानक रसका तर्क संचारी भाव है ॥

बिप्ररूपधरिकपितहंगयऊ। माथनायपूछतअसभयऊ॥

ब्राह्मण का रूप धारण करके कपि तहां गए और माथ नाय कर ऐसा पूंछते भए ॥ शंका हनुमानजी ने बिप्ररूप से क्षत्री रूप को प्रणाम क्यों किया उत्तर ईश्वर जान के प्रणाम किया ॥ आगे हनुमानजी के प्रश्नमें रामजी की ईश्वरता प्रगट है। यथा कीतुम तीन देव महं कोऊ नर नारायण की तुम दोऊ। इत्यादि ॥ ब्रह्मा विष्णु महेश नर नारायण अखिलभुवन पति यह सब प्रणाम करने के योग्य हैं इसीसे प्रणाम किया ॥

कोतुम स्यामलगौरसरीरा। छत्रीरुप फिरहुबनवीरा॥

तुम्हारा श्यामल गौर शरीर है तुम कौन हौ छत्री रूप धारण किये बीर बन में फिरते हौ।श्यामल राम हैं गौर लछिमन हैं क्रम से हनुमानजी पूछते हैं छत्री रुप हौ अर्थात् धनुष बान धारण किये हौ बीर हौ इससे निःसंक बन में फिरते हौ ॥ छत्री रूप कहने का भाव तुम छत्री नहीं हौ छत्री का रूप धारण किये कोई देवता हौ सोई बात आगे पूछते हैं ॥ यथा की तुम तीन देव मह कोऊ । नर नारायन की तुम दोऊ। इत्यादि ॥

१ तथेतिबटुरूपेण हनुमान् समुपागतः विनया वनतो भूत्वा रामं नत्वेदमब्रवीत् इति अध्यात्मे प्रथम सर्गे ॥

टीका--जैसा कहतेहौ तैसाही करेंगे ऐसा कहकर हनुमानजी बटुरूपधरके आए और विनय पूर्वक रामजी को नमस्कार कर के यह बोले ॥

१ भूभार हरणार्थाय भक्तानां पालनायच अवतीर्णौ विहपरौच रंतौ क्षत्रिया कृती ॥ इति अध्यात्मे प्रथम सर्गे ॥

टीका--पृथ्वी का भारहरने के वास्ते और भक्तों के पालनार्थ सबसे परे देवता यहां पृथ्वी मैं अवतार लिये हौ छत्रीकारूप धारण करके बिचरते हौ ॥

कठिनभूमिकोमलपद । । कौनहेतुबिचरहुबनस्वामी

स्वामी यह कठिन भूमि है तुम कोमल पद से गमन करते हौ और बनमें किस हेतु से बिचरते हो ॥ कठिन भूमि कहने का भाव तुम कठोर पृथ्वी पर चलने योग्य नहीं हो यथा जौ जगदीस इन्ह हिं बन दीन्हा, कसन सुमन मय मारगकीन्हा, कोमल पद गामी कहने का भाव तुम कोमल पद से चलने के योग्य नहीं हो सवारी पर चलने योग्य हो यथा ये बिचरहिं मग बिनु पद त्राना । रचे बादि बिधि वाहन नाना ॥ बन में बिचरहु कहने का भाव तुम दिव्य स्थान में रहनेके योग्य हो । यथा तरुतर वास इन्हहिं बिधि दिन्हा धवल धाम रचिरश्रम कीन्हा ॥ स्वामी कहने का भाव तुमें कोई चक्रवर्ती राजा हो यथा राज लखन सब अंगतुम्हारे ॥

हि ॥

कोमल मनोहर सुन्दर तुह्मारे अंग हैं तिन अंगन में तुमबन में आतप कहे घाम और पवन का दुख सहते हो किस हेतु से ॥ इहां मनोहर और सुन्दर पुनरुक्ति है उत्तर आप के सुन्दर गात के मन को हरते हैं ऐसा अर्थ करने से पुनरुक्ति नहीं होती ॥ छत्री रूप फिरहु बनबीरा कौन हेतु बिचरहु बनस्वामी सहत दुसह बन आतप बाता इहां बार बार बनमें बिचरना कह के सूचित करते हैं कि

१ उभावैयोग्या वहं मन्ये रक्षितुं पृथ्वीमिमाम् ससागर वनां कृत्स्नां विन्ध्यमेरु विभूषिताम् इति वाल्मीकीये तृतीय सर्गे ॥
टीका--- हमतुम दोनो को सागरवन के सहित विन्ध्य और सुमेरु करके भूषित समस्त पृथ्वी के रक्षाकरने के योग्य जानते हैं ॥ यहां प्रथम विषम अलंकार है क्योंकि अनुरूप घटनानहीं है भूमि कठिन है पदकोमल हैं ॥

१ सुन्दरं रुचिरं चारु मनोग्यंच मनोहरं ॥ इत्यमरः ॥
यहांभी विषम अलंकार है गात कोमल है घामबयारिदुसह है ॥

रामजी को बनमें बिचरते देखके हनुमानजी दुखीभए ऐसेही भरतजी दुखी भए हैं यथा राम लषन सिय बिनु पग पनहीं। करि मुनि बेष फिरहिं बन बनहीं यह दुखदाहदहै नित छाती। भूष नबासर नींद न राती। इसीसे आगे हनुमानजी ने दोनो भाइयों को पीठ पर चढा लिया॥

कीतुमंतीन देवमहँ कोऊ। नरनारायणकी तुमदोऊ॥

की तुम तीन देवताओं में कोइ हौ कीतुम दोनो नर नारायण हौ तीन देव में पूछने का भाव, राम लछिमन को विशेष तेजस्वी देख के विशेष देवताओं में पूछते हैं, कोउ कहने का भाव, दो में तीन का पूंछना अयोग्य है, राम लछुमन दो हैं, ब्रह्मा विष्णु महेश तीन हैं, इससे कोउ पद कहकर दो दो की जोड़ी पूछते हैं, कि तुम ब्रह्मा विष्णु हौ कि शिव विष्णु हौ ऐसा पूछने से श्यामल गौर वरन की भी जोड़ी बनी रही ब्रह्मा गौर हैं विष्णु श्याम हैं शिव गौर हैं, विष्णु श्याम हैं, नारायन श्याम हैं, नर कहे अर्जुन गौर हैं,॥

दोहा।

जग कारन तारन भव। भंजन धरनी भार॥
कीतुमअखिलभुवनपती। लीन्ह मनुज अवतार॥१॥

जगत के कारण कहे जगत के उत्पत्ति करता हौ इसी से जगत की रक्षा के लिये और संसार समुद्र से पार करने के वास्ते पृथ्वी

१ ब्रह्मा विष्णु महेश नर नारायण अखिल भुवन पति इनमें हनुमानजी को कोई निश्चय भया इसी से यहां सन्देहालंकार है॥

(१) श्रुत्वा स्थूलं तथा सूक्ष्मं रूपं भगवतो यतिः स्थूले निर्जित मात्मानं सनैःसूक्ष्मं धिया नयेत्॥ इति भागवते पञ्चमे स्कंधे॥ टीका यती अर्थात भगवत प्राप्त के अर्थ यत्न करने वाला भगवान के स्थूल और सूक्ष्म रूप को सुनकरके स्थूल स्वरूप में चित्त को स्थापन करके धीरे धीरे सूक्ष्म रूप में बुद्धि के द्वारा चित्त को लेजाय॥

के भार नाश करने के निमित्त कि तुम अखिल कहे सम्पूर्ण भुवनों के पति मनुष्य अवतार लिये हो ॥ अखिल भुवन पति कहनें का भाव सब भुवन रावण कर के पीड़ित हैं, मनुज, अवतार लेने का भाव रावण की मृत्यु मनुज के हाथ है, हनुमान जी ने प्रथम दो दो मूर्ति में प्रश्न किये कि तुम ब्रह्मा विष्णु हो या शिव विष्णु हो या नर नारायन हो अब यहां एकही मूर्त्ति में दोमूर्ति का प्रश्न करते हैं, कि तुम अखिल भुवन पति हो दो मूर्ति धांरणं किये हो ॥ ऐसाही प्रश्न जनक जी महाराज का है । यथा, ॥ ब्रह्मजो निगम नेतिकहि गावा । उभय वेषधरि कीसोई आवा ॥ प्रथम तीन देव में प्रश्न किया तब नर नारायन दो में तब अखिल भुवन पति एक में प्रश्न किया तात्पर्य प्रथम स्थूल अनुमान करके पीछे सूक्ष्म अनुमान किया भगवान के रूप समुझने और अनुमान कर नेकी यही रीति है ॥

चौपाई ।

कोसलेश दसरथकें जाए, हमपितु बचन मानिवन आएं ।

कोसलेश कहे अयोध्या के पति दसरथ महाराज के हम पुत्र हैं, पिता बचन मानि के बन में आए हैं, ॥ कोसलेश दशरथके जाए इससे जाति कहा पुर कहा पिता का नाम कहा ऐश्वर्य कहा ॥ हंम पितुबचन मानिबन आए, इस से बन में आने का हेतु कहा ॥

रामनाम लछिमन दोउ भाई । संगनारि सुकुमारि सोहाई ॥

हमारा रामनाम है और इनका नाम लछिमन है हम दोनोंभाई हैं ह

(२) श्लोक युवांत्रैलोक्यकर्तारा वितिभातिमनोममयुवांप्रधानपुरुषौ जगद्धेतूजगन्मयौ । इति अध्यात्मे प्रथमसर्गे ॥ टीका आप दोनो तीनो लोक के कर्ता हौ यह हमारे मनमें भासता है और आप दोनो प्रधान पुरुष जगत के कारण और जगत स्वरूप हौ ॥

मारे संगमें सुन्दर सुकुमारी स्त्रीरही। दशरथ के जाए सेरुपकहाऔर राम नाम से सूचित किये कि हम दाशरथी राम हैं रामनाम लछिमन कहने से नाम बताए भाई और नारी कहके सम्बध कहा कि यह हमारा भाई है वह हमारी स्त्री है ॥ सुकुमारी सोहाइ कहने का भाव वह बन में आनेके योग्य नही रही अत्यन्त सुकुमारी रही हमारी प्रीति से बन में आई ॥

चौपाई।

इहांहरी निशिचर बैदेही, बिप्रफिरहिं हमषोजत तेही।

यहां निशाचर ने बैदेही को हरण किया हे विप्र तिसको हम खोजते फिरते हैं ॥ शंका, पंचवटी में सीता हरण भया रामजी कहते हैं, कि यहां किंष्किन्धा के पास बैदेही हरी गईहै सो कैसे उत्तर, हम पिता के बचन मान के वन में आए यहां बन में निशाचर नें बैदेही को हरण किया जहां सीता हरी गई हैं, वहां से यहां तक बन सब एकही है, इस वास्ते यहां कहा है। बिप्रफिरहिं हम खोजत तेही यह कहके बन में बिचर ने का प्रयोजन कहा ॥

कोसल कहने से धाम कहा दशरथ के जाए से रूप रामनाम लछिमन से नाम कहा। यहां हरी निशिचर बैदेही। बिप्र फिरहिं हम षोजत तेही। इससे लीला कहा नामरूप लीला धाम चारों भक्तोंके इष्ट है क्योंकि ये चारों सचितानन्द के स्वरूप हैं ॥ प्रश्न· को तुम स्यामल गौर सरीरा। छत्रीरूप फिरहु बनबीरा ॥ उत्तर कोसलेश द-

(१) अहं दाशरथी रामसत्वयं मे लक्ष्मणोऽनुजः ॥ इति अध्यात्मे प्रथमसर्गे ॥ टीका हम दाशरथी राम हैं यह लछिमन हमारा भाई है ॥

(१) रामस्य नाम रूपंच लीला धाम परात्परम् एतच्चतुष्टयं नित्यं सच्चिदानन्द विग्रहं। इति नारद पंचरात्रे ॥ टीका रामजी के नाम रूप लीला धाम ये चारों परात्पर अर्थात् सबसे श्रेष्ठ हैं सच्चिदानन्दके स्वरूप हैं ॥

शरथ के जाए। और रामनाम लछिमन दोउ भाई॥ प्रश्न· कठिनभूमि कोमलपदगामी कौन हेतु बिचरहु बन स्वामी॥ उत्तर। हमपितु बचन मानिबन आए प्रश्न मृदुल मनोहर सुन्दर गाता सहत दुसह बन आतप बाता॥ उत्तरयहां हरी निशिचर बैदेही। बिप्र फिरहिं हम षोजत तेही॥ प्रश्नकी तुमतीन देव महंकोऊ नर नारायण की तुम दोऊ की तुम अखिल भुवन पति लिन्हमनुज अवतार इसका उत्तर रामजी ने कुछ नहीं दिया क्योंकि अपने ऐश्वर्य को छिपाते हैं॥

आपन चरित कहाहम गाई। कहहु बिप्र निजकथा बुझाई॥

अपना चरित्र हमने तुमसे गायकर कहा हे बिप्र तुम अपनी कथा हमसे समझाकर कहो अर्थात् हमने जो तुम से कहा है सो वह हमारा चरित है अर्थात् रामायण है यथा कोसलेश दशरथ के जाए यह बालकाण्ड है, हम पितुबचन मानि बनआए यह अयोध्या काण्ड है यहां हरि निशिचर बैदेही यह आरण्य काण्ड है बिप्र फिरहिं हमषोजत तेही यह किस्किन्धाकाण्ड है वर्तमान तक की कथा वर्णन कि ई॥ नरलीला की मर्यादा रखने के लिये हनुमानजी को बिप्र कहा और कथा पूछीं। नहीं तो प्रभुतो सब जान्तेही हैं कि यहकपि है और सुग्रीव का मन्त्री है॥

चौपाई।

प्रभुपहिचानिपरेउगहिचरना, सोसुखउमाजायनहिबरना

प्रभु को पहिचान के चरन गहि के पृथ्वि में पड़े अर्थात् साष्टाङ्ग दण्डवत किई। हे उमा सो सुख बरना नहीं जाता॥ प्रश्न, हनुमान जी ने प्रभु को कैसे पहिचाना, उत्तर, आकाश बानी और रामजी की बानी को एक मिलान समुझ के पहिचाना। यथा, कस्यप

अदिति महातप कीन्हा। तिनकहँ मैं पूरुबबर दीन्हा। तेदशरथ कौशल्या रूपा। कोसलपुरी प्रगटनर भूपा। तिनकेगृह औतरिहौं जाई॥ यह आकाश बाणी है कि कोशल पुरी में हम राजा दशरथ महाराज के यहां अवतार लेंगे सोई राम जी कहते हैं, कि हम कोसलेश दशरथ के पुत्र हैं, नारदबचन सत्यसब करिहौं, यह आकाश वाणी है सो नारद के बचन यह है, कि॥ बंचेहुमोहि जवनिधरि देहा, सोई तनुधरहु सापमम एहा। मम अपकार कीन्हतुम भारी, नारिबिरह तुम होब दुखारी। कपिआकृति तुमकीन्ह हमारी, करिहहिंकीश सहाय तुम्हारी॥ सोई रामजी में देखा कि नृप तन धारण किये हैं। नारि के बिरह से दुखी हैं, और सुग्रीव के यहांआए हैं, अब बानर सहायता करेंगें॥ शिवरूप से हनुमान जी वहां रहे जहांआकाश वाणी भई रही अथवा भगवान ने अपने मुखसे कहके अपने चरित्र जनाए हैं। यथा आपन चरित कहा हम गाई। इसी से उन्हों ने प्रभु को पहिचाना॥ प्रभु के पहिचानने का तीसरा प्रकार यह है कि माया के बस भूले रहे इससे नहीं पहिचाना॥ यथा तव मायावस ां भुलाना। ताते मैं नहिं प्रभु पहिचाना॥ जब प्रभु की बानी सुनने सेमाया निवृत्ति भई तब पहिचाना। जब प्रभु को नहीं पहिचाना तब माथ नायके पूंछा। जब पहिचाना तब चरनो पर पड़े सो सुख नहीं कहाजाता। भाव शिवजी ने हनुमान रूप से उस सुखका अनुभव किया परन्तु कहि नसके क्योंकि वह सुख अकथनीय है सुख न कहिसके आगे सुख की दशा कहते हैं॥

पुलकिततनमुखआवनबचना। देखतरुचिरवेषकैरचना॥

तन पुलकित भया मुखसे बचन नहीं आता सुन्दर बेख की रचना

(१) यहां स्वरभंग रूप सात्विक भाव का उदय है॥

कहें बनाव उसको देखते हैं ॥ सो सुख उमा जाइ नांहें बरना । यह मन की दशा है सुख होना मनकाधर्म है पुलकित तन यह शरीर की दशा है ! आव न बचना यह बचन की दशा है बचन नहीं आता तात्पर्य स्तुति करनेकी इच्छा है सो आगे स्पष्टहै यथा पुनि धीरज-धरि अस्तुति कीन्ही ॥

पुनिधीरजधरिअस्तुतिकीन्ही । हर्षहृदयनिजनाथहिंचीन्ही

पुनि धीरज धरके स्तुति करते भए अपने नाथ को चीन्हके हृदय में हर्ष भया । धीरज धरने का भाव–श्रीराम जी का स्वरूप देख के धीरज छूट गया पुनि धीरज धारण किया । प्रथम लिखआए हैं कि प्रभु के पहिचानने से सुख भया अब लिखते हैं कि नाथ के चीन्हने से हृदय में हर्ष भया तब हर्ष और सुख पुनरुक्ति है उत्तर यहां पुनरुक्ति नहीं है हर्ष[1] शब्द प्रीति का भी वाचक है अपने नाथ को चीन्ह के प्रीति भई ॥

मोर न्याव मैं पूंछा सांई । तुम पूंछहुकस नरकीनाई ॥

हे स्वामी हमने पूंछा तो हमारा पूंछना न्याय है तुम नरकी नाई क्यों पूंछते हो तात्पर्य तुम्हारा पूंछना न्याय नहीं है अपने न्याय का हेतु आगे कहते हैं कि हम माया के बस हैं इसीसे नहीं पहिचाना यथा तव माया बस फिरौं भुलाना । ताते मैं नहि प्रभु पहिचाना राम जीने पूंछा कि हे बिप्र अपनी कथा बुझा के कहो इस पर हनुमान जी कहते हैं कि तुम नरकी नाई क्यों पूंछते हो तुम तो ज्ञान रूप हो तुम में अज्ञानता अन्याय है ॥

तवमाया बसफिरौं भुलाना । ॥

१ श्लोक मुत्प्रीतिः प्रमुदो हर्षः इत्यमरः ॥

तुम्हारी माया के बस से हम भूले फिरते हैं इसी से हम ने प्रभु को नही पंहिचाना । तात्पर्य माया के बस होनेसे ईश्वर की पहिचान नहीं रहती । इस से यह पाया गया कि माया ने भुलादिया माया का दोष है हमारे में कुछ दोष नही है इसी पर आगे अपने में दोष कहते हैं । यक मैं मंद मोह बस कुटिल हृदय अज्ञान ॥ तव माया कहने से माया की प्रबलता कही कि तुह्मारी माया अति प्रबल है यथा अतिसय प्रबल देव तव माया । छूटहि राम करहु जो दाया

दोहा

यक मैं मन्द मोहबस । कुटिल हृदय अज्ञान ।
पुनि प्रभु मोहि बिसारेउ । दीनबंधु भगवान् ॥ २ ॥

एक तो हम मन्द हैं मोहके बस हैं हृदय के कुटिल और अज्ञानहैं पुनि हे प्रभु आपने हम को बिसराय दिया तुम दीनबंधु भगवान हो । तात्पर्य तुम्हारी माया ने हमको बस किया और आपने बिस राय दिया हम अवगुणों के समूह हैं कैसे तुमको पहिचानैं । प्रभु दीनबंधु भगवान कहनेका भाव दीन के कष्ट काटने को प्रभुकहैं समर्थ हौ दीन की दीनता छोड़ाने को भगवान कहें ऐश्वर्य्यवानहौ दीनबंधु से कृपालुता भगवान से लायकपन दोनो कहा । तात्पर्य तुमकृपालुहौ और सबलायक हौ ऐसेहोकर आपने हमको बिसरायदिया

यदपिनाथ बहु अवगुन मोरे। सेवक प्रभुहि परैजनि भोरे

हेनाथ यद्यपि हम में बहुत अवगुण हैं तदपि सेवक प्रभु को भोरेज- नि परै अर्थात् अबहमारे अवगुणों से हम को न भुलाइये बहु अव गुण कहने का भाव प्रथम अपने में चार अवगुणक हे मंद, मोहबस, कुटिल, हृदय, अज्ञान, इस पर कहते हैं कि हममे चारही अवगुण नहीं

हैं बहुत हैं ॥

नाथजीव तव मायामोहा । सो निस्तरै तुम्हारेहि छोहा ॥

हे नाथ जीव तुम्हारी माया में मोहित है, सो माया मोहित जीव तुम्हारेही छोह से तरता है, अन्य उपाय से नहीं ॥ प्रथम माया के वस होना और अपने अवगुणो से ईश्वर का बिसारना दो बातें कही हैं अब दोनो के छूटने के अर्थ प्रार्थना करते हैं । यथा तब माया बस फिरौं भुलाना । इसके वास्ते प्रार्थना किई कि नाथजीव तवमाया मोहा । सो निस्तरै तुम्हारेही छोहा ॥ हम माया मोहित हैं, माया मोहित जीव तुम्हारे ही छोह से निस्तरता है । अब यक मैं मन्द मोह बस । कुटिलहृदय अज्ञान । पुनि प्रभु मोहि बिसारेउ ॥ इसके निमित्त प्रार्थना करते हैं, कि जदपि नाथ बहुअवगुन मोरे । सेवक प्रभुहि परैजनि भोरे ॥ हम में बहुत अवगुण हैं, हमारे अवगुणों से हमको न भुलाइये ॥

[illegible] दोहाई । जानौ नहिंकछु भजन उपाई ॥

[illegible] और हम तुम्हारी दोहाई कर के कहते हैं, कि भजन का उपाय कहे साधन कुछ नहीं जानते हैं, भजन कें साधन यह हैं यथा भगति के साधन कहौं बषानी ॥ कुछ कहने का भाव भजन थोड़ा भी होय तो माया कुछनहीं कर सक्ती । यथा ॥ तेहिबिलोकि माया सकुचाई । करि न सकैकछु निज प्रभुताई । जानौ नहिकछु भजन उपाई ॥ कहने का भाव माया मोहित जीव का तरना दो त-

१ श्लोक दैवी ह्येषागुणमयी मम मया दुरत्यया मामेवजे प्रपद्यंते माया में तां तरंति- ते । इति गीता यां ॥

टीका-- यह जो हमारी दैव माया गुणमई अर्थात् त्रिगुणात्मिका है सो दुरत्ययम्क हैं दुः पारहै जे लोग हमारी ही शरण में प्राप्त होते हैं वहीलोग इसमाया के पारजाते हैं ।

रह से है, एक तुम्हारे छोह से दूसरे भजन से सो हम भजन का उपाय कुछ नहीं जान्ते हैं तुम्हारी ही छोह से निस्तार होगा। माया से तरना कृपासाध्य है, क्रिया साध्य नहीं है ॥

सेवक सुत पति मातु भरोसे। रहैअसोच बनै प्रभु पोसे ॥

सेवक पति के भरोसे सुत माता के भरोसे असोच रहते हैं, तब प्रभु को पोसे कहे पालन करते ही बनता है यह प्रपन्न शरनागत का लक्षण है, इस में दो भेद हैं, एक पुरुषारथ युक्त दूसरा पुरुषारथ हीन सो दोनो का उदाहरण देते हैं। यथा ॥ सेवक सुत पति मात भरोसे ॥ सेवक के समान और जीव हैं, सेवक में कुछ पुरुषारथ है- हम छोटे बालक के समान पुरुषारथ हीन केवल आपही के भरोसे हैं, यही शरणागत रामजी ने नारद जी से कहा है ॥ यथा सुनु मुनितोहि कहौं सह रोसा। भजहिं जे मोहि तजि सकल भरोसा। करौं सदा तिनकै रषवारी। जिमि बालकहि राष महतारी ॥ हनुमानजी ने अपने में अनेक अवगुण कहे हैं, ॥ यथा जदपि नाथ बहु अवगुन मोरे ॥ अब एक गुन कहते हैं, स्वामी का भरोसा इसी गुन से स्वामी प्रसन्न होते हैं, ॥ यथा है तुलसी के एक गुन ऐगुन निधि कहें लोग। भलो भरोसो रावरो राम रीझवे जोग ॥ इती दोहावली ग्रंथे ॥

असकहिपरेउचरनअकुलाई। निजत

ऐसा कह के अकुलाय के निज तन प्रगट करके चरण पर पड़े प्रीति उर में छायगई। हनुमान जी ने आपही अपने रूप को प्रगट

१ भिक्षुरूपं परित्यज्य वानरंरूप मास्थितः ॥ इति बाल्मीकीये चतुर्थ सर्गे ॥

टीका ब्राम्हण का रूपत्याग के बानर रूप धारण किया।

किया है, बचन से स्तुति कि तन से चरन पर पड़े मन से प्रीति कि । तात्पर्य तन मन बचन से शरण भए ॥

तबरघुपतिउठायउरलावा। निजलोचनजलसींचिजुड़ावा॥

तब रघुनाथ जी ने उठाय के हृदय में लगालिया और अपने नेत्रों के जल से सींच के सीतल किया ॥ तब कहने का भाव जब मन बचन कर्म से शरण भए तब रघुनाथ जी नें उर में लगालिया दूसरा भाव प्रथम जब हनुमान जी चरन में पड़े तब राम जी ने उनको हृदय में नहीं लगाय। जब बिप्रतन छोड़ कर निज तन प्रगट किया तब हृदय में लगाया क्योंकि राम जी को कपट नहीं भाता। यथा निर्मल मन जन सो मोहि पावा । मोहि कपट छल छिद्र न भावा । हनुमान जी बानर हैं, ब्राह्मण का रूप धारण किये हैं, यही कपट है। निज लोचन जल सींच जुड़ावा, कहने का भाव हनुमान जी के हृदय में प्रभु के बिसरावने की ताप रही जब राम जी के नेत्रों से जल चला तब हनुमान जी शीतल होगए कि मेरेपर राम जी का प्रेम है, ॥

सुनुकपिजियमानसिजनिऊना। तैंममप्रियलछिमनतेंदूना

हे कपि सुनो जियमें अपने को ऊन कहें कम नमानो तुम हमको लछिमन से दूने प्रिय हो ॥ यहां ऊन मानना यह है कि अपने में अनेक दोषकहे और प्रभुका बिसारना कहा। यथा एक मैं मन्दमोह वस कुटिल हृदय अज्ञान पुनिप्रभु मोहि बिसारेउ दीन बन्धु भगबान ॥ रामजी हनुमान जी को लछिमन जी से दूना प्रियकहते हैं ऐसेही लोगमें लोगन के कहने की रीते है कि जो अत्यन्त प्रिय है तिसके समान अथवा तिससे अधिक प्रिय कहते हैं ॥ यथा तुम

प्रिय मोहि भरतजिमि भाई, भरतहुते मोहि अधिक पियारे इत्यादि॥ अथवा लछिमन जी से भाई का नाता है, हनुमान जी से दास का नाता है, राम जी को दास सब से अधिक प्रिय है॥ यथा अनुज राज संपति बैदेही, देह गेह परिवार सनेही। सब ममप्रिय नहिं तुमहिं समाना। मृषा न कहहुं मोरयह बाना॥

समदरसीमोहिंकहसब कोऊ। सेवकप्रियअनन्यगतिसोऊ॥

सबकोई हम को सम दरसी कहते हैं, हमको सेवक प्रिय है सोऊ सेवक अनन्य गति है, अर्थात् उस को मेरी सरन छोड़ कर दूसरी सरन नहीं है। सब कोई हमको सम दरसी कहते हैं। तात्पर्य हम सेवक के निमित्त विषम दरसी होते हैं, इस बात को कोई कोई जानते हैं, यथा॥ जद्यपि समनहिं राग नरोषु। गहहिं न पाप पुन्य गुनदोषु॥ तदपि करहिं समबिषम बिहारा। भक्त अभक्त हृदय अनुसारा॥ इति अयोध्या काण्डे॥ हमको सेवक प्रिय है, हम सेवक को प्रिय हैं, आगे अनन्य गति का लक्षण कहते हैं॥

दोहा।

सो अनन्य जाके असि। मतिन टरै हनुमंत॥
मैं सेवक सचराचर। रूप स्वामि भगवंत॥ ३॥

हे हनुमंत जिस की ऐसी बुद्धि न टरै अर्थात् दृढ़ रहै कि हम सेवक हैं, और सचर कहे चैतन्य अचर कहे जड़ सब स्वामी भग-

१ श्लोक समोहं सर्व भूतेषु नमेद्वेष्योऽस्ति न प्रियः जेभजन्ति तुमाम् भक्त्या मयिते तेषु चाप्यहं। इति गीतायां॥

टीका हमसब प्राणियों के विषय समहैं अर्थात् सभ परबराबर दृष्टिरखते हैं न हमारा कोई वैरी है न प्रिय है जो हमको भक्ति करके भजते हैं उनके चित्त में हम रहते हैं और हमारे चित्त में वे रहते हैं॥

वंत का रूप है। तात्पर्य चराचर को अपने स्वामी का रूप देखते हैं। स्वामी कहने का भाव अद्वैत भाव से न देखै स्वामी भाव से अर्थात् द्वैत बुद्धि से देखै अथवा स्वामी कहने से सब देव की उपासना रही कि जो जिसका उपासक है, वह अपने स्वामी का रूप चराचर में देखै भगवंत कहने का भाव सब में षडैश्वर्य सम्पन्न रूप देखै विषम दृष्टि न होने पावे ॥ यहां राम जी हनुमान जी का नाम लेते हैं ॥ यथा सो अनन्य जाके असि। मतिन टरै हनुमंत ॥ इससे यह सूचित भया कि हनुमान जी ने राम जी सेअपना नाम बतायाँ[2] है, अथवा ईश्वर सर्वज्ञ हैं, ईश्वरता से जानते भए। इस प्रकरण में ऐस्वर्य है, माधुर्य नहीं है, प्रथम हनुमान जी बोले कि जानहुं नहिंकछु भजन उपाई, सो राम जी ने यहां भजन का उपाय बताया है ॥

देखि पवनसुत पति अनुकूला। हृदयहर्ष बीती सब सूला ॥

पवनसुत पति को अनुकूल देख के हृदय में सुखी भए और उन की सब शूल नाश भई। देखि कहने का भाव प्रथम हनुमान जी माने रहे कि मेरे ऊपर पति अनुकूल नहीं हैं, उन्होने मुझको बिसराय दिया है सो अब पति की अनुकूलता आँखों से देखते हैं, कि उन्होने हृदय में लगाया नेत्रों के जल से सींच के ठंढा किया

१ श्लोक खं वायुमग्निं सलिलं महींच ज्योतींषि सत्वानि दिशो द्रुमादीन् सरित समुद्रांश्च हरेः शरीरं यत किंच भूतं प्रणमे दनन्यः ॥ इति भागवते एकादश स्कंधे ॥
टीका आकाश वायु अग्नि जल पृथ्वी सूर्य्य जीव दिशा वृक्ष नदी और समुद्र और जो कुछ है हरिका शरीर है ऐसामान के भगवान में अनन्य होके प्रणाम करे ॥

२ श्लोक अहं सुग्रीव सचिवो वायुपुत्रो महामते हनूमान् नाम विख्यातो ह्यंजनी गर्भ संभवः ॥ इति अध्यात्मे प्रथम सर्गे।
टीका हे महामते मैं सुग्रीव का मन्त्री हूं पवन का पुत्र अंजनी के गर्भ से उत्पन्न हनुमान नाम से विदित हूं ॥

लछिमन से दूना प्रिय कहा भजन का उपदेश किया ॥ सब शूल जो प्रथम कह आए हैं, किं मैं माया के वस भया और प्रभु को नहीं पहिचाना प्रभु ने मुझको बिसराय दिया यही तीन शूलहैं सो सब बीती कहे नाश को प्राप्त भई और प्रभु की अनुकूलता से त्रिबिधि भवशूल नाश भई । यथा, तुम कृपालु जापर अनुकूला ताहि नव्याप त्रिविधि भव शूला ॥ जन्म, जरा, मरन, येहि त्रिविधि शूल हैं ॥ हनुमानजी प्रथम आप कृतार्थ भए पीछे सुग्रीव की भलाई की प्रार्थना की यथा, नाथ सैल पर कपिपति रहई इत्यादि ॥ आगे चले बहुरि रघुराया, इहांसे अरु, देषि पवनसुत पति अनुकूला हृदय हर्ष बीती सब सूला इहांतक मारुति मिलन प्रसंगहै ॥

नाथसैलपर कपि पति रहई । सोसुग्रीवदास तव अहई

हेनाथ इस सयल पर कपियोंके पति सुग्रीव रहते हैं सो सुग्रीव आपके दास हैं ॥ शंका बालि कपि पति है सुग्रीव को कपिपति कैसे कहा समाधान सब मंत्री सुग्रीव को राज दे चुके हैं यथा मंत्रिन पुर देषा बिनुसाई दीन्हेउं मोहिं राज बरियाई । इससे सुग्रीव को कपि पति कहाहै ॥ कपिपति कहने से नाम जानने की इच्छा रही कि कौन कपि पति है इस से सुग्रीव कहा जो केवल सुग्रीव कहते तो सुग्रीव नाम के अनेक पुरुष हैं इसमें संदेह रहता कि कौन सुग्रीव है इससे कपि पति कहा । कपि पति हैं और सैल पर रहते हैं इससे सूचित किया कि सुग्रीव दुखी हैं, बन का दुख समुझ के राम जी ने भी बन में बसने का कारण सुग्रीव से पूंछा है ॥ यथा, कारणकवन वस हुबन । मोहिंकहहु सुग्रीव ॥ शंका, सुग्रीव से और राम जी से अभी तक भेंट नहीं भई है तब सुग्रीव राम जी के दास कैसे भये । समा-

धान। सुग्रीव ईश्वर के भक्त हैं, अथवा ब्रह्मा का वचन है कि॥ बानर तनुधरि धरनिमहँ। हरिपद सेवहुजाय॥ इस वचन को मानके वह आपका स्मरण करते हैं, और दर्शन की राह देखते हैं॥ यथा, हरि मारग चितवहिं रणधीरा। इस प्रकार से सुग्रीव राम जी के दास हैं॥

तेहि सन नाथ मयत्री कीजै। दीन जानि तेहि अभय करीजै

हे नाथ तिनसे मैत्री कीजिये दीन जानिके तिनको अभय करिये प्रथम हनुमान जीने कहा कि सुग्रीव कपि पति हैं और तुम्हारे दास हैं अब दोनो वचन को क्रम से घटाते हैं कि सुग्रीव कपि पति हैं तिनसे मैत्री कीजिये राजा से राजा को मैत्री करना योग्य है। यथा, प्रीति बिरोध समान सन करिये नीति असि आहि। सुग्रीव दीन हैं आप दीनबंधु हैं सुग्रीव शत्रु के भय से पीड़ित हैं आप दासों के अभय दाता हैं दीन कहने का भाव जिसमें सुग्रीव की दीनता सुनकर जल्दी कृपा करें। दीन जानि तेहिं अभय करीजै कहने का भाव सुग्रीव के शत्रु को मारके उनको अभय करिये और उनकी दीनता छोड़ाइये अर्थात् राज दीजिये॥

सोसीताकरखोज कराइहि। जहँतहँ मरकटकोटिपठाइहि

सो सुग्रीव सीता की खोज करावेंगे और जहां तहां अर्थात् चारों दिशाओं में कोटि कहें अनन्त बानर पठावैं गे। अब दूसरा बचन घटाते हैं कि सुग्रीव आप के दास हैं और दास का धर्म है कि सेवकाई करे इसीसे कहते हैं सो सीताकर षोज कराइहि सीता की खोज कराना सेवकाई है यथा, सब प्रकार करिहौं सेवकाई, जेहि बिधि मिली जानकी आई, तेहि अभय करीजै और सो सीता कर षोज कराई, यह कहने से सूचित करते हैं कि जब आप सुग्रीव को

शत्रु रहित राजा करैंगे तब वह आपके कार्य करने लायक होंगे

यहि विधि से सब कथा समझा के दोनो जनो को पीठपर चढ़ा लिया राम जी का प्रश्न है ॥ कि विप्रकहौ निजकथा बुझाई ॥ उसका उत्तर हनुमान जी ने यहां दिया ॥ यथा, यहिविधि सकल कथा समुझाई ॥ यहि बिधि अर्थात् जैसा पूर्व में कहआए ॥ नाथसैलपर कपिपति रहई, इत्यादि ॥ समझा कर कहने का भाव । व्यवहार सफा चाहिये सुग्रीव से और राम जी से मैत्री करानी है जिस में पीछे कोई तर्क न उठे इसीसे सब वात समझाकर कही है और राम जी की आज्ञा है, कि हे बिप्र अपनी कथा समझा के कहो इसीसे उन्हों ने समझा के कहा ॥ पीठपर चढ़ा ने का भाव । हनुमान जी ने जब राम जी को पांव से चलते देखा तब दुखी भए इसीसे उनको पीठपर चढ़ा लिया कि आप पैदल चलने के योग्य नहीं हैं ॥

जबसुग्रीव रामकहँदेषा । अतिसयजन्मधन्यकरिलेषा ॥

जब सुग्रीव ने राम जी को देखा तब अपने जन्म को अत्यंत धन्य कर के लेखा अर्थात् माना । देखा कहने का भाव सुग्रीव ने राम जी के दर्शनहीं से अपने को धन्य माना कोई प्रयोजन समुझ के नहीं कि यह बलवान हैं, हमारें शत्रुको मार के हम को राज्य देंगें ॥ अतिसय कहने का भाव राम जी के दर्शन से अतिसय पुण्य है, अतिसय पुण्य से जन्मभी अतिसय धन्य भया ॥

सादरमिल्योनायपदमाथा । भेट्योअनुजसहितरघुनाथा ॥

(१) श्लोक पृष्ठ मारोप्य तौवीरौ जगाम कपि कुंजरः ॥ इति वाल्मीकी ये चतुर्थ सर्गे ॥
टीका दोनोवीरो को पीठ पर चढाय के वानरों मे श्रेष्ठ हनुमान जाते भए ॥

चरण में माथ नाय के आदर सहित सुग्रीव राम जी से मिले और रघुनाथ जी ने लछिमन सहित सुग्रीव से भेंट की। हनुमान जी ने राम जी से कहा कि सुग्रीव आपके दास हैं, इसीसे सुग्रीव माथ नाय के दास भाव से मिले औ राम जी से कहा कि तेहि सन नाथ मैत्री कीजै इसीसे लछिमन समेत रघुनाथ जी सुग्रीव से मित्र भाव से मिले ॥

कपिकरमनविचारयेहिरीती।करिहहिंविधिमोसनयेप्रीती॥

सुग्रीव मन में इस रीति से विचार करते हैं, कि हे विधि ये हम से प्रीति करेंगे अर्थात् हम इन से प्रीति करनेके योग्य नहीं हैं, दीन हैं। हनुमान जी के कहने से राम जी के हृदय में सुग्रीव से प्रीति करने की इच्छा भई अब राम जी से प्रीति करने की इच्छा सुग्रीव के हृदय में भई सो लिखते हैं॥ कपिकरमन बिचार यहरीती। करिहहिं विधि मोसन ये प्रीती॥ तात्पर्य एकही की इच्छा से प्रीति नहीं होती इसीसे दोनो ओर की इच्छा वर्णन करते हैं॥

दोहा

तब हनुमंतउभयदिसि। कह सब कथा सुनाइ।
पावक साषी देइ करि। जोरी प्रीति दृढ़ाइ॥ ४॥

तब हनुमानजी ने दोनो ओर की सब कथा सुनायकर कहा और अग्नि को साक्षी देकर दृढ़ करके प्रीति जोड़दी। तब कहने का भाव जब दोनो के हृदय में प्रीति करने की इच्छा भई तब दोनो तरफ़ की कथा सुनाई। दोनो तरफकी कथा सुनाने का भाव दोनो जने सबबातें समुझ कर मित्र ता करें जिस में बीच न पड़े। अग्नि को साक्षी देने का भाव अग्नि धर्म का अधिष्ठान है जोबीच रक्खे-

गा उसके धर्म का नाश होगा ॥ हनुमानजी ने इस तरह से अग्नि को साक्षी दिया कि दोनों के बीच में अग्नि जलाय दिया और दोनो से भेंट कराई । दृढ़करके प्रीति जोड़नेका भाव । दोनो ओर की कथा सुनाने से व्यवहार की सफाई भई अब कोई प्रकार से तर्क नउठैगा और अग्नि के साक्षी देने से प्रीति दृढ़ करके जुड़ी की जो हम वीच रक्खेंगे तो अग्नि देवता हमारे धर्म को नाश करेंगे ॥

कीन्हिप्रीतिकछुबीचनराषा लछिमनरामचरितसबभाष॥

रामजी और सुग्रीव दोनो ने प्रीति कि कुछ बीच अर्थात् अन्तर नरक्खा । तब लछिमनजी ने रामजी के सब चारित्र सुग्रीव से वर्णन किये । बीच, न राखा कहने का भाव बीच के रखने से प्रीति का नाश होता है । लछिमनजी ने सब रामचरित्र आदि से वर्णन किए। राम चरित्र कहने का भाव । जिस में रामजी का पुरुषार्थ सुनकर सुग्रीव रामजी को सामान्य न समुझें सामान्य समुझने से प्रीति घटजाती है मित्र धर्म की हानि होती है ॥ सब चरित्र कहने का भाव हनुमानजी ने दोनो ओर की कथा संक्षेप से कही है कि रामजी की स्त्री का हरण भया तुम खोज कराओ और तुम्हारी स्त्री का हरण भया रामजी तुह्मारे शत्रु को मार के तुम को सुखी करेंगे । आप दोनो परस्पर मित्रता करो । हनुमानजी ने इतनाही कहा। राम

---

(१) श्लोक ततोहनूमान प्रज्वाल्य तयोरग्निं समीपतः । तावुभौ रामसुग्रीवा वह्नौसाक्षिणि तिष्ठति ॥ बाहूप्रसार्य चालिंग्य परस्पर मकल्मषौ ॥ इति अध्यात्म रामायणे प्रथमसर्गे ॥ टीका तब हनुमान जी दोनो के समीप अग्नि धार दिया दोनो राम और सुग्रीव अग्नि को साक्षी करके बाहु पसार के एक एक को भेंटे दोनो पाप रहित हैं ॥

(१) श्लोक लक्ष्मण स्त्वब्रवीत्सर्वं राम वृत्तांतमा दितः बनवासाभि गमनं सीता हरण मेवच । इति अध्यामे प्रथम सर्गे ॥ टीका लछिमन जी ने आदि से राम जी का सब वृत्तान्त कहा बनवास करने के वास्ते आना और सीता जी का हरण आदि ॥

जी का जन्म कर्म प्रताप नहीं कहा। लछिमनजी ने सब रामचरित्र कहा। लछिमनजी के कहने का भाव रामजी अपने मुख से अपना प्रताप पुरुषार्थ नहीं कह सक्ते। अथवा सुग्रीव की कथा हनुमानजी ने कही। और रामजी का चरित्र लछिमनजी ने कहा। प्रीति होने के पीछे राम चरित्र कहने का भाव नीति का मत है कि जब निः कपट प्रीति हो जाय तब अपनी गुप्त बात कहे ॥

कहसुग्रीवनयनभरिबारी। मिलिहिनाथमिथिलेसकुमारी॥

नेत्रों में जल भरके सुग्रीव ने कहा कि हे नाथ मिथिलेस कुमारि मिलिहि कहें मिलैंगी क्यों कि उन्हों ने हम को देख के अपनी निसानी डार दी है और आपभी हम को मिले इससे निश्चय होता है कि जानकी जी अवश्य मिलैंगी ॥ नयन में जल भर कर कहने का भाव सुग्रीव मित्र के दुख से दुखी भय हैं यथा ॥ जेन मित्र दुख होंय दुखारी। तिन्हहि बिलोकत पातक भारी ॥ मिथिलेस कुमारी कहने का भाव। जनक जी के संबंध से जानकी जीकी शुद्धता दिखाते हैं कि सीता जी की प्रीति आपही से है अन्य से नहीं ॥ प्रश्न सुग्रीव ने मिथिलेस कुमारी कैसे जाना। उत्तर लछिमन जी ने सब रामचरित्र कहा उसी में मिथिलेस कुमारी का नाम आया इसी से जाना ॥

मंत्रिन सहितयहां यक बारा। बैठरहेउँ मैंकरतबिचारा॥

यहां हम एक समय में मंत्रियों के सहित बैठे बिचार करते रहे

(२) श्लोक ददाति प्रति गृहणाति गुह्य माख्याति पृच्छति भुंक्ते भोजयते चैव षड्विधं प्रीति लक्षणं। इति भर्तृहर शतके ॥ टीका दे और ले अपनी गुप्तबात कहै उसकी पूंछे आप मित्र के यहां भोजन करै मित्र को अपने यहां भोजन करावै मित्रता के छः प्रकार के चिन्ह है ॥

यहां कहने से देश कहा कि इसी स्थान में हमने देखा है नहीं तो रामजी पूंछते कि तुमने सीताजी को कहां देखा है। देश कह के अब काल कहते हैं परन्तु कालका नियम नहीं करते एकबार कहते हैं तात्पर्य काल का स्मरण हमको नहीं है। काल कहकर अब वस्तु कहते हैं कि हमको देखके उन्हों ने अपना वस्त्र डार दिया वस्त्र वस्तु है यहां देशकाल वस्तु तीनो कहे॥

गगनपंथ देखी मैं जाता। परबस परीबहुत बिलपाता॥

हमने आकाश मार्ग से जाते देखा है पर[1] कहे अन्य के बस में पड़ी अथवा पर कहें शत्रु[2] के वसमे पड़ी बहुत बिलाप करती रही रावण जानकी जी को गोद में बैठारे रहा सो बात गुशाईं जी भक्ति पक्ष से स्पष्ट नहीं लिखते ढांप के लिखते हैं कि जानकी जी पराय वश में पड़ी रहीं। बहुत प्रकार का बिलाप करना आरण्य काण्ड में लिख आए हैं यथा, हा जगदेक बीर रघुराया इत्यादि॥

राम रामहा राम पुकारी। हमहिदेखिदीन्हेउपटडारी॥

राम राम हा राम पुकार के हमको देख के अपना वस्त्र डार दिया॥ राम राम कहके पट डारने का भाव। जिस में बानर लोग जानैं कि राम जीकी स्त्री हैं। राम जी से हमारा हाल कहैं और उनको हमारा वस्त्र दें॥ इसीसे पति का नाम लिया नहीं तो

---

(१) श्लोक क्रोशंती राम रामेति लक्ष्मणेतिच विश्वरम् स्फुरंती रावणस्यांके पन्नगेन्द्र बधूर्यथा। इति वाल्मीकीये षष्ट सर्गे॥ टीका राम राम ऐसा चिल्लाती हुई और विकृत स्वर से लक्ष्मण लक्ष्मण कहती हुई सीता रावण के गोद में जैसे नागेन्द्र के गोद में नवीन बहू रहै वैसी दीख पड़ी॥

(२) परोदूरान्यवाचीस्यात् परोऽरि परमात्मनोः इति वैजयंती कोशे टीका परशब्दके चार अर्थ हैं दुर १ अन्य २ शत्रु ३ परमात्मा ४

पति का नाम न लेना चाहिए। पुकार के कहने का भाव विमान बहुत ऊंचे से जाता रहा इसी से सीता जी ने पुकार के कहा जिस में बानर लोग सुनें ॥

माँगारामतुरिततेहिदीन्हा। पटउरलायसोचअतिकीन्हा॥

राम जी ने वस्त्र मांगा सुग्रीव ने तुरंत दिया तब राम जी ने वस्त्र को हृदय में लगाके अत्यन्त सोच किया। तुरित शब्द देहरी दीपक है--देहरी का दीपक घर के भीतर और बाहर प्रकाश करता है ऐसे ही तुरित शब्द दोनो जगह अपने अर्थ का प्रकाश करता है राम जी ने तुरित मांगा सुग्रीव ने तुरित दिया यह अभिप्राय वाल्मीकि के छठे सर्ग में लिखा है। अति सोच करने का भाव। सोच तो प्रथम करते ही रहे चिन्हें पाने पर अधिक सोच किया अर्थात् रुदन करने लगे॥

कहसुग्रीव सुनहु रघुबीरा। तजहुसोचमन आनहु धीरा॥

सुग्रीव ने कहा कि हे रघुबीर सुनो सोच को त्याग करो मन

(१) श्लोक तमब्रवीत्ततो रामः सुग्रीवं प्रिय वादिनं आनयस्व सखे शीघ्रं किमर्थं प्रविलंबसे॥ टीका तिस प्रिय वादीसुग्रीव से राम जी बोले कि हेसखे जल्दी लेआवो किसवास्ते विलम्ब करतेहौ॥

(२) श्लोक एव मुक्तस्तु सुग्रीवः शैलस्य गहनां गुहां प्रवीवेसततः शीघ्रं राघव प्रिय काम्यया॥ टीका राम जी ने सुग्रीव से जब एसा कहा तब सुग्रीव ने पर्वत के सघन गुहामे राम जी के हित की इच्छा से शीघ्रही प्रवेश किया

(३) विमुच्य रामस्त द्रिष्टवा हा सीतेति मुहुर्मुहुः हृदि निक्षिप्य तत्सर्वं हरोद प्राकृतो यथा॥ इति अध्यात्मे प्रथम सर्गे॥ टीका सुग्रीव की दिईहुई गठरी को खोल कर रामचंद्र जी ने देखा और उनको हृदय में लगा कर बारंबार हा सीता हा सीता ऐसा कहकर संसारी मनुष्य के समान रोपे यहां विप्र लंभका उद्दीपन है यथा सुधि आवत जिमके लषे से उद्दीप बषान॥

।र कह

।र अधीर होतेहैं साचनहीं करत और अ-
धीर नहींहोते सोच के रहनेसे धीरज नहीं आता इसीसे प्रथम सोच त्यागने को कहा ।रज लाने को कहा ॥

सबप्रकारकरिहौंसेवकाई।जेहिबिधिमिलिहिजानकीआई

हम सबप्रकार से आपकी सेवकाई करेंगे जिस प्रकार से जानकी जी आय के आपको मिलेंगी ॥ सब प्रकार की सेवकाई अर्थात् सीता जी की खोज लगाना खोज मिलने पर शत्रु से लड़ना और लेआना इत्यादि । सेवकाई कहने का भाव सुग्रीव दास हैं इसीसे सेवकाई करने को कहते हैं सहायता करने को नहीं कहते ॥ आई कहने का भाव हमें आपके शत्रु को मार के सीताजी को आपके पास लादेंगे ॥ सुग्रीव ने अपना दुख बिसराय के रामजी को धीरज दिया और सेवकाई करने को कहा ऐसाही रघुनाथजी अपना दुख बिसराय के सुग्रीव के दुख का कारण आगे पूछते हैं ॥

दोहा।

सषा बचन सुनि हर्षे । कृपासिंधुबलसींव ॥
कारणकवनबसहुबन । मोहिंकहहुसुग्रीव ॥५॥

कृपा के सिन्धु बल के सींव राम जी सखा के बचन सुन के प्रसन्न भए और बोले कि हे सुग्रीव तुम किस कारण से बन में बसते हौ सो हमसे कहो । सखा के बचन सुन के हर्ष होने का भाव जैसा कुछ सखा का धर्म है तैसाही सुग्रीवने कहा है रामजी कृपा

(१) श्लोक सुग्रीवो प्याह हे राम प्रतिज्ञां करवाणिते, समरे रावणं हत्वा तवदास्यामि जानकीम् । इति अध्यात्मे प्रथम सर्गे ॥ टीका सुग्रीव भी बोले कि हे राम तुह्मारे अर्थ हम प्रतिज्ञा करतेहै कि समर में रावण को मारके तुमको जानकी देगें ॥

सिंधु हैं सुग्रीव पर बड़ी कृपा की । बल सींव हैं सुग्रीव के शत्रु को मारेंगे । सुग्रीव के बनमें बसने का कारण हनुमानजी रामजी से कहचुके हैं यथा, याहिविधि सकल कथा समुझाई । अब रामजी सुग्रीव के मुख से कहलाते हैं कि जब सुग्रीव बालिका अपराध अपने मुख से कहैं तब हम बालि को दण्ड दें यह नीति का मत है ॥

चौपाई ।

[illegible] । प्रीतिरहीकछुबरनिनजाई ॥

हे नाथ बालि और मैं दोनो भाई हैं दोनो की ऐसी प्रीति रही कि वर्णन नहीं की जाती । प्रीति रही कहने का भाव अब प्रीतिनहीं है प्रथम बालि का नाम कह के सूचित किया । कि बालि हमारा जेठा भाई है

मय [illegible] । आवा सो प्रभु हमरे गाऊं ॥

मय दानव का पुत्र जिसका नाम मायावीरहा हे प्रभु सो हमारे गांव में आया । मायावी तेहि नाऊं कहनेका भाव माया करके युक्त होय सो कहा वे मायावी तव नाम जानने की इच्छा रही कि उस का क्या नामरहा इस पर कहते हैं कि मायावी उसकानाम हीरहा ॥

अर्ध राति पुर द्वार पुकारा । बाली रिपु बल सहै नपारा ॥

आधी रात के समय में पुर के द्वार पर आकर उस ने पुकार किया बालि रिपु के बलको सहै न पारा अर्थात् न सहसका । पारा शब्द का अर्थ सका है यथा सोक बिकल कछु कहैन पारा । इत्यादि । रात्रि के समय में आने का भाव रात्रि में राक्षसों का बल अधिक होजाता है तिस पर आधी रात तरुण है अर्थात् पूर्णबल पाकर आया पुर के द्वारपर पुकारने का भाव, पुर के भीतर भयसे न पैठ सका पुरके द्वारपर खड़ा होगया । कि पुर के द्वार से जो कोई निकलेगा उसको मैं मारूंगा ॥

देखि सो भागा। मैं पुनि गयों बंधु संग लागा।

बालि दौंडा उस को देख के राक्षस भागा और हमभी सहायता के लिए भाई के संग में लगे चले गये। धावा बालि कहने का भाव राजा को बिचार के शत्रु के पास जाना चाहिये। बालिबिना बिचारे आधीरात के समय अकेले शत्रु के पीछे दौड़ा तिसका हेतु लिखते हैं कि बालि शत्रु के बल को नहींसह सक्ता महा अभिमानी है इसीसे उस ने बिचार न किया। देखि सो भागा कहनेका भाव बालि के देखनेसे शत्रु के लड़नेका उत्साह नहीं रहता। मैं पुनि यह चित्रकूट देश की बोली है दोनो शब्द मिलकर एकही अर्थ का बोध करता है अर्थात् मैं पुनि का अर्थ मैं है यथा मैं पुनि पितु प्रमाण करिबानी। पुनः मैं पुनिपुत्र बधूप्रिय पाई इत्यादि। बंधुसंग लागा कहनेका भाव बालि ने हमको साथ चलने को नहीकहा हम भाई की प्रीति से संग में गये॥ सुग्रीव भाई के संग में लगेचलगये यह सुग्रीव की प्रीति है। बालिगुफा में आप पैठा सुग्रीव को न पैठने दिया यह बालिकी प्रीति है जो प्रथम कहा कि प्रीति रहीकछु बरनि न जाई सो प्रीति यहां देख पडी॥

गिरिवर गुहा पैठ सो जाई। तब बाली मोहि कहा बुझाई।

पर्वत् की श्रेष्ठ गुफा में वह जाकर पैठा तब बालि ने हमको बुझाय करकहा। बरशब्द देहरी दीपक है गिरिश्रेष्ठ है गुहाश्रेष्ठ है। तात्पर्य दोनो भारी है राक्षस गिरी के गुहा में यह जानके पैठा कि बालि भयानक गुफादेख के लौट जायगा बानरलोग अंधेरे स्थान में नहीं

१ श्लोक ततो ह मऽपिसौ हार्दान्निः सृतो बालिनासह। इति वाल्मीकीये॥
टीका तब हम भी मित्र भाव से बालि के साथ निकले॥

पैठते हैं। बुझाय के कहने का भाव यह राक्षस सन्मुख बल से नहीं लड़सका गुहा में पैठा इससे जानाजाता है कि वहांपर और भी राक्षस हैं नजाने कौन माया करें तवहम दोनोभाई मारेजांय इससे तुम दरवाजे पर रहो॥

[illegible]

एक पाखभर हमको परखना जो पाखभर में हम न आवैं तो जानना कि वालि मारागया तात्पर्य, तब यहां से चले जाना। पक्ष का अपभ्रंश पाख है, पाख को पखवारा कहते हैं, बालि नें सुग्रीव पर कृपा करके पक्षभर रहनें को कहा कि तुम हमारी आसा से यहां बहुत दिन तक न वैठे रहना। पक्षभर कहनें का भाव बीर अपने पराक्रम को समझते हैं, कि यह काम इतने दिन में हम कर सकेंगे [illegible] समुझ लिया कि हम इसको पक्षभर में मारेंगे इसी से सुग्रीव को पक्षही भर रहने को कहा॥

मास दिवस तहं रहेउं खरारी। निसरी रुधिर धार तहं भारी।

हे खरारि तहां हम मास दिवस अर्थात् महीना भर रहे महीना भर के उपर वहां से रुधिर की भारी धार निकली। मासभर रहने का भाव वालिनें पक्षभर रहनें को कहा हम वहां दो पक्ष रहे यह सुग्रीव की प्रीती है, कि भाई के स्नेह से वहांपर महीना भरठहरे रहे खरारि कहनें का भाव हे राम तुम खर जो दुष्ट है तिनके अरि हो हमारी कोई दुष्टता नहीं है, सव दुष्टता वालिकी है, । भारी धार निकलनें का हेतु यह है, मायावी राक्षस का तन भारी रहा इसीसे

१ श्लोक इत्युक्त्वा विश्यस गुहां मासमेकं न निर्ययौ मासा दूर्ध्वंगुहा द्वारा न्निर्गतं रुधिरं बहु। इति अध्यात्मे प्रथम सर्गे॥
टीका ऐसा कहके वालि गुहा में पैठा महीनाभर उस में से न निकला महीने के ऊपर गुहा के दरवाजे से बहुत रुधिर निकला॥

उसके रुधिर की धार भी भारी निकली ॥

बालि हतोसि मोहिं मारिहि आई। सिला देइ तहं चलेउं पराई।

उस ने बालि को मारा अब आकर हमको मारेगा इसी से गुफा के दरवा जे परासिला लगाय के हम भाग आए ॥ बालि हतेसि कहने का भाव महीनाभर सुग्रीव वहां खड़े रहे कुछ निश्चय न भया कि कौन मारागया इसी से सुग्रीव वहां से न जाय सके। जब रुधिरकी धार निकली तब निश्चय भया कि बालि मारागया क्योंकि, बालि ने एक पाखतक परखने को कहा और रुधिरकी धार महींनेभर में निकली इसीसे सुग्रीव को निश्चय भया कि बालिही मारागया। मोहिं मारिहि आई कहने का भाव जब बालि ऐसे बीर को उसने मारा तब हम उसके सामने क्याहैं ॥

मंत्रिन पुर देषा बिनु साईं। दीन्हेउ मोहिं राज बरियाईं।

मंत्रियों ने बिना स्वामी का पुर देखके हमको जबरदस्ती राज दिया। बरियाईं कहने का भाव हमको राज्य लेनेकी इच्छा नहीं रही यहांतक सुग्रीव ने अपनी सफाई कही कि हम सहायता के लिये बालि के संग गये। बालि ने हमको पाखभर रहने को कहा हम महींनाभर रहे मंत्रियों ने हमको जबरदस्ती राज्य दिया। अब बालि का अपराध कहते हैं, कि हमको उन्हो नें शत्रु के समान मारा और हमारा सर्वस्व और स्त्री हर लिया ॥

बाली ताहि मारि गृह आवा। देषि मोहि जिय भेद बढ़ावा।

बालि तिसको मारके घरआये और हमको देखकर अपने जीमें भेदवढाया देषि कहने का भाव जोहम को राजगदीपर बैठनेदेखते

१ श्लोक अभिषि क्तंतु मां दृष्ट्वा क्रोधात्संरक्तं लोचनः इति वाल्मीकीये नवम सर्गे ॥
टीका राज सिंहासन पर अभिषेक युक्त हम को देखके क्रोध से बालि के नेत्र लालहो गए ॥

तो अपने जीमें भेद न बढ़ाते कि इनका कोइ दोष नहीं है हमने पंद्रह दिन रहने को कहा ये पंद्रह दिन रहके चले आये भेद यह बढ़ाया कि इनके जीमें यहीरहा कि बालि मरे तो हम राज्य करें इसी से गुहाके मुख पर सिला लगाय दी और राजगदी पर आयके बैठगये ॥

रिपुसममोहिमारिसिअतिभारी। हरिलीन्हेसिसरवसअरुनारी।

शत्रु के समान हमको अत्यंत भारी मार से मारा और हमारा सर्वस्व और नारी हर लिये। सर्वस्व कहके नारी पृथक कहने का भाव उन को हमारी नारी हरना अति अयोग्य रहा सोभी किया ॥

ताकेभयरघुबीरकृपाला। सकलभुवनमैंफिरेउंबिहाला।

हे रघुबीर कृपालु तिनके भय से हम सब भुवन में व्याकुल फिरे॥ रघुवीर कृपालु कहने का भाव तुमें रघुबीर हो बालि को मारो और कृपालु हौ हम पर कृपा करो ॥

इहांसाप बस आवत नाहीं। तदपि सभीत रहौं मनमाहीं।

इहां साप के बस से बालि नहीं आते तदपि मनमे हम डरते रहते हैं। मतंग[2] ऋषि का साप है कि वालि इहां आवे तो उसके मस्तक

---

१ श्लोक लोकान् सर्वान् परिक्रम्य ऋष्यमूकं समास्तृतः। इतिअध्यात्मेंप्रथमसर्ग ॥
टीका सब लोकों की परिक्रमा करके ऋष्यमूक का आश्रयन किया अर्थात् ऋष्यमूक के आश्रय से रहे ॥

२ श्लोक कर्तुं मर्हसि मे बीर प्रसादं तस्य निग्रहात् ॥ इति वाल्मीकीये दशम सर्गे ॥
टीका हे बीर बालि को दण्ड देके हमारे पर प्रसाद करने के योग्य हो ॥

१ श्लोक। यत्नवांश्च सदुष्टात्मा मद्विनाशाय राघवबहुशस्तत्प्रयुक्ताश्चवानरानिहतामया ॥ इति वाल्मीकीये अष्टम सर्गे ॥ टीका हे राघव वह दुष्ट आत्मा हमारे विनाश के लिये सदा जतन करता रहता है तिसके भेजे बहुत बानरों को हमने मारा ॥

२ श्लोक। मतंगेन तदा शप्तो ह्यस्मिन्नाश्रम मण्डले प्रविशेद्य दिवा बाली मूर्द्धास्य शतधा भवेत् ॥ इति बाल्मीकीये षट्चत्वारिंशः सर्गे ॥ टीका। मतंग ऋषि का श्राप है कि जौ बालि इस आश्रम में प्रवेश करें तो उसके सिरके सौ टुकडे हो जावें ॥

के सौ टुकड़े होजाय ॥ तदपि सभीत रहौं कहने का भाव बालि आप नहीं आते दूसरे को भेजते हैं हमारे विनाश के उपाय में लगे रहते हैं ॥ यहांतक सुग्रीव ने अपने तन धन मन तीनो का दुःख कहा। यथा रिपु सम मोहि मारिसि अतिभारी। यह तन का दुःख है। हरि लीन्हेसि सरबस अरुनारी यह धन का दुख कहै। यहां साप वस आवत नाहीं तदपि सभीत रहौं मन माही। यह मन का दुःख है॥ रामजी ने सुग्रीव से बनमें बसने का कारण पूंछा सो उन्होने यहां तक कहा और बालि का अपराध कहा कि बिना अपराध हमको मार के पुर से निकाल दिया हमारा सर्वस्व और नारी हर लिये अब हमारे प्राण नहीं बचते ॥ नाथ सयल पर कपि पति रहई यहांसे और इहां साप वस आवत नाहीं तदपि सभीत रहौं मन माहीं यहां तक सुग्रीव की मिताई का प्रसंग है ॥

सुनिसेवकदुषदीन दयाला। फरकिउठीं द्वौभुजाबिसाला

सेवक का दुःख सुन के दीन दयालु की दोऊ विसाल भुजा फरक उठीं सेवक का दुःख दूर करने के वास्ते और उत्साह में बीरनकी दोनो भुजा फरकती हैं यहां सगुन असगुन का बिचार नहीं है। सब प्रकार करिहौं सेवकाई इतनाही कहने से रामजी ने सुग्रीव को अपना सेवक मान लिया इसीसे यहां सेवक कहते हैं। दीनदयालु कहने का भाव सुग्रीव दीन हैं उनपर दया की और हनुमानजी की भी यही प्रार्थना है कि दीन जानि तेहि अभय करीजे।

---

१ यहा वैरी के बल को सेवक का दुःख उद्दीपन विभाव है भुज फरकना अनुभाव है अपनी उग्रता से बालि के बल की प्रशंसा न सुहानी सो असूया है उत्साह स्थाई है इस से बीररस है॥

दोहा

सुनु सुग्रीव मारिहौं । बालिहि एकहि बान
ब्रह्म रुद्र सरनागत । गएन उबरिहि प्रान ॥ ६ ॥

हे सुग्रीव सुनो हम बालि को एकही बान से मारेंगे ब्रह्मा और शिव के शरणागत गएपर भी प्राण न बचेंगे । यथा जौ षल भयासि राम कर द्रोही ब्रह्म रुद्र सक राषिन तोही ,उदा हरण, ब्रह्म धाम शिव पुर सब लोका फिरा स्रमित व्याकुल भय सोका । काहू बैठन कहा न ओही राषि कोसके राम कर द्रोही इति आरण्य काण्डे ॥ एकही बाण से बालि के मारने की प्रतिज्ञा करने का तात्पर्य यह हैकि उसके मारने में विलम्ब न करैंगे । प्रतिज्ञा करने का भाव रामजी मित्र के दुःख से दुखी भए हैं इसीसे बालि के मारने की प्रतिज्ञा की ॥

चौपाई

जेनमित्रदुषहोंहिदुषारी । तिन्हहिंबिलोकतपातकभारी ।

जे मित्र के दुःख से दुखी नहीं होते तिनके देखने से भारी पाप होताहै । तिन्हहिं बिलोकत पातक भारी कहने का भाव महा पातकी के संसर्ग से लोग महा पातकी होते हैं । जे मित्र के दुःख से दुखी नहीं होते तिन के देखनेही से महा पातकी होते हैं ॥

निजदुषगिरिसमरजकरिजाना । मित्रकेदुषरजमेरुसमाना ।

अपना दुःख पर्वत् के समान तिसको धूरि के समान जाने और मित्र का दुःख धूरि के समान हो तिसको सुमेरु के समान जाने ।

---

१ श्लोक मित्र दुःखेनसन्तप्तो रामो राजीव लोचनः हनिष्यामि तव द्वेष्यं शिघ्रं भार्य्या पहारिणं । इति अध्यात्मे प्रथम सर्गे ॥ टीका राम कमल लोचन मित्र के दुख से दुखी भए बोले कितुह्मारी स्त्रीके हरने वाले शत्रुको हम शीघ्र मारेंगे ॥

गिरी से सुमेरु भारी है तात्पर्य अपने दुःख से मित्र का दुःख भारी समुझे जो आप दुखी नहोय तो मित्र के दुःख से दुखी होय। जो आपही दुखी होय तो अपने दुःख को धूरी सम जाने। तात्पर्य अपना दुःख बिना धूरी सम जाने मित्र का दुःख देख पडेगा और जबतक मित्रका दुःख भारी न देख पडेगा तबतक उस दुःख के छुडा ने का उपाय नहो सकेगा इस के उदा हरण र म हीजी हैं राज्य छूटा बनवास भया जानकीजी का हरण भया यह दुःख गिरि के समान रज कर के जाना यथा, तिय बिरही सुग्रीव सषालखि प्राणप्रिया बिसराई ॥ इति विनय ॥ और के दुःख को सुमेर सम जानकर जल्दी दूर किया ॥

६। ठिकरतामिताई

जिनके ऐसी मति सहजही नहीं आई है सो सठ क्यों हठ करके मिताई करते हैं। सहज नआई कहने का भाव । सुन्ने से सिखा- ने से ऐसी मति आती है । जबतक स्वाभाविक नहीं आती तब तक निरंतर नहीं रहती है। हठि कहने का भाव । वेद पुराण शास्त्र मने करते हैं कि जो ऐसे सठ हैं सो मिताई नकरें तदपि नहीं मानते मिताई करके महा पातकी बनते हैं यहांतक मित्रता के दोष वर्णन किये दोष वर्णन करने का भाव जिसमें लोग दोष त्याग के मित्रता करें आगे मित्र धर्म कहते हैं ॥

कुपथनिवारिसुपंथचलावा। गुनप्रगटैअवगुनन्हिदुरावा।

कुपथ निवारन करके सुपंथ में चलावे गुन प्रगट करै अवगुन छिपावे जब कुपथ निवारन होता है तव सुपंथ में चलता है इसीसे प्रथम कु पथ का निवारन कहा इस प्रकार से मित्रका परलोक सुधारे। अब

जैसा मित्र के साथ लोक में व्यवहार बरतना चाहिये तैसा आगे लिखते हैं ॥

देत लेत मन संक न धरई । बल अनुमान सदा हित करई ।

वस्तु के देने लेने में मन में संका न धरे बल के अनुमान से सदा हित करे देन लेन में संका न धरे अर्थात् अपना और मित्र का धन एकही जाने जैसे रामजी ने विभीषण से कहा है कि तोर कोस गृह मोर सब सत्य बचन सुनु तात देत लेत कहने का भाव प्रथम देने का विचार रक्खे पीछे लेने का इसीसे प्रथम देत कहते हैं । बल अनुमान कहने का भाव बल से अधिक उपकार नहीं करसक्के और बल से कम करे तो कपट ठहरता है इसीसे बल के अनुमान कहा है ॥

बिपतिकाल कर सतगुन नेहा । श्रुति कह संत मित्र गुन एहा ।

सुख काल से बिपत्ति काल में सौ गुना नेह करे ॥ बेद कहते हैं कि अच्छे मित्र का गुन कहे लक्षण येही है ॥ कुपथ निवारि सुपंथ चलावा, यहां से लेकर, श्रुति कह संत मित्र गुन एहा, यहां तक मित्र के लक्षण कहेहैं ॥ आगे कुमित्र के लक्षण कहते हैं ॥

(१) श्लोक पापान् निवारयति योजयते हिताय गुह्यं निगूहति गुनान् प्रगटी करोति आपद्गतंच नजहातिददाति काले सन्मित्र लक्षणमिदं प्रवदन्ति संतः । इति भर्तृहरनीतिशतके ॥ टीका पाप से निवारन करै हित में लगावै उसके अवगुन को गुप्त रक्खे गुनप्रगट करै विपति में उसकोत्यागनकरे समय पर उस को देवै ये अच्छे मित्र के लक्षण हैं ऐसा संत कहते हैं ॥

श्लोक और चौपाइयों का मिलान कहते हैं

पापान् निवारयति योजयते हिताय कुपथ निवारि सुपंथ चलावा १ गुह्यानि गूहति गुनान् प्रगटी करोति गुन प्रगटै अवगुनन्हि दुरावा २ आपद्गतंच न जहाति ददाति काले बिपति काल कर सतगुन नेहा ३ सन्मित्र लक्षण मिदं प्रवदन्ति संतः श्रुति कह संत मित्र गुनएहा ४

आगेकहमृदुबचनबनाई । पाछेअनहितमनकुटिलाई ॥

आगे अर्थात् सामने कोमल बचन बनाकर कहते हैं पीछे अन हित कहे हित की हानि करते हैं और मन में कुटिलाई रखते हैं। ब नाई कहने से यह सूचित करते हैं किवात तो झूंठि है पर ऐसी बना कर कहते हैं कि सच्चीसी लगती है। कपटी मित्र के मन बचन क र्म तीनो में कपट रहता है। यथा, आगे कह मृदु बचन बनाई, यह बचन का कपट है पीछे अनहित करते हैं यह कर्म का कपट है। मन में कुटिलता रखते हैं यह मन का कपट है। पाछे अनहित इतना ही लिखते हैं अनहित करने की क्रिया नहीं लिखते। तात्पर्य जैसे कुमित्र गुप्त अनहित करते हैं तैसे गुशाईंजी ने भी करने की क्रिया गुप्त कि है ॥

जाकरचितअहिगतिसमभाई। असकुमित्रपरिहरेहिभलाई

हे भाई जिसका चित्त सर्प की चाल के समान टेढ़ा है ऐसे कुमि त्र के त्यागेही से भलाई है। प्रथम कुटिल को मित्रता करने को मने किया यथा, जाके अस मति सहज न आई, तेसठ कत हठि करत मि ताई, कदाचित मने करने से यह न माने सठ है तो ऐसे कुमित्र को आपही त्याग करे। परि हरेहि भलाई, कहने का भाव जो कदाचित उसको न त्याग करे तो वह शूल सम पीड़ा देगा। कुमित्र के मन बुद्धि चित्त तीनो मलीन हैं यथा, पाछे अनहित मन कुटिलाई, यह मन की मलीनता है। जाकर चित् अहि गति सम भाई, यह चित्त की मलीनता है। जिनके असि मति सहज न आई यह बुद्धि की मलीनता है ॥

सेवकसठनृपकृपिणकुनारी। कपटीमित्रसूलसमचारी।

सेवक सठ है राजा कृपिण है नारी कुत्सित है मित्र कपटी है ये ; सम हैं अर्थात् भीतर पीड़ा देते हैं ऊपर से हित बने रहते हैं ॥ रामजी ने यहांतक मित्र धर्म कहे आगे मित्र धर्म करने को उद्दित भए ॥

सषा सोच त्यागहु बल मोरे । सब बिधि घटबकाज मैं तोरे ।

हे सखा हमारे बल से तुम सोच त्याग करो हम सब बिधि से तुम्हारे कार्य में घटब कहें युक्त होब अर्थात् सब बिधि से तुम्हारा काम करेंगे ॥ गुशाईंजी ने रामजी और सुग्रीव का मित्र धर्म समान वर्णन किया है । यथा, वहां- सुनि सुग्रीव नयन भरिवारी । यहांसुनि सेवक दुख दीन दयाला ॥ १ ॥ वहां तजहु सोचमनआनहु धीरा। यहां सषासोचत्यागहुबलमोरे ॥ २ ॥ वहां सबप्रकार करिहौ सेवकाई । यहां सब बिधि घटब काजमैं तोरे ॥ ३ ॥ वहां जेहिबिधि मिली जानकी आई । यहां सुनुसुग्रीव मारिहौंबालिहिएकहिबान ॥ ४ ॥

बीरा । बालि महाबल अतिरनधीरा ।

सुग्रीव ने कहा कि हे रघुबीर सुनो बालि महा बलवान और अति रनधीर है । महा बल और रनधीर कहने का भाव रामजी ने कहा कि सखा सोच त्यागहु बल मोरे तब सुग्रीव ने कहा कि बालि महा

१ । श्लोक अविधेया भृत्य जनाः सठानि मित्राण्य दायकः स्वामी । अविनयवतीच भार्या मस्तक शूलानि चत्वारि । इति प्रस्ताव रत्नाकरे ॥ टीका आज्ञा न मानने वाला सेवक शठ मित्र कृपिण राजा और करकसा स्त्री ये चार माथे के शूल हैं ॥

(२) श्लोक सुग्रीवोप्याह राजेंद्र बाली बलवताम् बलीकथं हनिष्यति भवान् देवैरपि दुरासदम् । इति अध्यात्मे प्रथम सर्गे ॥ टीका सुग्रीव बोले कि हे राजेन्द्र बालि बलवानो में बली है आप उसको कैसे मारोगे देवताओं कर के दुरासद है अर्थात् जीता नहीं जाता ॥

बल अति रनधीश। आप के बल है बालि के महा बल है आप बीर हैं बालि अति रनधीर है तब उसको कैसे मारोगे इसीसे आगे बालि का वल सुग्रीव देखाते हैं।

दुंदुभि अस्थि ताल देखराए। बिनु प्रयास रघुनाथ ढहाए।

दुंदुभी के हाड़ और ताल के वृक्ष सुग्रीव ने रामजी को दिखाए रघुनाथजी ने विना प्रयासही ढहाए अर्थात गिरा दिये। वालि के महा बल को सुग्रीव दिखाते हैं कि बालि ने दुंदुभी को मारके फेंक दिया अब किसी की सामर्थ्य नहीं है कि उस्के हाड को उठा सकै और ताल के सात वृक्ष दिखाए कि बालि इनको हिलाके पत्र रहित करदेता है जो इन वृक्षों को एक वान मे काटे सो बालि को मारे। बिन प्रयास कहने का भाव रामजी ने दुंदुभी के हाड़ चरण के अंगुठे से दस योजन के दूरी पर फेंक दिये॥ प्रथम दुंदुभी के अस्थि दिखा के पीछे ताल दिखाने का भाव दुंदुभी के हाड़ फेंकने से सुग्रीव[2] के हृदय में पूरा विश्वास नहीं भया तब ताल दिखाये हैं॥

देषि अमित बल बाढी प्रीती ।॥

रामजी का अमित वल देखके सुग्रीव की प्रीति बढ़ी कि रामजी बालि का बध करेंगे यह परतीत भइ। देखि कहने का भाव सुग्रीव

(१) श्लोक पादांगुष्ठे न चिक्षेप संपूर्ण दश योजनम् विभेदच पुनस्ता लां ससैके न महेषुणा। इति वाल्मीकीये मूलरामायणे॥ टीका पैर के अंगूठे से दश योजन की दूरी पर फेंक दिया और एक बडे बाण से सातो ताल को काट गिराया॥

॥ २॥ श्लोक यदित्व मेक वाणेन विध्वा छिद्रं करोषि चेत् हतस्त्वया तदा वाली विश्वासो मे प्रजायते। इति अध्यात्मे प्रथम सर्गे॥ टीका सुग्रीव ने राम जी से कहा कि यदि आप एक वाण से सातो ताल के बृक्षो को छेद दें तो हमको यह विश्वास होगा कि बालि आप से मारा जायगा॥

ने लछिमनजी के मुख से राम जी का पराक्रम सुना है धनुष भंग बिराध षरदूषन और कबंध बध इत्यादि। और रामजी ने भी अपने मुख से अपना बल कहा है यथा सुनु सुग्रीव मारिहौं वालिहि एक हि बान, ब्रह्म रुद्र सरनागत गए न उबरिहि प्रान, इतना सुनने पर भी सुग्रीव के प्रतीत न आई जब उन्होंने आंखों से देखलिया अस्थि का फेंकना तालों का वेधना तब प्रतीत आई। अमितबल कहने का भाव जब रामजी ने अपना बल कहा कि सषासोच त्यागहु बल मोरे तब सुग्रीव ने बालि को महाबली कहा यथा, बालिमहाबल अति रन धीरा अब महाबलसे अधिक रामजी में अमित बल देखा यथा, देषि अमित बल बाढी प्रीती, प्रीति बाढी कहने का भाव प्रीति तो आगेही से रही है। यथा, कीन्ह प्रीति कछु बीच न राषा अब वह प्रीति बाढती भई ॥

बारबार नावइ पदसीसा। प्रभुहि जानि मन हरष कपीसा॥

बार बार चरनों में सीस नावते हैं प्रभु को जान के सुग्रीव के मन में हर्ष भया। सुग्रीव मन बचन कर्म से रामजी के शरन भये। बार बार नावै पद सीसा यह कर्म है प्रभुहि जानि मन हरष कपीसा यह मन है उपजा ज्ञान बचन तब बोला यह बचन है। प्रभु के जानने से प्रतीत होती है प्रतीति से प्रीति होति है प्रीति से भक्ति होती है। यथा, जाने बिनु न होय परतीती, बिनु परतीति होइ नहि प्रीती, प्रीति विना नहिं भगति दृढाई ॥ प्रभुहि जानि मन हरष कपीसा, यह प्रभुका जानना है जानने से सुग्रीव के प्रतीति भई यथा, बालि बधबइन भइ परतीती परतीति से प्रीति भई यथा, देषि अमित बलबाढी प्रीती प्रीति से भक्ति भई यथा, सुषसंपति परिवार बडाइ सब परिहरि करिहौं सेवकाइ सेवकाई करना भक्ति है ॥

उपजाज्ञानवचनतबबोला। नाथकृपामनभयोअलोला।

सुग्रीव के ज्ञान उपजा तब बचन बोले कि हे नाथ आप की कृपा से हमारा मन अलोल कहें अचल भया। प्रभुको जानके ज्ञान उपजा यह कहने से सूचित भया कि प्रभु का जाननाही ज्ञान है। उपजा ज्ञान बचन तब बोला कहने का भाव प्रेम में मन मग्न हो जाताहै बोल नहीं आता ज्ञान में धीरज हो ताहै तब बोल आता है। उदाहरण, प्रेम मगन मन जानि नृप। करि बिवेक धरि धीर॥ बोले मुनि पद नाइ सिर। गद गद गिरा गंभीर॥ भगवत की कृपा से और ज्ञान से मन स्थिर होता है सुग्रीव की समुझ से राम जी की कृपा मुख्य है इसीसे रामजी की कृपा से मनका अचल होना कहते है॥

। [illegible] रहौं सेवकाई॥

सुख संपत्ति परिवार बड़ाई। सब छोड़के आपकी सेवकाई करेंगे॥ सुख संपत्ति परिवार बड़ाई मिलने का बिश्वास भया कि रामजी बालि को मारके हमको राज देंगे इसीसे सब त्याग करने को हैं॥

ये सबराममक्तिकेबाधक। कहहिंसंततवपदअवराधक॥

ये सब राम भक्ति के बाधक हैं तुम्हारे चरण के उपासक जो संत हैं सो कहते हैं। तात्पर्य जो भक्ति करते है तिनको ये सब बाधक समुझ पड़ते हैं और लोग इन्हे गुन समझ ते हैं॥ बाधक कहने का भाव इनके रहने से रामजी का स्मरण भूल जाता है इसके उदाहरण सुग्रीवही हैं। राज पाके रामजी को बिसरा दिया यथा सुग्रीवहु सुधि मोरि बिसारी। पावा राज कोस पुर नारी॥

सत्रु मित्रदुष सुषजग माहीं। माया कृत परमारथ नाहीं।

जितने शत्रु मित्र दुःख सुख जगत में हैं सो सब माया कृत हैं अर्थात मिथ्या हैं परमारथ नहीं हैं॥ परमारथ रामजी के चरण में अनुराग है यथा सषा परम परमारथ एहू मन क्रम वचन रामपद नेहू इसी से इन सबको छोड़के हम आपके चरण में अनुराग करेंगे॥

बालिपरमहितजासुप्रसादा। मिलेहुरामतुमसमनविषादा।

बालि हमारा परम हित है जिस के प्रसाद से हे राम विषाद के नाश करता अर्थात् जन्म मरण के दूर करने वाले तुमामिले हौ। परम हित कहने का भाव संसारी उपकार करे सो हित है और तुमको मिलावे सो परम हित है। तात्पर्य अव बालिको नमारो जिसके क्रोध से ईश्वरमिले उसका क्रोध नहीं है प्रसाद है इसीसे सुग्रीव बालि के क्रोध को प्रसाद कहँते हैं॥ यहां अनुग्या लंकार है॥ यथा होत अनुग्या दोष को। जब लीजै गुनमानि।

सपनेजेहिसन होतलराई। जागेसमुझत मन सकुचाई॥

जिस बालि से हम से सपने में लड़ाइ होय तो जागने पर समुझने से हमारे मन मे संकोच होय कि हम ऐसे परमहितु से सपने में क्यों लड़े। तात्पर्य अब हम बालि से सपने में भी न लड़ें॥

अबप्रभुकृपाकरहुयहिभांती। सबतजिभजनकरउँदिनराती।

हे प्रभु अब इस भांति से कृपा करो कि हम सब तजके दिन रात आपका भजन करें। अब प्रभु कृपा करहु यहि भांती इस चरण का संबंध पूर्व से और पर से है जो सपने में हमसे और वालि से लड़ाई होय तो जागे में हमारा मन सकुचाय। अब इस

भांति से कृपा करो यह पूर्व से सम्बन्ध है । सब तजि के तुम्हारा भजन करें अब इस भांति से कृपा करो यह परसे सम्बन्ध है। अब इस भांति कृपा करो कहने का भाव, प्रथम आपकी कृपा भई कि सोच त्याग करो हम तुम्हारे शत्रु को मारकर तुम्हे राज देंगे सो न करो। अब इस भांति की कृपा करो कि हम दिन राति तुम्हारा भजन करें। सब परिहरि करि हौं सेवकाई, सब तजि भजन करौं दिन राती, ये सब राम भक्ति के बाधक हैं। सब जगह सब कहने का भाव, जो इन विकारों मे से एकभी विकार रह जावे तो वह राम भक्ति में बाधा करेगा। ज्ञान वैराग्य होने पर भजन मांगते हैं इससे यह सूचित भया कि ज्ञान वैराग्य का फल भक्ति है। कृपा करहु से यह सूचित किया कि विना आपकी कृपा भजननहीं बनता सुग्रीव के मत से सबकाम सिद्धि होने में रामकृपामुख्य है। यथा, नाथ कृपा मन भयो अलोला, अब प्रभु कृपा करहु येहि भांती, सब तजि भजन करौं दिन राती। यह गुन साधन ते नहिं होई, तुम्हरी कृपा पाव कोइ कोई इत्यादि यहां निर्वेद है यथा, दोहा, जेहितेहि विधि संसार सुपदेखत उपजै षेद, उदासीनता जगतते सोकहिये ॥

सुनि विराग संयुत कपि बानी, बोले बिहँसि राम धनु पानी

कपि की विराग संयुक्त बानी सुनके धनुष धारी राम हंसके बोले। इस समय में सुग्रीव को ज्ञान वैराग्य भक्ति तीनो प्राप्त है। य-

---

१ श्लोक रामः सुग्रीवमालोक्य सस्मितं वाक्य मब्रवीत् मायामोह करींतस्मिन् वितन्वत्कार्य सिद्धये। इति अध्यात्मे द्वितीय सर्गे ॥

टीका रामजी सुग्रीव को देखकर हंस के बचन बोले कि अपने कार्यकी सिद्धि के अर्थ मोह करने वाली माया को उनके ऊपर विस्तार किया ॥

था, उपजा ज्ञान बचन तब बोला, यह ज्ञान है, सुख संपति परिवार बड़ाई, येसब त्याग करेंगे यह विराग है, सब तजि भजन करौं दिन राती, यह भक्ति है ॥ रामजी के बिहँसने का भाव, अपने कार्य की सिद्धि करने के लिये राम जी ने सुग्रीव पर माया का विस्तार किया क्योंकि प्रभुका हँसना माया है । रामजी के हंसने से सुग्रीव के हृदय में ज्ञान विराग भक्ति तीनो नरहे यथा, बिषय मोर हरि लीन्हेउ ज्ञाना । यहां ज्ञान नरहा । पावा राज कोस पुरनारी, यहां विराग नरहा, सुग्रीवहुं सुधि मोरिविसारी, यहां भक्ती नरही, धनु पानी कहने का भाव, धनुष हमारे हाथ में है हमारी बानी मिथ्या न होगी हम बालिको मारेंगे यही बात आगे कहते हैं ॥

जोकछुकहेहुसत्यसबसोई । सषाबचनममभृषानहोई ।

हे सखा तुमने जो कुछ कहा सो सब सत्य है परन्तु हमारा बचन झूठानहोगा अर्थात् हम तुम्हारे शत्रुको मारके तुमको राज्य देंगे यह हमारी प्रतिज्ञा है । सोई शब्द से नियम करते हैं कि उत्तम बात तो वोही है जो तुम कहते हो अर्थात् बैर छोड़के शान्त रहना चाहिये परन्तु हमारी बालि बध की प्रतिज्ञा हो गई अब हम उसको मिथ्या नहीं कर सक्के ॥

नटमरकटइवसबहिनचावत, रामषगेसबेदअसगावत ।

हे खगेस रामजी नट मरकट की नाँई सब को नचाते हैं वेद ऐसागाते हैं जब राम जी ने सुग्रीव को उत्तर दिया कि हे सखा हमारा बचन मिथ्या नहोगा तब सुग्रीवे ने रामजी की इच्छा अनुकू

१ । श्लोक तथेति गत्वा सुगीवः किष्किधो पवनं द्रुतं । इति अध्यात्मे प्रथम सर्गे ॥ टीका तथास्तु ऐसा कह के सुग्रीव किष्किधा के उपबन मे तुरंत गये ॥

रमू क्रडायां रमू धातु क्रीडा अर्थ में है रामजी क्रीडा करते हैं अर्थात सबको नचाते हैं ॥

ल ही काम किया अर्थात् बालि से लड़ने के वास्ते तुरित किष्किं-धा के उपवन में गये। इसी पर कहते हैं कि सुग्रीव क्या सब संसार के जीव रामजी की इच्छा के अनुसार काम करते हैं ॥

लै सुग्रीव संग रघुनाथा। चले चापसायकगहि हाथा ॥

रघुनाथ जी सुग्रीव को साथ ले के हाथ में धनुष बान धारण कर के चले। यह कहने से रघुनाथ जी की प्रधानता पाईगई कि बालि के मारने में अब रघुनाथ जी का मुख्य प्रयोजन है उन को अपना बचन सत्य करना है। जो चलने में रामजी की प्रधानता न होती तो रघुनाथजी को संग में लेके सुग्रीव चले ऐसा कहते ॥

तब रघुपतिसुग्रीव पठावा। गरजेसिजायनिकटबलपावा

तब रघुनाथ जी ने सुग्रीव को भेजा वह बल पाय निकट जाय-के गरजे जब पहाड़ से उतर के किस्किंधा के पास आए तब पठा-वा ॥ निकट जाय के गरज ने का भाव, किस्किंधा शहर भारी है जिस में हमारा शब्द बालि के महल तक पहुंचे शब्द सुन के बालि हमारे पास आवे। बलपावा कहने से यह सूचित करते हैं कि इस लड़ाई में बालि सुग्रीव को मारेगा क्योंकि सुग्रीव ने रामजी से बल पाया है और बालि के महाबल है। यथा, बालि महाबल अति रन धीरा। दूसरी लड़ाई में रामजी सुग्रीव को बिशाल बल देंगे तब नाना बिधि की लड़ाई होगी। यथा, पुनि पठवा बल देइ बिशाला, पुनि नाना बिधि भई लराई ॥

सुनत बालि क्रोधातुर धावा। गहिकरचरननारि समुझावा।

बालि सुनतेहि क्रोध करके जल्दी दौडा उसकी स्त्री ने हाथ से चरन गहि के समुझाया। सुनतेही धावने का भाव, बालि शत्रु के बल

को नहीं सहसक्ता। यथा, बाली रिपुबल सहै न पारा। इसी से शत्रु का प्रचार सुन के दौड़ा। क्रोध में समुझ नहीं रहती इसीसे नारि समुझाने लगी सो समुझाना आगे लिखते हैं

सुनुपति जिन्हहिं मिलेउ सुग्रीवां। ते द्वौबंधु तेज बल सीवां।

हे पति सुनो जिनको सुग्रीव मिले हैं सो दोनो भाई तेजबल के सींवं कहे हद्द हैं। पति कहने का भाव, तुम हमारे पति अर्थात रक्षकहो, पुरक्षणे, प धातु रक्षा अर्थ में है। तात्पर्य सुग्रीव से बैर छोड़ के मे[1]री और अंगद की राज की कुल की सब की रक्षाकरो। तेज के सींव हैं अ- अर्थात् तेजस्वी को लघु न गिनना चाहिये। यथा, तेजवंत लघु गनिय नरानी॥ तात्पर्य राम लछिमन देखने में छोटे हैं परन्तु उन्हें छोटा नजानो। बल के सींवं हैं जहां तेज है तहां बल है।

कोसलेससुत लछिमन रामा। कालहु जीतिसकहि संग्रामा।

अवधेश के पुत्र हैं लछिमन और राम नाम है काल को भी संग्राम में जीत सकते हैं। कोसलेस सुत कहके अवतार सूचित करती है कि राम लछिमन साक्षात भगवान का अवतार हैं। कोसलेस के यहां भगवान ने औवतार लेने को कहा है। यथा, ते दशरथ कौशल्या रूपा, कोसलपुरी प्रगट नर भूपा। तिनके गृह औतरिहौं जाई। रघु कुल तिलक सोचारिउभाई॥ यहां रामजी से प्रथम लछिमन जी का नाम छंद की सुगमता के वास्ते है अथवा संग्राम में आगे सेवक चाहिये पीछे स्वामी चाहिये इसीसे पहिले लछिमन जी का नाम कहती है। कालहु कहने से

१। श्लोक पाहिमामं गदं राज्यं कुलंच हरिपुंगव। इति अध्यात्मे॥ टीका हे वानरों में श्रेष्ठ मेरी और अंगद की राज्य और कुल की रक्षा करो॥

काल की वडाई करती है कि काल सब को जीतता है और काल को राम लछिमन जीतसक्ते हैं। यथा, भुवनेस्वर कालहुं करकाला और, तुमकृतान्त भक्षक सुरत्राता। संग्राम कहने का भाव, जोगी जोग से काल कोजीतते हैं रामलछिमन संग्राम में काल को जीत सक्ते हैं तब तुम उनके सामने क्या हो ॥

दोहा।

कह बाली सुनुभीरु प्रिय। समदरसी रघुनाथ ॥
जौं कदाचि मोहिं मारहिं। तौ पुनि होउं सनाथ ॥

बालि ने कहा कि हे भीरु हे प्रिया सुन रघुनाथ जी सम दरसी हैं जो कदाचित् हमको मारेंगे तौ पुनि सनाथ कहे कृतार्थ हों गे तारा के हृदय में डर है इसीसे उसको भीरु कहा। जो डरता है उस को भीरु कहतेहैं खातरी करने के लिये प्रिया कहा ॥ जो कदाचि कहने का भाव, प्रथम तौ हम को रामजी नमारेंगे जोकदाचित् मारें क्योंकि वह अपनें भक्तों के वास्ते विषम दरसी होते हैं। यथा, यद्यपि समनहिं राग न रोषू, गहहिंन पाप पुन्य गुण दोषू। तदपि करहिं सम बिषम विहारा, भक्त अभक्त हृदय अनुसारा।

असकहिचलामहाअभिमानी। तृनसमानसुग्रीवहिंजानी ॥

महा अभिमानी बालि ऐसा कहके चला सुग्रीव को तृन समान जानके ऐसा कहके चला इसका तात्पर्य बालिको मृत्यु अंगीकार है परन्तु शत्रु का प्रचारना अंगीकार नहीं है। चला कहने का भाव, बालि पहिले क्रोधसे दौड़ा। यथा, सुनत बालि क्रोधातुर धावा। स्त्री के समुझाने से क्रोध का बेग निकल गया तब चला लिख ते हैं। यथा, असकहि चला महा अभिमानी। महा अभिमानी का

सम्बन्ध पीछे से है और आगे की चौपाइ से है। पीछे नारिका सिखा पन है सो उसने नहीं माना इसीसे वह महा अभिमानी है यही बात रामजी बालि से आगे कहेंगे । यथा, मूढ़ तोहि अतिसय अभिमाना, नारि सिषावन करसि न काना। और आगे उसने सुग्रीव को तृन समान जाना इसीसे वह महा अभिमानी है इस बात को भी रामजी आगे कहेंगे यथा, मम भुजबल आस्रित तेहि जानी, मारा चहसि अधम अभिमानी ॥

भिरेउभौबालीअतितरजा। मुठिकामारिमहाधुनिगरजा॥

दोनो भिरे कहें लड़े बालि अति तरजा अर्थात् अत्यन्त डांट के भय दिखाया और मुठिका मार के महा धुनिसे गरजा । दोनो भिरे कहने का भाव, रामजी के बल से सुग्रीव ने बालिका भय नहीं माना बालि लड़ा सुग्रीव भी लड़ा सुग्रीव तरजा बालि अति तरजा सुग्रीव गरजा यथा, गरजेसि जाय निकट बल पावा। बालि महा धुनि से गरजा बालि मारके गरजा यह बालि की जीत है जैसे हनुमानजी अच्छ कुमार को मारके गरजे हैं। यथा, आवत देषि बिटप गहि तरजा। ताहि निपाति महा धुनि गरजा॥

तब सुग्रीव बिकलहोइभागा। मुष्टिप्रहारबज्रसमलागा।

तब सुग्रीव व्याकुल होके भागा बालि के मुष्टिका प्रहार उसको बज्र सम लगा। बज्र पड़ने का रूपक कहते हैं वहां बज्र पात होता यहां बालि ने मुष्टि प्रहार किया यही बज्र पात है। वहां बज्र पात के पीछे भारी गरजना होती है यहां मुष्टिका मार के बालि महा धुनि से गरजा। वहां बज्र पात से लोग बिकल होते हैं यहां सुग्रीव बिकल होके भागा । वहां इन्द्र बज्र पात करता है यहां इन्द्र का

अंश बालि ने मुष्टि प्रहार किया ॥

मैं जो कहा रघुबीर कृपाला। बंधुन होय मोर यह काला॥

हे रघुबीर कृपालु हम ने जो आपसे आगेही कहा है कि यह हमारा भाई नहीं है काल है सुग्रीव ने कब कहा है कि वालि हमारा बंधु नहीं है काल है। उत्तर रिपुसम मोहि मारिसि अति भारी, हरि लीन्हेसि सरबस अरु नारी, यहां बालि को काल कहा है रिपु काल ही के समान है ॥ रघुबीर कृपालु कहने का भाव, तुम बीर हौ बालि को मारो कृपालु हौ हम पर कृपा करो ॥ तात्पर्य हम बालि से युद्ध करने के योग्य नहीं हैं। बंधु न होय मोर यह काला, यही बात कहने के लिये रामजी ने सुग्रीव को इस लड़ाई में बिशाल बल नहीं दिया जिस में बालि सुग्रीव को मारें सुग्रीव बालि को शत्रु कहे तब हम उस को मारें जव सुग्रीव बालिको परम हित कहता है तब हम उसको कैसे मारें ॥ यहां शुद्धा पन्हुति अलंकार है और के आरोपते और का धर्म छिपजाय यहां काल के आरोप ते भाई का धर्म छिप गया ॥

एकरूपतुम भ्राता दोऊ। तेहिभ्रमतेनाहिंमारेउं सोऊ॥

तुम दोनो भाई एकही रूप के हौ इसी भ्रम से सोऊ अर्थात्

१। "श्लोक,, अलंकारेण वेषेण प्रमाणे न गते नच त्वंच सुग्रीव बालीच सदृशौस्थः परस्परं ॥ १ ॥ स्वरेण वचसा चैव प्रेक्षिते न च वानर विक्रमे नच वाक्यैश्चव्यक्तिवा नोपलक्षये ॥ २ ॥ ततोहं रूप सा दृश्यान मोहितो वानरोत्तम नोत्सृजामि महावेगं शरं शत्रू निवर्हणं ॥ ३ ॥ इति वाल्मीकी ये षोड़श सर्गे टीका आभूषण वेष शरीर की समता और चाल से हे सुग्रीव तुम और बालि परस्पर समान हौ ॥ स्वर वचन दृष्टि पराक्रम और वाक्यों से हे बानर हम को भेद नहीं जान पडा ॥ २ ॥ हे बानरो में श्रेष्ठ इस कारण हम ने रूप की समता से मोहित होकर शत्रू के नाश करने वाले महावेग बाण को नहीं छोड़ा ॥ ३ ॥

बालि को हमने नहीं मारा कि कहीं तुम्हारे बान न लगजाय। रामजी मनुष्य लीला करते हैं इसीसे अपने में भ्रम कहते हैं कि हमने भ्रम से बालिको नहीं मारा॥

कर परसा सुग्रीव सरीरा। तनभा कुलिस गई सब पीरा॥

सुग्रीव के शरीर पर रामजी ने हाथ फेरा तब उनका तन वज्र होगया अर्थात् बज्र की नाई दृढ होगया इहां वाचक नही है इसी से वाचक लुप्तोपमालंकार है सब पीरा दूर होगई॥ सुग्रीव की देह में हाथ परसने का भाव, जब ज्ञान होने से उनका मन थका लड़ने की इच्छा न रही तब उर में प्रेरणा करके मनको सन्मुख किया इसी पर कहाहै कि, उमा दारु जोषित की नाईं, सबहि नचावत राम गोसाईं॥ जब लड़ने से तन थका तब हाथ फेरके तन बज्र किया॥ सुग्रीव के सब शरीर पर हाथ फेरने का भाव। बालि के मुष्टिप्रहार से सुग्रीव के सब अंगों में पीडा भई इसीसे सब अंगो पर हाथ फेरा बालि ने सुग्रीव को तृण समान जाना। यथा, तृण समान सुग्रीवहि जानी। इसीसे रामजी ने सुग्रीव का तन वज्र के समान किया। यथा, तृण ते कुलिस कुलिस तृण करहीं॥ तन बज्र करने के लिये रामजी ने सुग्रीव के शरीर पर हाथ फेरा ऊपर से देखने में सुग्रीव की खातिरी कि देह पर हाथ फेरा कि हे मित्र तुम्हारी देह पर बडी चोट लगी॥

मेलीकंठ सुमन कै माला पठवा पुनि बलदेइ बिसाला।

गले मे सुमनकहे फूलों की माला पहिनादी। बिशाल अर्थात् भारी बल देकर फिर उनको भेजा। रामजी ने सुग्रीव के तन में बल दिया जैसे सब को बल देते हैं। यथा, जाके बल बिरंचि हरि

इसा । पालतभुजत हरतदससीसा । जाबलसेसधरत सहसानन, अंडकोससमेतगिरिकानन । इत्यादि, रामजीनेसुग्रीव को विशाल बल दिया जिससे वह बालि से लड़ सकै । बालि से अधिक बल सुग्रीवको नहीं दिया कि अधिक बल पाकर जो सुग्रीवही बालि को वध करे तो हमारी प्रतिज्ञा नष्ट होगी हमने बालि के वध करने की प्रतिज्ञा की है ॥

पुनि नाना बिधि की अर्थात् अनेक प्रकार की लड़ाई भई रामजी बृक्ष की ओट से देखते हैं ॥ बिटप की ओट से देखने का भाव जो रामजो बालि सुग्रीव की लड़ाई प्रगट होकर देखते तो सुग्रीव का धीरज छूट जाता कि हम को लड़ाय के आप खड़े तमाशा देखते हैं ॥ रामजी कौतुक देखतें है इसीसे रघुराई कहा
राजा कौतुकी होते हैं यथा, असकौतुक बिलोकि दोउ भाई, विहँ चले कृपालु रघुराई, कौतुक देखने से यहांभी रघुराई कहा है

बहु छल बल

जब सुग्रीव बहुत छल और बल करके भय मान के हृदय से हारा

---

१ । श्लोक वृक्षैः सशाखैः शिखरै र्वज्र कोटि निभैर्नखैः मुष्टिभिर्जानुभिः पद्भिःबाहु भिश्च पुनः पुनः तयोर्युद्ध मभूद्घोरं वृत्र वासवयो रिव इति वाल्मीकीये षोडस स्सर्गे ॥ टीका शाखाओं के सहित बृक्षों शिखरों कोटि बज्र के समान चमकीले नखों घूसों जघाओं पैरों और बाहों से बारं बार वृत्रासुर और इन्द्र की नाईं उनका भयानक युद्ध भया ॥

२ । विधिर्वि धाने दैवेच प्रकारेच विधातरि इत्यने कार्थमाला विधिशब्द का अर्थ विधान, दैव, प्रकार, बिधाता, है ॥

अर्थात् युद्ध करने की इच्छा नरही तव रामजी ने धनुषतानके अर्थात् जोरसे खींच के वालिके हृदयमें बान मारा तात्पर्य जबतक जीब के हृदय में छल वल रहता है तबतक ईश्वर उसकी सहायता नहीं करता। शरतान के मारने का भाव, बालि भारीबलवान है और उस को एकही बानसे मारने की प्रतिज्ञा हैं इसीसे जोर से मारा बिटप ओट से मारने का भाव, बालि के हृदयमें भक्ति है सो आगे स्पष्ट है यथा, जेहि जोनि जन्मौं करम बस तहं राम पद अनुरागऊँ। इसी से राम जी ने बिचार किया कि जोबालि हमको प्रणाम करे शरण होय तो शरणागतको मारते न बनेगा जो नमारैं तो हमारी प्रतिज्ञा भ्रष्ट होगी॥

पराविकलमहिशरकेलागे। पुनिउठिबैठदेखिप्रभुआगे॥

बान के लगने से बिकल होके पृथ्वी पर गिरपडा प्रभुको आगे देख के फिर उठ वैठा। परा बिकल महि सरके लागे यह राम बाण की सामर्थ्य है कि ऐसा बीर एकही बान के लगने से बिकल होके पृथ्वी पर गिर पडा॥ पुनि उठि बैठ देषि प्रभुआगे यह रामजी के दर्शन की सामर्थ्य है कि ऐसे कठिन बान के लगने सेभी उठ के बैठ गया। प्रभु को आगे देखा बालि के आगे प्रभु का आना नहीं लिखते आशय से जानागया कि रामजी चलके बालिके सन्मुख आ गए कृपाकरके दर्शन देनेके निमित्त। जो रघुनाथ जी के हृदय में दया न होतीतो मार के चले जाते सन्मुख प्रगट होने का कौन प्रयोजन रहा॥

श्यामगातशिरजटाबनाये। अरुणनयनसरचापचढाये॥

रामजी श्याम गात हैं, अर्थात् जिनका शरीर श्याम है सिरपर जटा

१। श्लोक ततो बाली ददर्शाग्रे रामं राजीव लोचनम् धनुरालंब्य वामेन हस्ते नान्येन शायकम्। इति अध्यात्मे द्वितीय सर्गे॥ टीका॥ तब बालि ने कमल के सदृश लोचन वाले राम जी को आगे देखा जो बांए हाथ में धनुष और दाहिने हाथ में बाण लिये हैं॥

बनाए हैं लालनेत्र है सर दाहिनें हाथमें है चाप चढ़ाए हैं सो वायें हाथमें है। धनुषपर वान नहीं चढ़ाए हैं धनुष चढ़ाए हैं। धनुष पर बान का लगाना संधानना कहाता है। यथा, संधान्यो प्रभु बिसिष कराला। असकहि कठिन बान संधाने। पैंचि धनुष सत सर संधाने, सर संधान कीनकरिदापा इत्यादि॥ धनुष पर रोदा का लगाना धनुष चढ़ाना कहाता है। यथा, कोदण्ड कठिन चढ़ायसिर जटजूट बांधत सोहक्यों। लेत चढ़ावत पैंचत गाढ़े, पुनः, धनुष चढ़ाइ कहातब जारिकरौं पुरछार, इत्यादि॥

पुनिपुं ॥सुफलजन्ममानाप्रभुचीन्हा॥

पुनि पुनि देखके चरन में चित्त दिया प्रभु को चीन्ह के अपने जन्मको सुफल माना। चरन में चित्त दिया दास्यभाव से आगे वह यही बर मांगैगा। यथा, जेहि जोनि जन्मौं कर्मबस तहँ रामपद अनुरागऊं। जन्म सुफल माना कि ईश्वर की प्राप्ति से जीव का जन्म सुफल होता है, सो अंत समय में हमारे आगे खड़े हैं, स्वरूप के चिन्ह भृगुचरण श्रीवत्स आदि देखकर प्रभु को चीन्हा। अथवा, प्रभु को इस प्रकार से चीन्हा कि बिना प्रभु के मुझको एकही बाण से कौन मारसक्ता है यही बात अंगदने रावण से कही है,। यथा, सोनर क्यों दसकंध, बालिबध्यो जेहि एकसर॥

हृदयप्रीतिमुखबचनकठोरा। बोलाचितैरामकीओरा॥

हृदय में प्रीति है मुख से कठोर बचन बोला रामजी की ओर देख के मुख से कठोर बचन बोलने का भाव, बालि को बल का अभिमान रहा सो नाश भया अब बुद्धि का अभिमान है, कि मेरे प्रश्न का उत्तर रामजी न देसकेंगे सो रामजी ने जवाब देके बालि

को निरुत्तर किया। प्रमाण, बंधु बधूरत कहिकियो, बचन निरुत्तर बालि ॥ इति दोहावली ग्रंथे ॥ रामजी की ओर चितै के बोलने का भाव, बालि सन्मुख होके रामजी को निर्भय कठोर बचन कहता है॥

धर्महेतु अवतरेउ गोसाईं। मारेहु मोहि व्याधकी नाईं ॥

हे[1] गोसाईं आप ने धर्म के वास्ते अवतार लिया है, और मुझ को व्याध की नाईं अर्थात् छिपकर मारा इस में आप को किस धर्म का लाभ भया॥ गोसाईं कहने का भाव, । गो, कहे पृथ्वी के पति हौ उसके भार उतारने के वास्ते आप नेअवतार लिया सो यह भारी अधर्म करके आपही पृथ्वीके भारभए अथवा पृथ्वी के स्वामी क्षत्री है सो क्षत्री होकर आप ने मुझको व्याध की नाईं मारा यह क्षत्री का धर्म नहीं है। अथवा तुम[2] पृथ्वी के स्वामी हौ तदपि पृथ्वी अना-

क्यों कि अधर्मी राजा के रहते पृथ्वी सनाथ नहीं होती ॥

सुग्रीव पियारा। अवगुन कवन नाथ मोहि मारा॥

मै बैरीहूं सुग्रीव प्यारा है हे नाथ किस अवगुन से मुझको मारा। यह सब बातें कहके बालि ने रामजी को अधर्मी बनाया कि धर्म के हेतु आपने अवतार लिया और मुझ को छिपके मारा यह अधर्म है आपने समदरसी होके मुझ को बैरी वो सुग्रीव को प्यारा समझा यह अधर्म है और बिना अवगुन मारना यह अधर्म है। अन्य के बैर से अन्य को मारना यह अधर्म है॥

१। श्लोक धर्मिष्ठ इति लोके स्मिन् कथ्य से रघुनन्दन वानरं व्याध वद्धत्वा धर्मम्क लप्स्य सेवद ॥ इति अध्यात्मे द्वितीय सर्गे ॥ १ ॥ टीका॥ हे रघुनन्दन इस लोक में आप धर्मिष्ठ कहे जाते हैं वानर को व्याध की नाईं मार के कहिए आप क्या धर्म पावोगे ॥

२। श्लोक त्वयानाथेन काकुत्स्थ न सनाथा वसुन्धरा प्रमदा शील सम्पूर्णा पत्येवच्च विधर्मणां। इति वाल्मीकीये सप्तदश सर्गे ॥ २ ॥ टीका ॥ हे राम तुम्हारे नाथ होनेसे पृथ्वी सनाथ नहीं है जैसे अधर्मी पति के होने से शीलवती स्त्री सनाथ नहीं होती ॥

अनुजवधू भगिनी सुत नारी। सुनु शठ कन्या सम ये चारी।

हे संठ सुन छोटे भाई की स्त्री, बहिन, पुत्र बधू और कन्या ये चारों सम है। प्रथम अनुज बधू कहने का भाव, रामजी बालि को आशय से जनावते हैं कि तू छोटे भाई की स्त्री में रत है॥

इन्हहिं कुदृष्टि बिलोकै जोई। ताहि वधे कुछु पाप न होई॥

इन को जो कोई कुदृष्टि से देखता है तिसको मारने से कुछ पाप नहीं होता। तू तो छोटे भाई की स्त्री को ग्रहन किये है तेरे वध से हम को पाप नहीं है ने मारने से पाप है॥ पापी को मारना हमारा धर्म इसीसे तुझको मारा॥

तोहि अतिशय अभिमाना। नारि

हे मूढ़ तुझ को अतिसय अभिमान है कि नारी का सिखावना कान नहीं करता अर्थात् नहीं सुनता। इस कहने से रामजी की सर्वज्ञता सूचित भई कि उसकी नारि नें घरमें सिखावन दिया सो बात राम जी ने यहीं जान लिई। प्रश्न नारि सिषावन "किये" न काना ऐसी

१। श्लोक दुहिता भगिनी भ्रातुर्भार्या चैव तथाऽस्नुषा समायो रमते तासा मेकां मपि विमूढ धीःपातकी सतु विज्ञेयः सवध्यो राज भिःसदा। इति अध्यात्मे द्वितीय सर्गे॥ टीका॥ लडकी भहिन भाई की स्त्री और पतोहू ये समान हैं जो मूढ बुद्धि वाला इन मेंसे एक के साथ भी रमण करे उसको पापी जानना चाहिये वह सदा राजाओं से वध्य है अर्थात् मारे जाने के योग्य है॥

१। श्लोक अदण्डयान् दण्डयन् राजा दण्डयां श्चैवा प्यदण्डयन् अयशो महदा प्नोति नरकंचैव गच्छति इति मनुः॥ १॥ टीका॥ जो राजा निर अपराधियों को दण्ड देवे और अपराधियों को दण्ड नदेवे वह बडे अयश को प्राप्त होता है और नर्क को जाता है॥

२। श्लोक धर्मस्य गोप्ता लोके स्मिन्श्चरामि स शरासनः अधर्म कारिणं हत्वा सद्धर्मं पालयाम्य हम्॥ इति अध्यात्मे द्वितीय सर्गे॥ टीका॥ इस लोक में हम धर्म के पालन करने वाले धनुर्धारी होकर घूमते हैं अधर्मी को मारकर धर्मात्मा की रक्षा करते हैं

भूत काल की क्रिया कहना चाहिये। "करसि न काना" यह वर्तमान काल की क्रिया है सो न चाहिये क्योंकि अब वर्तमान काल नहीं है भूत काल है। उत्तर वर्तमान के समीप भूत भविष्य वर्तमानही के तुल्य हैं। प्रमाण, वर्तमान सामीप्ये वर्तमान्वद्वा। इति कौमुदी ग्रंथे॥

ममभुजबलआश्रिततेहिजानी।माराचहसिअधमअभिमानी

हे अधम अभिमानी हमारे भुज बल का आश्रित जानके तिसको मारा चाहता है। तेहि जानी कहने का भाव, तेरी नारि ने तुझको सिखावन दिया कि सुग्रीव रामजी के भुजबल का आश्रित है। यथा, सुनु पति जिन्है मिले सुग्रीवां, ते दोउ बंधु तेज बल सीवां। यह जानने पर भी तूने न माना हमारे आश्रित के मारने की इच्छा किई। नारि का सिखावन न मानने से मूढ अभिमानी कहा यथा, मूढ तोहि अतिसय अभिमाना, नारि सिषावन करसि न काना॥ भक्त के मारने से अधम अभिमानी कहा यथा, मम भुज बल आश्रित तेहि जानी, माराचहासि अधम अभिमानी॥ अधम अभिमानी कहने का भाव, अधम अभिमानियों के मारने के वास्ते और धर्म की रक्षा के लिए हमारा अवतार है यथा, जबजब होइ धर्मके हानी, बाढहिं असुर अधम अभिमानी, तबतब प्रभु धरि विविध शरीरा, हरहिं कृपा निधि सज्जन पीरा, तुझ अधम अभिमानी को मार के हमने धर्म की रक्षा और अपने भक्त की पीड़ा हरण किई॥ तात्पर्य उत्तमो की शिक्षा न मानना मूढता है भक्त का मारना अधमताहै प्रश्न, धर्म हेतु अवतरेउ गोसाईं, मारेहु मोहि व्याधकी नाईं, छिपके मारना अधर्म है सो अधर्म आपने किया। उत्तर अनुज बधू भगिनी सुत नारी, सुनु सठ कन्या समये चारी। इन्हहिं कुदृष्टि बिलोकय जोई, ताहिबधे कछु पाप न होई। अधर्मी के मारने से पाप

नहीं है धर्म है ॥ प्रश्न, मे बैरी सुग्रीव पियारा उत्तर, मम भुज बल आश्रित तेहि जानी, मारा चहसि अधम अभिमानी । तूने हमारे भक्त को मारना चाहा इसी से तू हमारा बैरी है। यथा, मानत सुख सेवक सेवकाई, सेवक बैर बैर अधिकाई। सुग्रीव हमारा सेवक है इसी से हमको प्यारा है । यथा, मोहि सेवक सम प्रिय कोउनाई । प्रश्न, अवगुन कवन नाथ मोहि मारा, उत्तर एक अबगुन अनुज बधू से रत दूसरा अवगुन मेरे आश्रित को मारना ॥

॥ दोहा ॥

सुनहु राम स्वामी सन । चलन चातुरी मोरि ।
प्रभु अजहूं मैं पापी । अंत काल गति तोरि ॥१॥

हे राम सुनो स्वामी से मेरी चातुरी नहीं चल सक्ती । हे प्रभु अंत काल में तुम्हारी गति अर्थात् शरण प्राप्ति भई तो मैं अब भी पापी हूं । तात्पर्य तुम्हारे शरण होतेही सम्पूर्ण पाप नाश होते हैं । यथा, सन्मुख होई जीव मोहि जबहीं, कोटि जन्म अघ नासहिं तबही । तब मैं पातकी किस तरह से हूं ।

सुनतरामअतिकोमलबानी।बालिसीसपरस्योनिजपानी ।

रामजीने अति कोमल बानी सुन्ते ही बालि के सिर पर अपना हाथ फेर दिया । बालि ने दीन होकर कहा की मुझको अन्त में तुम्हारी गति प्राप्त भई क्या अब भी मैं पापी हूं । यह अति कोमल बानी है ॥ बालि के माथे पर हाथ फेरा और कृपा कि । जब अपने भक्त के माथे पर हाथ फेरते हैं तब हाथ का विशेषण कमल रहता है वह अति कृपा का सूचक है । यथा, सिर परसे प्रभु निज कर कंजा।

१। श्लोक प्रतिवक्तुं प्रकृष्टे हिनाप कृष्टस्तु शक्नुयात् । इति वाल्मीकीये अष्टादश सर्गे टीका उत्तम पुरुष को उत्तर देनेके लिये नीच आदमी समर्थ न होगा ॥

कर सरोज सिर परस्यो कृपासिन्धु रघुवीर। परसा सीस सरोरुह पानी। कर सरोज प्रभु मम सिर धरेऊ, पुनः कबहुं सो कर सरोज रघुनायक ध-रिहौ नाथ सीस मेरे, जेहि कर अभय किये जन आरत वारेक बिबस नाम टेरे, जेहि कर कमल कठोर संभु धनु भंजि जनक संसय मेट्यो। जेहि कर कमल उठाय बंधु जिमि परम प्रीति केवट भेट्यो। जेहि कर क-मल कृपाल गीध कहँ पिंडोदक दै धाम दियो, जेहि कर बालि बिदारि दास हित कपि कुल पति सुग्रीव कियो, आयोसरन सभीत विभीषण॥ जेहि कर कमल तिलक कीन्हो, जेहि कर गहि सर चाप असुर हति अभय बांह देवन्हि दीन्हो, सीतल सुषद छांह जेहिं करकी मेटति पाप ताप माया, निसि वासर तेंहिकर सरोज की चाहत तुलसि दास छाया॥ इति विनय पत्रिका ग्रंथे॥ भजन १३८॥ इत्यादि, बालिपर, सामान्य कृपा भई है इसीसे हाथ काविशेषण कमल नहीं है॥ सुग्रीव के ऊपर हाथ फेरा देहकी पीरा दूर करनेके वास्ते। इसीसे वहां भी हाथ का विशेषण कमल नहीं है। यथा, कर परसा सुग्रीव सरीरा॥

अचलकरौंतनराषहुप्राना। बालिकहासुनुकृपानिधाना॥

हम तुम्हारे तनको अचल करते हैं तुम प्राण रक्खो अर्थात् जीने की इच्छा करो तब बालिने कहा कि हे कृपानिधान सुनो। सुनु शब्द एक बहन छंदहेतु है अचल करौं तन कहने का भाव बालि ने बारं बार कहा कि आपने मुझको मारा यथा,मारेउ मोहि व्याध की नाईं। अवगुन कवन नाथ मोहि मारा। तब रामजी ने कहा कि हम ने तुम्हारे तनको मारा है सो तुम्हारा तन अचल किये देते हैं। राषहु प्राना कहने का भाव, बालि के प्रान न रखने की प्रतिज्ञा रामजी की है। यथा, ब्रह्म रुद्र सरनागत, गए न उबरिहि प्रान, तब रामजी प्रति

से ... पने मान रखने को कहे तो
निहोरे अपनी प्रतिज्ञा छोड़ें। इसीसे मान का रखना बालि के आ
। कृपा निधान कहने का भ
... पर ... और मेरे नि
छोड़े

कवित्त

जन्म जन्म मुनि जतन करहिं अभ्यास ... हैं,
कहि आता नाम ऐसा दुर्लभ है
के वास्ते यत्न नहीं करते क्योंकि,
अंतमें नामही नहीं कहि आता तब रूपकी
में राम, कहने का भाव, अंत में राम, कहने से
जाकरनाम मरत मुखआवा, अधमौमुक्ति होइ श्रुति गावा

जिनके नाम के बलसे महा
बराबर और अविनाशिनी गति देते हैं। इसीसे शंकर कहा। अवि
और

नाश होती है, यथा, जे ज्ञानमानविमत्त तव भवहरणि भक्ति न आ
दरी, तेपाइ सुर दुर्लभ पदादपि पतत हम देषत हरी। तैसी मुक्ति शिव
जी नहीं देते अविनाशिनी मुक्ति देते हैं ॥ मुनिलोग अंतमें राम
कहि के मुक्तिकी प्राप्ति चाहते हैं। महादेवजी अंतमें राम सुनाके
मुक्त करते हैं इससे यह जनाए कि अंत में राम नाम कहने से
और सुनने से दोनो प्रकार से मुक्ति होती है, ...

हि बनावा ॥ सोइ प्रभु मेरे नेत्रों के विषय में आए अर्थात् नेत्रों के सन्मुख प्राप्त भए। अस लोचन गोचर आवा, कहने का भाव मुनि लोग मे और काशी वासियों से मैं लाभ में अधि ... ों को अंत में राम नाम प्राप्ति ... यथा अंत रामकहि आवत नाहीं । काशी वासियों को राम नाम की प्राप्ति है रूप की प्राप्ति नहीं है। मुझको इस समय में दोनो प्राप्त हैं ॥ यह सुनिके रामजी न बोले अर्थात् निरुत्तर भए ॥

छंद

सो नयन गोचर जासुगुननितनेति कहि श्रुति गावहीं
जिति पवन मन गोनिरस करि मुनि ध्यान कबहुक पावहीं

सो प्रभु मेरे नयन के विषय में प्राप्त भए जिसके गुन श्रुतियां नेति २ कहि के नित कहे निरन्तर गाती हैं कि जो हम कहतीं हैं सो इतना हीं नहीं है बहुत है। पवन मन को जीत के इन्द्रियां को निरस करके मुनिलोग ध्यान में कभी तुम को पाते हैं। प्रान अपान उदान व्यान समान ये पांचो पवनो को जीतते हैं ब्रह्मांड में चढ़ाते हैं मनको जीतके एकाग्र करतेहैं इंद्रियों को रूपरस गंध शब्द स्पर्श पांचों विषयों से रहित करते हैं॥ तात्पर्य प्रथम पवन को जीतते हैं तब मन को जीतते हैं जब मन को जीतते हैं तब इन्द्रियां विषय रस से रहित होती हैं। जब पवन मन इन्द्री सब को जीतते हैं तब ध्यान लगता है॥ तात्पर्य प्रभु का नाम मुनियों को दुर्लभ है जिस के गुण वेदों को दुर्लभ है जिस का ध्यान योगियों को दुर्लभ है सो प्रभु मुझ को

साक्षात प्राप्त हैं ॥ पवन मन दोनों को एक संग जीतने का भाव दोनों एक ही साथ जीते जाते हैं ॥

मोहि जानि अति अभिमान बस प्रभु कहेउ राखु सरीर ही
अस कवन सठ हठि काटि सुरतरु बारि करहि बबूर ही ॥

मुझ को अभिमान के बस जानकर हे प्रभु आप ने शरीर रखने को [illegible] सठ है कि हठ करके कल्पबृक्ष को काट के [illegible] करेगा अर्थात कल्पबृक्ष से बबूर रूंधेगा । प्रथम राम जी ने बालिको अति अभिमानी कहा यथा, मूढ़ तोहि अतिसय अभिमाना इसपर बालि कहता है कि मुझको अति अभिमानी [illegible] को कहते हो । प्रभु कहने का भाव, आप [illegible] र्थ हो मेरे श[illegible] रख सक्ते हो । अत म भ[illegible] कल्पबृक्ष के सम हैं क्यों कि भगवान चारो फल के दाता हैं उन से तनकी अचलता लेना यही कल्पबृक्ष से बबूर का रूंधना है । सठ कहने का भाव कल्पबृक्ष से बबूर का रूंधना सठता है । तन को बबूर कहने का भाव, तन बबूर के समान दुःख दाता है कर्म रूपी कांटों से भरा है ॥ शंका, बालि मुक्ति नही चाहता जन्म जन्म में अनुराग चाहता है तो इसी तन में अनुराग करै यह तन क्यों

१ । श्लोक पवनो बध्यते येन मनस्तेनैव बध्यते । मनस्तु बध्यते येन पवनस्तेन बध्यते ॥ टीका जिससे पवन बांधा जाता है उसी से मन बांधाजाता है और जिससे मन बांधा जाता है उसी से पवन बांधाजाता है ॥

१ । श्लोक दुग्धांबुवत्सम्मिलितावुभौ तौ तुल्यक्रियौ मानस मारुतौ हि, यतो मरुत्तत्र मनःप्रवृत्तिः यतोमनस्तत्र मरुत्प्रवृत्तिः । इति हठप्रदीपे ॥ टीका मन और पवन दोनो दूध और पानी की नाईं मिले हुवे हैं दोनो का कार्य एकही है क्योंकि, जहां मन है तहां पवन की पहुंच है और जहां पवन है तहां मन की पहुंच है ॥

नहीं रखता । समाधान, राम जीने बालि के बध की प्रतिज्ञा की है इसीसे ॥ इच्छा नहीं करता

थ करि करुणा बिलोकहु देहु जोबर माँगऊं

जेहि जोनि

नाथ अब करुणा कर ... मैं जोबर मां०

जोनि में जन्मळूं तहां राम पद में अनुराग करूं । अब करुणा कर के बिलोकहु कहने का भाव, आप नें मुझे शरीर रखने ... पाया गया कि मुझ पर आप की कृपा दृष्टि नहीं है अब कृपा दृष्टि करो ॥ दूसरा भाव, मैं जो आप के आश्रित से लड़ा और आप को दुर्वचन कहा सो अपराध क्षमा करो ॥ तीसरा भाव, बालि ने रामजी के नेत्र अरुन देखा यथा, अरुन नयन सर चाप चढ़ाए, इससे जाना कि रामजी मुझपर क्रोधित हैं तब कहता है कि नाथ अब करुणा करके देखो अर्थात् मुझपर क्रोध न करो ॥ जो बर मागूं सो देवो कहने का भाव, जो देते हो सो न देवो अर्थात मेरे तन को अचल न करो ॥ कृपा दृष्टि कराके तब राम पद में अनुराग मांगता है । तात्पर्य बिना राम कृपा राम पद में अनुराग नहीं होता ॥

हे प्रभु हे कल्यान प्रद अर्थात् कल्यान के दाता यह पुत्रविशेषतः नीति

हे सुर नर नाह

१ । श्लोक अजानता मयाकिंचि दुरुक्तं तच्छन्तु मर्हसि । इति अध्यात्मे द्वितीय सर्गे ॥ टीका अज्ञानता से मैने जो कुछ कहा उस को आप क्षमा करने के योग्य हो ॥

अंगद को अपना दास कीजिये॥ अंगद के विनय और बलकी बड़ाई करने का भाव,यह बालक आप का कार्य करने के योग्य है। कल्यान प्रद कहने का भाव इस बालक का कल्यान करो। बांह गह लीजिये अर्थात् मैं आप को सौंपताहूं सुर नर नाह हौ अर्थात् सुर नर सबकी रक्षा करते हौ इस बालक की भी रक्षा करो। सुर नर असुर तीन हैं रामजी सुर नर की रक्षा करते हैं असुरन को मारते हैं इसीसे असुर नहीं कहा। जहां सुर नर आपकी सेवा करते हैं तहां अंगद क्या है मेरे बर मागने से अंगद को अपना दास करिये अर्थात् अपने संग सेवा में रखिये। सुग्रीव के संग में न रहे बालि का यह अभिप्राय है। इस प्रसंग में बालि के अनेक गुण कहे हैं यथा, सुनत बालि क्रोधातुर धावा, यह बालि की शूरता है (१) भिरे उभौ बाली अति तरजा,मुठिका मारि महा धुनि गरजा, यह युद्ध की निपुणता है [२] मुष्टि प्रहार बज्र सम लागा,यह बल है [३] पुनि उठि बैठ देषि प्रभु आगे,यह धैर्य है [४] पुनि पुनि चितै चरन चित दीन्हा, यह भक्ति है [५] सुफल जन्म माना प्रभु चीन्हा, यह ज्ञान है [६] धर्म हेतु अवतरेउ गोसाईं, यहां से सुनत राम अति कोमल बानी, यहां तक बचन की चतुरता है ॥७॥ जन्म जन्म मुनि जतन कराहीं यहां से अस कौन सठ हठि काटि सुर तरु बारि करहिं बबूरही, यहां तक पंडिताई है ॥८॥ अब नाथ करि करुणा बिलोकहु, यहां से गहि बांह सुर नर नाह आपन दास अंगद कीजिये। यहां तक बुद्धिहै ॥९॥ राम चरन दृढ़ प्रीति करि बालि कीन्ह तनु त्याग, यह सावधानता है ॥१०॥ राम बालि निज धाम पठावा यह बालि का भाग्य है ॥११॥

१। श्लोक ममतुल्यबलेबाले अंगदेत्वं दयाङ्कुरु ॥ इति अध्यात्मे द्वितीय सर्गे ॥ टीका मेरे तुल्य बल बाले बालक अंगद पर आप दया करो॥

नगर लोग सब व्याकुल धावा यह प्रजा पालकता है ॥१२॥

दोहा ।

द प्री करि । बालिकीन्ह तन त्याग ॥

सुमनमालजिमि कंठते । गिरत न जानै नाग ॥१०॥

रामजी के चरन में दृढ़ प्रीति करके बालिने तन को त्याग किया जैसे फूलकी माला कंठसे गिरते हाथी न जाने तैसे तन त्याग का दुःख बालिने न जाना ॥ दृढ़ प्रीति कहने का भाव, जब सबकी ममता त्याग के राम, चरन में चित्त लगे तब प्रीति दृढ़ होती है। बालि नें प्रथम राम चरन में अनुराग मांगा पीछे पुत्र सौंपा पुत्र के स्नेह में चित्त की वृत्ति गई, तहां से खींच कर फिर राम, चरन में लगाया यही दृढ़ प्रीति करना है। यथा, जननीजनक बंन्धु सुत दारा, तन धन भवन सुहृद परिवारा, सबकै ममता ताग बटोरी, मम पद मनहिं बांधिबर डोरी । राम, चरन में प्रीति किये से जन्म मरन, का क्लेश नहीं व्यापता इसी से बालि को मरने का दुःख न व्यापा । देह, सुमन माल है, जीव, हाथी है ॥ गुसाईंजी रामजी, के साथ बालि सुग्रीव का व्यवहार समान वर्णन करते हैं ॥ यथा, वहां, जब सुग्रीव राम,कहँ देखा, यहां पुनि उठिबैठ देखि प्रभुआगे ॥१॥

वहांअतिशयजन्मधन्यकरिलेषा, यहां सफलजन्ममानाप्रभुचीन्हा॥२॥

वहां जोरीप्रीति दृढाय, यहां राम, चरन दृढ़ प्रीतिकरि ॥ ३ ॥

वहां वारवारनावै पदसीसा,यहां पुनिपुनिचितै चरनचितदीन्हा ॥४॥

वहांप्रभुहिजानिमनहरषकपीसा यहांसुफलजन्ममानाप्रभुचीन्हा ॥५॥

वहां अवप्रभु कृपाकरहु यहिभाँती, सबतजिभजन करौं दिनराती यहां अब नाथ करि करुणा बिलोकहु देहुजो बर मागऊं, जेहिजोनि

जन्मा करमबस तहं राम, पद अनुरागऊं ॥६॥ वहां सबप्रकार करिहौं सेवकाई, यहां गहिबांह सुरनरनाह आपन दास अंगद कीजिये ॥७॥

सुग्रीव रामजी, की शरणभये यहां बालि शरण भेया अंतकाल ॥ ८ ॥

इसी से रामजी, ने दोनो भाइयोंपर समान व्यवहार किये । यथा, वहां कर परसा सुग्रीव सरीरा यहां बालि शीशपरसेउ निजपानी॥१॥

सुनिसेवकदुषदीन अतिक ॥२॥

वहां जेहिसायक मारा मैं बाली, तेहि नृप कह काली ॥३॥

यहां सुनु सुग्रीवमारिहौं बालि एकहीबान, दोनो के अर्थ रामजी ने, प्रतिज्ञा छोड़ी यथा, वहां भयदिषाय लैआवहु तात सषासुग्रीव यहां अचलकरौं तन राषहु प्राना ॥ ४ ॥ रामजी, ने दोनो को राजदिये राजदीन्ह सुग्रीव कहं अंगद कहं युवराज ॥५॥ दोनो को धाम दिये बालि को मारकर सुग्रीव को किष्किन्धा का धाम दिये बालि को निज धाम दिया यथा, राम बालि निज धाम पठावा ॥६॥ सम दर सी रघुनाथ यह बचन यहां चरितार्थ भया ॥

राम बालि निज धाम पठावा। नगर लोग सब व्याकुल धावा।

[illegible]

व्याकुल होके धाए । बालि ने रामजी का दर्शन किया और राम बान से मारा गया । राम चरण में दृढ़ प्रीति करके तन त्याग

४ । श्लोक बाली रघूत्तम शराभिहतो विमृष्टो रामेण शीतलकरेण सुखाकरेण सद्यो विमुच्य कपिदेह मनन्यलभ्यं प्राप्तः परं परमहंसगणै र्दुरापम् । इति अध्यात्मे द्वितीयसर्गे ॥ ४ ॥ टीका रामजी के बाण से माराहुवा बालि और सुख के खानि रामजी के शीतल हाथ माथे पर फेर ने से तत्काल बंदर की देह छोडकर परमहंस गणो को दुर्लभ अद्वितीय जो परमपद है उसको प्राप्तहुवा ॥



इसीसे निज धाम कहे वैकुंठ कोगया । पुनि अध्यात्म के द्वितिय सर्ग में लिखते हैं कि बालि इन्द्र में प्राप्त भया ॥ इसीसे गुसाँई जी निज धाम लिखते हैं निज धाम कहने से दोनो अर्थ होता है ॥

  हु सम्हा

तारा नाना विधि से विलाप करती है केस छूटे हैं देह का सम्हार नहीं है। वाल्मीकीय में एक सर्ग में तारा का विलाप लिखा है यहां गुसांई जी संक्षेप से एक चरण में लिखते हैं ॥ शोक में ज्ञान धिरज लज्जा तीनों नही रहते । यथा शोक विकल दोउ राज समाजा । रहा न ज्ञान न धीरज लाजा । तारा के ज्ञान न रहा इसी से नाना विधि से बिलाम करती है । धीरज न रहा इसी से देहकी सम्हार न रही लाज न रही इसी से केस छूटे हैं ॥

तारा बिकल देषि रघुराया । दीन्ह ज्ञान हरि लीन्ही माया ।

रघुनाथजी ने तारा को बिकल देखकर ज्ञान दिया और माया हरलिई । बिकल देषि कहने का भाव, रामजी, कृपालु हैं, स्त्री की बिकलता देख के कृपा किई । ज्ञान से शोक जाता है इसीसे ज्ञान दिया प्रथम ज्ञान होता है तब माया जाती है तब भक्ति होती है । यथा होय विवेक मोह भ्रम भागा तब रघुबीर चरन अनुरागा । विवेक होना ज्ञान है मोह भ्रम का भागना माया का जाना है राम जी के चरण में अनुराग होना भक्ति का होना है । रामजी ने तारा को ज्ञान दिया तब माया गई तब उसने भक्ति मागी है ॥

तअतिअधमसरीरा।

१ । त्यक्त्वा तद्वानरं देहं ममरेन्द्रो अभवत्क्षणात् ॥ इति अध्यात्मे द्वितीय सर्गे ॥ टीका उस बानर देह को छोड कर उसी क्षण इन्द्र होगया ॥

पृथ्वी जल अग्नि आकाश पवन इन पाचोंतत्वों से अति अधम शरीर रचित है शरीर की रचना इसीक्रम से होती है जैसा चौपाई में लिखा है । प्रथम माता का रज पृथ्वी है पिता का वीर्य जल है तब पिंड होना अग्नि है पोल होना आकाश है प्राण आना वायु है यह भागवत के तृतीय स्कंध में लिखा है । अति अधम शरीर के हनेका भाव, सहज स्वरूप उत्तम है कारण शरीर मध्यम है लिंग शरीर अधम है पंच भौतिक शरीर अति अधम है जो हाड मास रुधिर त्वचा से युक्त है ॥

हि

सोतन प्रगट तेरेआगे सोता है और जीव नित्य है किस के निमित्त तुम रोती हो ॥ प्रगट कहनेका भाव, तन और जीव दो है जीव प्रगट नहीं है तन प्रगट है तिस के वास्ते क्यों रोती हो और

१ श्लोक किं भीरु शोच्य सिन्यथं शोकस्या विषयं पतिं पतिस्तवायं देहोवाजीवोवा वद तत्वतः ॥ १ ॥ पञ्चात्मको जडोदेहस्त्वं मांसरुधिरास्थिमान् काल कर्म गुणोत्पन्नः सों प्यास्तेद्यापितेपुरः ॥ २ ॥ मन्यसेजीवमात्मानं जीवस्तर्हिनिरामयः नजायते न म्रियतेन तिष्ठति न गच्छति ॥ ३ ॥ नस्त्रीपुमान् वा षंडोवाजीवः सर्वगतोऽव्ययः एक एवाद्वितीयोयमाकाश वदलेपकः ॥ ४ ॥ नित्योज्ञानमयः शुद्धः सकथं शोकमर्हति ॥ ५ ॥ इति अध्यात्मे तृतीयसर्गे ॥ टीका ॥ हे भयभीत स्त्री शोक न करने के योग्य पति को वृथा क्यों सोचती हो ठीककहो तुम्हारा पति यह देहहै या जीव है ॥ १ ॥ यहजड देह पञ्चतत्वात्मक त्वचामान्स रुधिर और हड्डीवाला काल कर्म गुण से उत्पन्न हुवा सोभी शरीर तुम्हारे सन्मुख है ॥ २ ॥ यदि जीव को तू अपना पति मानती है तो जीव अविनाशी है क्योंकि आत्मा न उत्पन्न है न मरता है न ठहरता है न चलता है ॥ ३ ॥ जीव न स्त्री है न पुरुष है न नपुंसक है किन्तु जीव सर्व व्यापी और अविनाशी एक ही अद्वितीय आकाश के समान निर्लेप है ॥ ४ ॥ और नित्य है ज्ञानस्वरूप है शुद्ध है सो जीव कैसे शोक करने के योग्य है ॥ ५ ॥

जीव नित्य है अर्थात् जीव का नाश नहीं है दोनो के अर्थ रोना नहीं बनता ॥

उपजाज्ञानचरनतबलागी । लीन्हेसिपरमभक्तिबरमागी

जब ज्ञान उपजा तब चरनोपर लगी अर्थात् प्रणाम किया और परम भक्ति वर मागली । तारा को उसी क्षण में ज्ञान उत्पन्न भया यह रामजी की वाणी का प्रभाव है । तारा ने ज्ञान होनेपर भक्ति मागी तात्पर्य ज्ञान का फल भक्ति है यथा जहँ लगि साधन वेद बखानी, सबकर फल हरिभगति भवानी ॥ और भक्ति के बिना ज्ञानकी शोभा नहीं है यथा, सोह न राम प्रेम बिनुज्ञानू । करण धार बिनु जिमि जल जानू । रामजी ने तारा को ज्ञान अपनी ओरसे दिया । यथा दीनज्ञान हरिलीन्ही माया । भक्ति मागे से मिली यथा, लीन्हेसि परम भक्ति बरमागी । इससे यह सूचित भया कि ज्ञान से भक्ति दुर्लभ है ॥ यथा प्रभु कहदेन सकल सुख [illegible], भगति आपनी देननकही ॥

उमादारुजोषितकीनाईं । सबहिनचावतरामगोसाईं ।

हेउमा काठकी पुतली की नाईं राम गोसाईं सबको नचाते हैं । अर्थात् रामजी की इच्छा अनुकूल सब जीव काम करते हैं । नट मरकट इव सबहि नचावत, मरकट के दृष्टान्त से जगत को चैतन्य कहा दारुजोषित के दृष्टान्त से जगत को जड़ कहा एकही को जड़ और चैतन्य कहना विरुद्ध है ॥ उत्तर, उमादारु जोषित की नाईं यह शिवजी उमासे कहते हैं । शिवजी ज्ञानी हैं ज्ञानी

१ श्लोक यथा दारुमयी योषिन्नृत्यते कुहकेच्छया, एव मीश्वरतं ज्ञाय मीहक्ष सुख दुःखयोः ॥ इति भागवते ॥ टीका जैसे नटकी इच्छासे कठपुतली नाचती है वैसे ही ईश्वर की प्रेरणा से सुख दुःखों का हेर फेर हुवा करता है ॥

के मत से जगत जड़ है इसीसे शिवजी ने जड़ का दृष्टान्त दिया और नट मरकट इव सबहि नचावत, राम खगेश वेद अस गावत। यह भुसुण्डी गरुड़ से कहते हैं भुसुण्डी उपासक हैं उपासक के मत से जगत चैतन्य है इसीसे भुसुण्डी ने चैतन्य का दृष्टान्त दिया है सबको नचाते हैं इसीसे राम कहा रमुक्रीडायाम् ॥ गोसाइं कहने का भाव कठपुतली का नचाने वाला छिपकर नचाता है रामजी गोसाइं अर्थात् सब इन्द्रियों के स्वामी हैं और अन्तर यामी रूप से सब इन्द्रियों के प्रेरक हैं। प्रेरणा करके सब को कठपुतरी की तरह से नचाते हैं ॥ यथा सारद दारु नारिसम स्वामी। राम सूत्र धर अन्तर यामी ॥

तबसुग्रीवहिआयसुदीन्हा। मृतककर्मविधिवतसबकीन्हा

जब तारा का शोक छूटगया तब रामजी ने सुग्रीव को आज्ञा दिई सुग्रीव ने बालि का सब मृतक कर्म विधिवत किया आयसुदीन्हा कहने का भाव, भाई के मरने से सुग्रीव विकल होगये। जब राम जी ने आज्ञादिई तब सुग्रीव ने मृतक कर्म किये ॥ विधिवत कहने से यह सूचित करते हैं कि सुग्रीव ने बालि की क्रिया अंगद से कराई। पिता की क्रिया पुत्र करे यही बिधि है ॥ सुनि सेवक दुःख दीन दयाला यहां से तब सुग्रीवहि आयसु दीन्हा, मृतक कर्म बिधिवत सब कीन्हा, यहांतक बालि प्रान करभंग यहप्रसंग है ॥

---

१ श्लोक भ्रातुर्ज्येष्ठस्य पुत्रेणयदुक्तं सां परायिकंकुरु सर्वं यथा न्यायं संस्काराद्दि ममाज्ञया। इति अध्यात्मे तृतीयसर्गे ॥ टीका जेठेभाई के पुत्र के द्वारा शास्त्रोक्त संस्कारादि क्रिया को मेरीआज्ञा से यथोचित् करो ॥

२ श्लोक सुग्रीवेण ततः सार्धं सोऽङ्गदः पितरं रुदन् चितामारोपयामास शोकेनाभि प्लुय तेन्द्रियः ॥ इति वाल्मीकीये पञ्चविंश सर्गे ॥ टीका सुग्रीव के साथरोते हुये उस अंगद ने शोक से बिकलेन्द्रिय होकर पिता को चितापररक्खा ॥

रामकहाअनुजहिसमुझाई । राजदेवसुग्रीवहिजाई ।

रामजं जी को समुझा के कहा कि जाय के सु

के कहने से यह सूचित भया कि राम ने अंगद के युवराज करने को कहा सो आगे स्पष्ट है । यथा राज दीन्ह सुग्रीव कहँ, अंगद कहँ युवराज । और यह समुझाय के कहा कि जो अंगद को युवराज न करेंगे तो हमारी निन्दा होगी कि बालि अपना पुत्र रामजी को सौंप गया रामजी ने उसका उपकार कुछ न किया और अंगद के बिना युवराज किये सुग्रीव अंगद का निरादर करेंगे त्रासदेंगे। युवराज पद देने से हमारा कृपा पात्र

रघुपति के चरन में माथ नाइ के रामजी की प्रेरणा से सबचले ॥ तात्पर्य बालि के मरजाने से उस समय में सब वानर बिकल हैं । जब रामजी ने सुग्रीव के राज देने की आज्ञा दी तबसब बानर चले । चरन में माथ नाने का भाव सब के इच्छा रही कि रामजी सुग्रीव को राज्य दें अंगद को युवराज करें सो सब के मन की बात भई इसीसे सबकोइ प्रसन्न हो कर रामजी के चरन में प्रणाम कर करके चले । रघुपति कहने का भाव रघुबंशी धरमात्मा और नीति से चलने बाले तिन के पति हैं जैसा धर्म है और नीति है तैसा ही रामजी ने किया यह समुझ के प्रसन्न होके चरन में माथ नाए । रघुपति कहने का दूसरा भाव । रघुबंश के पति कहें रक्षक हैं सुग्रीव को राज दे के अपने बंशकी तरह हमारी सब की रक्षा कि ॥

[illegible] ाए । पुरजन विप्र [illegible]

[illegible]जदीन्ह सुग्रीवकहं । अंगद कहं युवराज ॥११॥

लछिमनजी ने पुरजन और विप्र समाज को तुरंत बोलाया सुग्रीव को राज और अंगद को युवराज पद दिये ॥ तुरंत बोलाने का भाव, लछिमनजी को रामजी के पास सेवा के निमित्त जलदी आना है, इसीसे वहांका काम उन्हो ने जलदी किया । और तिलक की साइत भी जलदी की रही ॥

[illegible]

हे उमा जगत में रामजी के समान हित करने वाला गुरु पिता माता भाई प्रभु कोई नहीं है । इस चौपाई में दो दो अक्षर के पद हैं, यह काव्य वेदर्भी रीति कीकहाती है, जिसमें बड़े पद और बहुत समास न पड़ें ॥ रामजी को सबसे अधिक हितकारी कहा, इस का हेतु आगे कहते हैं ॥

सुरनरमुनिसबकै यहरीती । स्वारथलागि करहिंसबप्रीती ।

सुर नर मुनि सबकी यह रीति है, कि स्वारथ के निमित्त सब प्रीति करते हैं । यथा, सेवा लेत देत फल पलटे हानि लाभ अनुमाने, यह देवतों की रीति है, मुनियों की यह रीति है, कि, सेवा करा के पढ़ाते हैं, रामजी गरीव समुझ के कृपा करते हैं, सोई आगे कहते हैं ॥

बालित्रास ब्याकुलदिनराती । तनबहुब्रन चिन्ताजरछाती ।

बालि के त्रास से सुग्रीव दिन राति व्याकुल रहे तन में बहुत से

१ श्लोक नयत्प्रसादा युत भागलेश मन्येव देवागुरवोजनाः स्वयं,कर्तुं समेताः प्रभवन्ति पुंसस्तमीश्वरं त्वां शरणंप्रपद्ये ॥ इति भागवते ॥ टीका हम समझते हैं कि देवता गुरु और अन्य लोग भी इकट्ठे हो कर के स्वतः जिस के प्रसाद के दशहजार वें हिस्सेके टुकडे को भी करने के लियेसमर्थ नहींहोते है ऐसेआप प्रभुके शरण में हमप्राप्त हैं ॥

घाव रहे और चिन्ता से छाती जरती रही। रिपुसम मोहि मारिसि
अ। री। इसीसे तन में बहुत घाव रहे। इहां सापबस आवत
हीं, तदपि सभीत रहौं मनमाहीं॥ इसी चिन्ता से छाती जरती रही॥

कीन्ह कपिराऊ। अतिकृपालु रघुबीरसुभाऊ।

सो सुग्रीव को बानरों का राजा किया रघुबीर का स्वभाव, अति कृपालु है,॥ अति कृपालु कहने का भाव, रामजी ने जो सुग्रीवको कपिराय किया सो अपनी कृपालुता से। स्वारथ हेतु नहीं स्वारथ चाहते तो बालि से मित्रता करते। यथा, बलीबालि बलसालिदलि सपाकीन्ह कपिराज, तुलसी राम कृपालु को बिरद गरीब नेबाज। इति रामाज्ञा ग्रन्थे॥ रघुबीर कहने का भाव, रामजी बीर हैं, इनका क्या कर सक्ता है॥

सप्रभुपरिहरहीं। काहेन बिपतिजाल नरपरहीं।

प्रभु को जानने परभी छोड़ देते हैं· तेनर बिपति जाल में क्यों न पड़े। प्रभु कहने का भाव, जो बिपति काटने में समर्थ हैं॥

पुनि सु ई लीन्ह बोलाई। बहुप्रकार नृप नीति सि ई।

पुहि सुग्रीव को बुलाय लिया बहुत प्रकार की राजनीति सिखाई।

(१) श्लोक उत् खातान् प्रति रोपयन् कुसुमितान् चिन्वन लघून्वर्द्धयन् क्षुद्रान् कंटकिनो ब हि निरसयन् बिश्लेषयन् संहतान् अत्युच्चान्नमन् नतांथ्रसनकै रुच्चा मयम्भूतले माला कार इव प्रयोग चतुरो राजा चिरं नंदति॥ इति हनुमन्नाटके॥ टीका माली कीनाई सब काम करने में चतुर राजा उखाडे हुवों को जमाता और फूले हुवों को बटोरता छोटो कों बढाता कांटे वाले तुच्छों को बाहर निकालता इकट्ठों को अलगाता बहुत बढे हुवों को नबाता और नबे हुवे कोधीरे धीरे ऊंचा करता हुवा बहुत कालतक पृथ्वी पर आनन्द करता है॥

(१) श्लोक सत्या नृताच परुषा प्रियवादि नीच हिंसा दयालुरपिचार्थ परा वदान्या नित्य व्यया प्रचुरनित्य धना गमाच वेश्यागणेव नृप नीति रनेकरूपा॥ इति भर्तृहर नीति शतके॥ टीका राजा की नीति सच्ची झूठी कठोर मीठी बोलने वाली हिन्सा करने वाली दया करने वाली मतलबी उदार नित्य खर्चने वाली नित्य बहुत धन को लाने वाली वेश्या गण की नाई अनेक रूप की है॥

सिखाने का भाव, राज का क्षेम नीति सेहोता है। यथा, राज किरहै नीति बिनु जाने। राजनीति बहुत प्रकार की है॥ यथा, माली भानु किसान सम, नीति निपुण नरपाल। प्रजाभाग बस होहिंगे, कबहुं कबहुं कलिकाल॥ इति दोहावली ग्रंन्थे॥

कहप्रभु सुनु सुग्रीवहरीसा। पुर न जाऊं दसचारि बरीसा।

प्रभु ने कहा कि हे, सुग्रीव बांदरों के ईश हम चौदह बरस पुर में न जांयगे। यह कहने से पाया गया कि सुग्रीव ने रामजी से अपने घर चलने को कहा। हरीस कहने का भाव, तुम राजा हौ तुम्हारे घर जाना हमको उचित है, परन्तु व्रत भंग होता है। पुर कहने का भाव, निषाद से ग्राम कहा ग्रामवास नहिं उचित सुनि गुहहिभयोदुषभार, सुग्रीव से पुर कहते हैं, पुरनजाउं दसचारि विभीषण से नगर कहेंगे यथा, पिताबचन मैं नगर न आऊं यं हम ग्राम नगर पुर तीनो में नहीं जाते। दस चारि बरीसा कहने का भाव, कौशल्या से रामजी ने प्रथम चार कहके पीछे दश कहा यथा, बरषचारिदस विपिन बसि, करिपितु बचन प्रमान, आइ पायपुनि देषिहौं मनजनि करसि मलान। और निषाद से भी प्रथम चारि कहके पीछे दस कहा। यथा, बरषचारिदस बासबन मुनि वृत बेष अहार। क्योंकि, वहां व्रत के बहुत दिन नहीं बीते इसीसे अल्प काल का वाचक चारि शब्द प्रथम कहा और सुग्रीव के यहां बनवास के बहुत दिन बीते इसीसे बहुत काल वाची दस शब्द

(१) श्लोक राज्यं प्रसाधि राजेन्द्र वानराणां समृद्धि मत् दासोहंते पाद पद्मं सेवे लक्ष्मणवच्चिरं। इति अध्यात्मे पंच पंचासत् सर्गे॥ टीका हे राजेन्द्र आप सब सामिग्री युक्त बानरों के राज्य का शासन कीजिये मैं लक्ष्मण की नाई बहुत काल तक आप के चरण कमल को सेवन करूं

कहा । यथा नजाउं द ... णा के
व्रत का काल व्यतीत होगया इसीसे वहां काल का नाम न लिये पिता बचन मैं नगर न आऊं इतनाही कहा ॥

गतग्रीषम बरषारितु आई । रहिहौंनिकट सैलपर छाई ।

ग्रीषम ऋतु गतकहे व्यतीत होगई बर्षाऋतु आय गई इसीसे आप के निकट जो सैल है तिसपर हम टिकरहेंगे। निकट रहिहौं कहने का भाव, तुम हमको अपने घर चलनेको कहते हौ हम आप के समीपहीं टिकेंगे। गतग्रीषम कहने का भाव, ग्रीषम ऋतु में सीताजी के खोजने का उपाय वनता रहा सो गत होगई बर्षाऋतु आई अर्थात् अब खोजने का समय न रहा समय में सब काम करना चाहिये । यथा, समरथ कोउ न रामसे तीयहरन अपराध, समयहि साधे काजसब समय सराहहिं साधु ॥ इति दोहावली ग्रंथे ॥ रामजी ने बिचार किया कि बरषाऋतु में हमारा काम करने में सुग्रीव को कष्ट होगा इसीसे रामजी आपही कहने लगे कि ग्रीषम गत होगई बरषा आगई तात्पर्य्य बरषा के वाद हमारा काम करना ॥

अंगदसहित करौ तुमराजू । संततहृदय धरेहु ममकाजू ।

तुम अंगद के सहित राज करो और हमारा कार्य निरंतर हृदय में धारण करना अर्थात् राज सुख में भुलाय न देना । अंगद सहित राजकरो अर्थात् अंगद का निरादर नकरना । संतत कहने काभाव

(१) श्लोक अयात्रां चैव दृष्ट्वे मां मार्गांश्च भृश दुर्गमान् प्रणते चैव सुग्रीवे न मया किंचिदीरिबम् ॥ इति वल्मीकीय अष्ट विंश सर्गे, श्री राम बचनं लक्ष्मण प्रति ॥ टीका इस वर्षा ऋतु को यात्रा योग्य नदेखकर मार्गों को बहुत दुर्गम देखकर शरणागत सुग्रीव से हमने कुछ नही कहा ॥

निरंतर हृदय में रखने से काम भूल नहीं सक्ता ॥ राम कहा अनु-
जहिं समुझाई, यहां से और अंगद सहित करौ तुम राजू यहां तक
कपि के तिलक का प्रसंग है

सुग्री

फिर के भवन में आए तब राम जी जायकर प्रवर्षन
पहाड पर टिके। रहिहों निकट सैल पर छाई, ऐसा कहने से पहाड
का नाम न खुला कि किस पहाड पर टिकें गे अब उस का नाम खोल
दिया कि प्रवर्षन पहाड पर टिके यह किष्किंधा के समीप है

रगुहा, राखेउ रुचिर बनाइ।
कछुक दिन, बास करहिंगे आइ ॥ २॥

पहिले ही देवता लोगों ने गिरि की गुहा सुन्दर बनाय रक्खी है
कि रामजी कृपा के निधि हैं आय कर कुछ दिन वास करें गे
प्रथमहिं कहने का भाव, चित्रकूट में रामजी के आने पर देवता ओंने
कुटी बनाई यहां रामजी के आने के प्रथमहीं गुहा बनाई देवता ओं
करके बनाई गई है, इसी से गुहा कहते हैं यथा, देवखात बिले गुहा
इत्यमरः। कृपा निधि कहने का भाव, हम पर कृपा करके गुहा में
रहकर हमारा परिश्रम सफल करेंगे ॥

सुन्दरबनकुसुमितअतिसोभा, गुंजतमधुपनिकरमधुलोभा।

सुन्दर वन कुसुमित अर्थात् फूला है तिसकी अति शोभा है मक

रन्द के लोभ से भ्रमर समूह गुंजते हैं। इसी से मधुप कहा मधु पीते हैं, अति सोभा कहने का भाव, बनकी शोभा है कुसुमित होने से शोभा है। बाल्मीकीय में बन की बहुत सुन्दरता वर्णन किई सुन्दरता गुसाइं जी सुन्दर बन कह के सूचित करते हैं॥

कंद मूल फल पत्र सुहाए। भए बहुत जबते प्रभु आए॥

सुन्दर कन्द मूल फल पत्र जब से प्रभु आए तब से बहुत भए क्योंकि ये सब प्रभु के काम के हैं। कंद मूल फल पत्र चारो सुहाए कहे सुन्दर हैं सुहाए चारो का विशेषण है। भए बहुत कहने का भाव, आगे भि रहे जबसे प्रभु आए तब से बहुत भए। यहां तक अस्थावर की सेवा कह के आगे जंगम की सेवा कहते हैं। यथा, मधुकर खग मृगतनु धरि देवा इत्यादि॥

देषि मनोहर सैल अनूपा। रहे तहँ अनुज सहित सुरभूपा।

मनोहर कहे सुन्दर अनूप पर्वत देख के देवता ओं के राजा श्री रामजी लछिमन जी के सहित तहां रहे॥ वहपर्वत अनूप कहे उपमा रहित है अथवा उस पर्वत में बहुत जल है जिस स्थान में बहुत जल होता है उस को अनूप कहते है। इसीसे उस पर्वत का नाम प्रवर्षन है॥ प्रथम बन की शोभा कहके पीछे मनोहर सैल का देखना कहते हैं इस से यह जनाया कि यह बन पहाड के ऊपर है। सुरभूपा कहने का भाव, देवताओं के अंश वानर हैं सोई वहां रामजी की प्रजा हैं तिन की रक्षा करते हैं। खग मृग तन धर के देवता सेवा करते हैं और देवताओं ने अपने रूप से आके गुहा बनाई है इसी से यहां सुर भूप कहते हैं॥

मधुकर खग मृग तनु धरि देवा। करहिं सिद्ध मुनि प्रभु कै सेवा।

देवता सिद्ध मुनि ये सब भ्रमर पक्षी और मृग का रूपधारण कर के प्रभु की सेवा करते हैं रूपान्तर से इन सब के आने का भाव, इन्हों ने विचार किया कि रामजी हमसे साक्षात रूप से सेवा न करावें गे इसीसे सेवा के अर्थ मधुकर खग मृग तन धर के आए। भ्रमर गुंजते हैं पक्षी बोलते हैं मृग अपने नेत्रों की शोभा दिखाते हैं यही इनकी सेवा है। यथा मृग बिलोकि षग बोलि सुबानी, सेवहिं सकल राम प्रिय जानी। इति अयोध्या काण्डे ॥ चित्र कूट में देवता लोग कुटी बनाने के अर्थ कोल किरात बेष से आए। यथा, कोल किरात बेष सब आऐ रचे परन तृन सदन सोहाए। और यहां श्री रामजी के मन रमाव ने के वास्ते मधुकर खग मृग तन धर के आए क्योंकि यहां राम जी बिरही हैं, मधु कर खग मृग तनु धरि देवा, ये दिव्य मधुप हैं और गुंजत मधुप निकर मधु लोभा। ये प्राकृत मधुप हैं। प्राकृत मधुप मधु के लोभी हैं दिव्य मधुप सेवा के लोभी हैं॥

मंगल रूप भयो बन तब ते। कीन्ह निवास रमा पति जब ते

तब से बन मंगल रूप भया जब से लक्ष्मी के पति रामजी ने निवास किया। रमा पति कहने का भाव, लक्ष्मी से मंगल होता है रामजी लक्ष्मी के पति हैं इसीसे बन मंगल रूप भया॥

१) श्लोक रामं मानुष रूपेण गिरि कानन भूमिषु। चरंतं परमात्मानं ज्ञात्वा सिद्धगणा भुवि, मृग पक्षिगणा भूत्वा राम सेवा तुशेधिरे। इति अध्यात्मे चतुर्थ सर्गे ॥ टीका।सिद्ध गण परमात्मा राम को पर्वत और बनो की पृथ्वी पर मनुष्य रूप से बिचरते हुये जानकर पृथ्वी में मृग और पक्षी गण हो कर के राम ही जी की सेवा करने लगे ॥

स्फटिक मणि की सिला अति उज्वल अति सोहाई है तिस फ टिक सिला ... क आसी ... बैठे ...

... भवन फिरि उ ... गि ... ; यहां स और फटिक सिला अति सुभ्र सोहाइ, सुप आसान तहां द्वौ भाइ, यहां तक, प्रसुकृत, सैल प्रवर्षन बास, यह प्रसंग है ॥

कहतअनुजसनकथाअनेका भक्तिबिरतिनृपनीतिबिबेका

रामजी लछिमनजी से भक्ति वैराग्य राज नीति विवेक अनेक कथा कहते हैं ॥ अध्यात्म में पूजन का प्रकरण वर्णन किया है। और वाल्मीकीय में वन वर्णन किया है उसी में अपने बिरह की और संसारी व्यवहार की उपमा दी है और रामायणों में और तरह मुनियों ने वर्णन किया है इसीसे गुसाईं जी सबके मत ग्रहण करने के वास्ते अनेक कथा का कहना लिखते हैं, और भागवत तथा विष्णुपुराण में वर्षा वर्णन किई है, ज्ञान वैराग्य भक्ति राज की उपमा दिई है, उसी मत को गुसाईंजी विस्तार से वर्णन करते हैं ॥ भक्ति सांडिल्य सूत्र में है, । वैराग्य सांख्य शास्त्र में है, । राज नीति धर्म शास्त्र में है, । ज्ञान वेदान्त शास्त्र में है, ॥ प्रथम भक्ति कहने का भाव, आरण्य कांड में लछिमनजी भक्ति योग सुन के अत्यंत सुखी भए, ॥ यथा, भगति योग सुनि अति सुप पावा, इसी से यहां रामजी ने प्रथम भक्ति सुनाई, ॥ ज्ञान वैराग्य भक्ति नीति लछिमनजी से आरण्य काण्ड में समुझाय के कह चुके ...हां समुझाने का प्रयोजन नहीं है, कथा कहतेहैं रामजी को कहना सुनना प्रिय है ॥

बरषा काल मेघ नभ छाए । गरजत लागत परम (१)

बरषा काल में मेघ आकाश में छाए हैं गरजते हैं परम से लगते हैं परम सोहाए कहने का भाव, जब मेघ आकाश मेंछा ए तब सोहाए लगते हैं जब गरजते हैं तब परम सोहाए लगते हैं। रामजी लछिमनजी को मेघ और मोर दिखाते हैं आकाश मेंमे घों की सुन्दरता दिखा कर अब पृथ्वी पर मयूरों का नाच दिखाते हैं लछिमन देषु यह देहली दीपक है यथा, वर्षा काल मेघ नभ छाए गरजत लागत परम सोहाए लछिमन देषु । और लछिमन देषहु मोर गन नाचत वारिद पेषि ॥

दोहा ।

लछिमन देषु मोर गन । नाचत वारिद पेषि ।
गृही बिरति रत हर्ष जस । विष्णु भक्त कहं देषि ॥१३॥

(२) हे लछिमन मोरन के समूह देखो मेघन को देख कर नाचते हैं जैसे विरक्त गृही विष्णु भक्त को देख के हर्षते हैं। मेघ का शब्द सुन के मयूर नाचते हैं इसीसे प्रथम मेघ का गरजना कहके मयूर का नाचना कहते हैं। वारिद कहने का भाव, मेघ वारि देते हैं इसीसे वारिद कहाते हैं यह जान के मयूर नाचते हैं कि हमको वारि

(१) श्लोक अयं सकालःसंप्राप्तः समयोद्यजलागमः सम्पश्यत्वं नभोमेघैः संवृतं गिरि सन्निभैः । इति बाल्मीकीये अष्टाविंशः सर्गः ॥ टीका यह वह काल आगया जो जल के आगमन का समय है आप देखिये पहाड के सदृश मेघों से आकाश घिरा हुवा है ॥

(२) श्लोक मेघा गमोत्सवा हृष्टाः प्रत्यनन्दन् शिखंडिनः गृहेषुतप्ता निर्विण्ण यथा च्युत जनागमे । इति भागवते दशमस्कंधे विंशति अध्याये ॥ टीका मेघ के आगमन के उत्सव से प्रसन्न मोर गण आनंदित हुए ॥ जैसे गृह जाल से तपे हुवे विरक्त गृहस्थ विष्णु भक्त को देख कर आनन्दित होते हैं ॥

देंगे। ऐसेही गृहस्थ लोग विष्णु भक्त को देख के सुखी होते हैं कि अब संत हम को राम यश सुना वेंगे। गृही मयूर हैं विष्णु भक्त मेघ हैं राम यश जल है। यथा, सुमति भूमि थल हृदय अगाधू, वेद पुरान उदधि घन साधू, बरषहिं राम सुजस बर बारी, मधुर मनोहर मंगल कारी। मयूर ग्रीषम के ताप से तपे हैं गृही विषय सेवन से तपे हैं जैसे गरजि गरजि मेघ बरसते हैं मयूर नाचते हैं तैसे गरजि गरजि साधु राम जस कहते हैं। गृही हरषते हैं जैसे मेघ के आगमन में मयूर अत्यंत सुखी होते हैं तैसे संत के आगमन में गृहस्थ सुखी होते हैं। यथा, संत मिलन सम सुष जग नाहीं॥ बरषा वर्णन में मयूर का आनन्द वर्णन करना यह कवियों का नियम है। प्रमाण, कोकिल कोकल बोलिबो वरणत हैं मधुमास, बरषाहीं हरषित कहहिं केकी केशव दास॥ इति कविप्रिया ग्रंथ। इसीसे गुशाईं जी वर्षा वर्णन के प्रारंभ में मयूर का नाचना लिखते हैं॥ यहां भक्ति वैराग्य है॥

चौपाई।

घनघमंडनभगरजतघोरा। प्रियाहीनडरपतमनमोरा।

मेघों के घमंड कहे समूह आकाश में घोर गरजते हैं हम प्रिया हीन हैं इसीसे हमारा मन डरपता है प्रिया हीन कहने का भाव, हम प्रिया हीन हैं सब मयूर प्रिया युक्त हैं इनकी मयूरी को राक्षस ने नहीं हरण किया इसीसे नृत्य करते हैं। प्रिया हीन डरपत मन मोरा कहने का भाव, मेघ का गरजना मयूर का नाचना बिजली का च

(१) श्लोक मयूरस्य वनेनूनं रक्षसा न हृता प्रिया तस्मान्नृत्य तिरम्येषु वनेषु सह कांतया। इति वाल्मीकीये प्रथम सर्गे॥ टीका राक्षसों ने निश्चय करके वन में मोर की स्त्री को नहीं हरा इसलिये सुन्दर बनो में स्त्री के साथ वह नाच रहा है॥ यहां त्रास संचारी भाव है॥

मकना ये सब शृङ्गार रस के उद्दी पक बिभाव हैं इसीसे बिरही को दुख दाई हैं यहां नीति वैराग्य है ॥

दामिनिदमकिरहनघनमाहीं। खलकैप्रीतियथाथिरनाहीं।

दामिनि दमक के घन में नहीं रहता जैसे खल की प्रीति साधु में थिर नहीं रहती॥ मेघ आकाश में है मयूर पृथ्वी पर है इतना अन्तर है परन्तु मेघ में मोरों की प्रीति है इसीसे देख कर नाचते है और दामिनी घन के समिप ही है परन्तु घन में उस की प्रीति नहीं है इसीसे थिर नहीं रहती। वर्षा वर्णन में मेघ मोर दामिनी आदि का वर्णन करना चाहिये। यथा, बरषा हंस पयान बक, दादुर चातक मोर, केतक पुंज कदंब जल, क्यों दामिनी घन जोर। इति कवि प्रियायां॥ यहां नीति है॥

[illegible] भूमिनियराए । यथानवहिंबुधविद्यापाए ॥

जलद कहे मेघ पृथ्वी के निकट आके बरसते हैं। जैसे पंडित लोग विद्या पाके नवते हैं, और विद्या दान देते हैं, मेघ वर्षते हैं, इसीसे उनको जलद कहा। मेघ आकाश में छाए भूमि के निकट आए और गरजे दामिनी दमकी तब बरसने लगे क्रम से वर्णन किया॥ बुध कहने का भाव, विद्या पाके बुधही नवते हैं अबुध नहीं। यथा, अधम जाति में विद्या पाए, भयो यथा अहि दूध पियाए। यहां नीति है॥

बुंद अघात सहहिं गिरि कैसे। खल के बचन संत सह जैसे।

बूंद के अघात कहे चोट को पर्वत् कैसे सहते हैं जैसे खल के ब

(१) श्लोक न बबंधाम्बरे स्थैर्यं विद्युदत्यन्त चंचला मैत्रीव प्रवरे पुंसि दुर्जने न प्रयोजिता। इति विष्णु पुराणे पंचमे अंशे॥ टीका अति चंचल बिजली की स्थिरता जिस प्रकार आकाश में नहीं रहती उसी प्रकार सज्जन पुरुष में दुर्जन की किई हुई प्रीति स्थिर नहीं रहती।

चन संत सहते हैं ॥ संत गिरि हैं खल के बचन बुंद हैं बुंद अनेक हैं खल के वचन अनेक हैं। संत खल के बचन सहने में गिरि के समान जड़ हैं संत के हृदय में खल के बचन प्रवेश नहीं करते। जैसे पाषाण में पानी प्रवेश नहीं करता। खल के वचन औरों को बज्र सम हैं। यथा, बचन बज्र जेहि सदा पियारा, तेई बचन संत के निकट पानी के बूंद सम हैं कुछ बाधा नहीं कर सक्ते ॥ सहहिं कहने का भाव, रामजी लछिमनजी से कहते हैं कि वर्षा के बूंद हम से नहीं सहे जाते। गिरि सहते हैं। तात्पर्य बिरही को वर्षा दुखदाई है। यथा, बारिद तपत तेल जनु बरिसा। मेघ प्रथम पहाड़ पर बरसते हैं इसी से प्रथम पहाड़ पर बरसना लिखा। यहां नीति है ॥

नदी भरि चली तोराई। जस थोरेहु धन खल इतराई।

छोटी नदी भर के तोराई कहे बेग से चली। जैसे थोड़ेही धन से खल इतराता है अर्थात् गर्व को प्राप्त होता है अथवा निचाई को प्राप्त होता है ॥ छुद्र नदी गंभीर नहीं है पेट की भारी नहीं है इसी से भर के बेमरयाद से चली। घर वृक्ष गिरावती कृषी डुबावती मार्ग रोकती थोड़े ही जल मे भारी उपद्रव करके सूख जाती है ऐसेही खल का धन जल्दी बह जाता है। जब तक रहता है तब तक बड़ा उपद्रव करता है ॥ छुद्र नदी की ऊपमा देने का भाव। छुद्र नदी मूल रहित है ऐसेही खल भगवान की भक्ति से रहित है इसीसे उनका धन जल्दी नष्ट होजाता है। प्रमाण, राम बिमुख संपति प्रभुताई, जाय

(१) श्लोक उद्धृत्मार्गगामीनि निम्नगांभांसि सर्वतः मनांसि दुर्विनीतानां प्राप्य लक्ष्मीं नवामिव। इति विष्णु पुराणे पंचमें अंशे ॥ टीका नदियों का जल कुमार्ग गामी होकर चारों ओर बहने लगा जैसे खलों का मन नवीन लक्ष्मी को पाकर कुमार्ग में चलता है ॥

(२) इतरस्त्व न्य नीचयोः

रहा पाईविनु पाई, सरितमूल जिन्ह सरितन नाहीं, बरषिगए पुनि तबहिं सुखाहीं। खल के मन, बचन, कर्म, तीनों नष्ट हैं। प्रमाण, खल के प्रीति यथा थिर नाहीं। मन चंचल है प्रीति करना मन का धर्म है। खल के बचन सन्त सह जैसे, बचन कठोर है, जस थोरेहि धन खल इतराई। कर्म नष्ट है इतराना कर्म है,। पहाड़ का पानी नदी के द्वारा चला के आगे भूमि के जल का वर्णन करते हैं यथा, भूमि पडत भा ढाबर पानी॥ यहां नीति है॥

भूमिपरत भा डाबर पानी। जनुजीवहिं माया लपटानी

भूमिपर पानी पडतेही डाबर अर्थात् मलीन भया जैसे जीव को माया लपटानी है, अर्थात् मलीन किये है॥ भूमि पड़त कहने का भाव, पत्थर पर गिरने से पानी कम डाबर भया भूमिपर पड़ने से बहुत मलीन भया। गिरि की उपमा साधु की है। यथा, बुंद अघात सहहिं गिरि कैसे, खल के बचन संत सह जैसे। भूमि की उपमा माया की है,। यथा, भूमि परत भा डाबर पानी, जनु जीवहि माया लपटानी। तात्पर्य, ज [illegible] में अवतार ले माया कम लपटाती है। जब [illegible] हां [illegible] है, तब माया बहुत लपटाती है। भूमि परत का सम्बन्ध जल और जीव दोनो में है॥ जब जल आकाश में रहा तब निर्मल रहा भूमि पर पड़तेही रज लपटगई मलीन होगया। ऐसेही जीव जब गर्भ में रहा तब अपने सरूप का ज्ञान रहा निर्मल रहा भूमि पर माया लपट गई मलीन होगया॥ यहां ज्ञान है॥

सिमिटिसिमिटिजलभरहिंतलाव [illegible] पार्दिं आ [illegible]

सिमिटि सिमिटि के जल तलाव में भरता है जैसे सद्गुन सज्ज-

न के पास आते हैं। पहाड़ का पानी नदी में गया ॥ भूमि का जल सिमिटि सिमिटि के तलाव में भरता है। सिमिटि सिमिटि कहने का भाव, । सज्जन के हृदय में अच्छे गुण क्रम से आते हैं; कहीं वा [illegible] । हृदय में नहीं भरजाते । आवा कहने का [illegible] अन [illegible] होते हैं, जैसे जल तलाव में आय आय कर भरता है ॥ सज्जन लोग अपने गुणों से सब को तलाव [illegible] देते हैं । [illegible] अपने धन से क्षुद्र नदी की नाईं सब को दुःख देते हैं ॥

सरिताजलजलनिधिमहंजाई।होइअचलजिमिजिवहरिपाई

नदी का जल समुद्र में जाके अचल होता है, जो जल तलाव में नहीं गया सो जल आय के नदी में मिला। तब समुद्र में नदी का मिलान कहते हैं ॥ सरिता जल कहने का भाव, सरिता का प्रसंग छोड़ के बीच में भूमि का जल और तलाव का जल वर्णन किये। अब पुनि सरिता के जल का हाल कहते हैं। सरिता कहने का भाव, सरिता चल है। सरति, गच्छति, इति सरित, तिसके जल की नाईं जीव चल है। जलनिधि कहने का भाव, जल का अधिष्ठान समुद्र है, ऐसेही सब जीवों का अधिष्ठान ईश्वर हैं। हरि कहने का भाव, हरि क्लेश हरते हैं। हरि को पाय के जीव का क्लेश दूर होता है ॥ नदी का जल समुद्र में जाय कर अचल भया। तात्पर्य, बीच में बड़े बड़े नदी नद पाय के न अचल भया क्योंकि, सब आपही बहिरहे हैं। ऐसेही अनेक देव की उपासना करने से जीव का भव प्रवाह नहीं मिटता क्योंकि, देवता आपही भव

प्रवाह में पड़े हैं। यथा, भवप्रवाह संतत हम परे। जल समुद्र से पृथक भया और नदी द्वारा पुनि समुद्र में मिल के स्थिर भया तैसे ही जीव हरि से पृथक भया सत्संग द्वारा पुनि हरि को पाय के जन्म मरण से रहित भया। हरि पाई कहने का भाव, जल समुद्र में जाके अचल भया जीव हरि को पाय के अचल भया कहीं जाने न पड़ा ईश्वर अपने हृदय में विराजमान है॥ यहां ज्ञान है

हरितभूमि तृण संकुल ...
जिमि पाषंडवि वादतें ...

तृण से संकुल कहे व्याप्त पृथ्वी हरी होर ...
समुझ पड़ते। जैसे पाखंड के विवाद से अच्छे ग्रंथ गुप्त होजाते हैं। यथा, साषी सब्दी दोहरा कहि कहनी उपषान, भगति निरूपहिं कलिभगत निन्दहिं वेदपुरान। इति दोहावली ग्रंथे॥ भूमि पर वर्षा का होना कहा यथा, भूमिपरत भा डाबर पानी। अब के जल का कार्य कहते हैं। यथा, हरित भूमि तृण संकुल इत्या पाषंड वाद कोई मार्ग नहीं है, तृण के समान मार्ग का भ्रम करने वाला है। घास के काटने से मार्ग खुल जाता है, ऐसेही पाखंड वाद के खण्डन करने से वेद मार्ग खुल जाता है, गुशाईं जी ने वर्षा और शरद दो ऋतु वर्णनाकिये हैं। एक एक दोहा में एक एक मास कहा है। यहां तक सावन का वर्णन करके आगे भादो का दोहा वर्णन करते हैं॥ यहां नीति ज्ञान है॥

दादुरधुनि चहुदिसा सुहाई। बेद ...

दादुर अर्थात् मेंडुका की सोहाई धुनि ... दिशा में ...

(१) संकीर्ण संकुला कीर्ण इत्यमरः॥

जानो समूह ब्राह्मण वेद पढ़ते हैं ॥ शामवेदियों की श्रावणी भादो में होती है. इसीसे वेद, का पढ़ना भादों के दोहा में लिखते हैं ॥ दादुर धुनि को वेद धुनि की उपमा देते हैं, क्योंकि, दादुर की नि वेदधुनि के समान होती है ॥ चहुं दिशा कहने का .. रामजी बैठे हैं, तहां चारो ओर से दादुर की धुनि सुन पड़ती है दादुर जलाशय के निकट बोलते हैं। ऐसेही ग्राम के चारों ओर ब्राह्मण लोग जलाशय के निकट श्रावणी करते हैं, अर्थात् वेद, पढ़ते हैं। दादुर धुनि को सुहाई कहने का भाव, दादुर धुनि को वेद, धुनि की उपमा दिई है वेद, धुनि सुहाई है, इसीसे दादुर धुनि को भी सोहाई कहते हैं ॥ यहां भक्ति ज्ञान है ॥

नवपल्लव भए बिपटअनेका। साधक मन जसमिले बिबेका।

अनेक वृक्ष नवीन पल्लव युत भए जैसे साधक अर्थात ज्ञान के साधन करनेवाले के मन में विवेक मिला। वृक्ष ग्रीष्म के ताप ... हैं तब वर्षा में नव पल्लव युत भए। ऐसेही अष्टांग .. साधने में साधक प्रथम क्लेश सहते हैं, तब उनको विवेक मिलता साधक को वृक्ष की उपमा देते हैं। तात्पर्य, साधक क्लेश सहने . वृक्ष के समान जड़ और अचल है। मन में विवेक मिले कहने का भाव, जैसे वृक्ष में पल्लव फूट आए तैसेही साधक के मन में .. आगया ... सिखाने न पड़ा। नव पल्लव होने का का ... होने ... ज्ञान है ॥

(१) श्लोक मासि प्रौष्ठ पदे ब्रह्म ब्राह्मणा नां विवक्षतां अयं मध्याय समयः शाम गानामु प स्थितः ॥ इति वाल्मीकीये अष्टा विंशतिः सर्गे ॥ टीका भादो के महीने में वेद के पढ़ने वाले सामवेदी ब्राह्मणों का ... है ॥

कजवासपातविनुभयऊ। जससुराज

५।र और ७ अर्थात हिंमुन बिना पते के भए

जाता ॥ तात्पर्य जब ग्रीषम में सब वृक्ष विना पत्ते के भए तब अर्क जवांस में पत्ते भए। जब वर्षा में सब वृक्ष पल्लव सहित भए तब अर्क जवांस विना पल्लव के भए ऐसे ही कुराज में जब सब लोग दुखी भए तब खल सुखी भए। जब सुराज में सब लोग सुखी भए तब खल का उद्यम गया॥ अर्क और जवांस दो कहने का भाव,। मदार के पत्ते बडे हो ते हैं जवांस के पत्ते छोटे हो ते हैं। ऐ से ही खल के छोटे बडे सब उप-

। जाते हैं॥ पात बिनु भयऊ कहने का भाव, मदार र जवांस बने रहते हैं पत्र नहीं रहते। ऐसेही सुराज में खल बने रहते हैं। खल का उद्यम नहीं रहता॥ ग्रीषम कुराज है वर्षा सुराज है सब वृक्ष साधु हैं अर्क जवांस खल हैं॥ अर्क जवांस के नाम लेने का भाव,। जो वृक्ष पल्लव युत भए सो वहुत हैं। यथा, नव पल्लव भए विटप अनेका इसीसे उनको अनेक कहा। जो पत्र विन भए सो प्रसिद्ध में दोई हैं अर्क जवांस इसी से दो के नाम कहे॥ यहां नीति है॥

तहुंमिलैनहिंधूरी। करैक्रोधजिमिधर्महिंद

धूरि कहीं ढूंढने से नहीं मिलती जैसे क्रोध करने से धर्म दूर चला जाता है खोजने से नहीं मिलता। वेद पुरान में खोजे कि क्रोध किये धर्म रहता है तो कहीं न मिलेगा॥ धर्म को धूरिकहने का भाव, धूरि सूक्ष्म है ऐसेही धर्म की गति सूक्ष्म है धूरि वहुत है धर्म बहुत है वर्षा भए सब धूरिका नाश है तैसे ही क्रोध भए सब

र्म का नाश है । जहां ा पड़ ू है जहां
नहीं है तहां धर्म है। धर्महिं , कहने क्रोधी धर्म क
रता है क्रोधी के निकट धर्म ही नहीं आता। तात्पर्य क्रोध करके
जो धर्म करते हैं उस में धर्म नहीं होता । क्रोध पाप का मूल
इसीसे धर्म पाप से दूर भागता है ॥ यहां नीति और ज्ञान है ॥

। । उपकारीकैसम्पाति जैसी ॥

ती से संयुक्त पृथ्वी कैसी सोहती है जैसी उपकारी की सम्पाति हती है । खेती से पृथ्वी सोहती है यहां सम्पाति से उपकारी की शोभा कही उपकारी कै सम्पाति जैसी यहां उपकारी से सम्पाति की शोभा कही ॥ तात्पर्य सम्पाति से उपकारी की शोभा है उप कारी से सम्पाति की शोभा है ॥ उपकारी कहने का भाव, खेती से बहुत जीवों का उपकार है ऐसेही उपकारी की संपति से बहुत जीवों का उपकार है यहां नीति है कृषी से पृथ्वी का कुछ उपकार नहीं है केवल शोभा है ऐसेही उपकारी की संपति से सब का उपकार। है उपकारी अपने उपकार में नहीं लगाता ॥

।

त्रे में तम कहे अंधकार और मेघों के होने से खद्योत कहे जु गनू सोहते हैं जानो दंभि कहे पाखंडियों का समाज मिला है। निसि तम कहने का भाव, रात्रि के अंधेरे में खद्योत सोहते हैं दिन के अंधेरे में नहीं सोहते। दिन में भी अंधेरा होता है यथा कबहुं दिवस मह निबिड़ तम ॥ विराजा कहने का भाव, रात्रि के अंधेरे मे खद्योत राजते हैं और मेघो के होने से विशेष राजते हैं अर्थात्

हैं ॥ घन के ... करते हैं कि आकाश
तारागण कोई नहीं प्रकाश करते । तब खद्योत प्रकाश करते
हैं ॥ ... जहां कोई विद्वान वेद पुराण शास्त्र का प्रकाश करने
वाला नहीं है तहां ... दंभ की बातैं कहके अपनार प्रकाश अं
... करते हैं ॥

... । जिमिस्वतंत्रभयबिगरहिनारी ।

महा वृष्टि होने से कियारी फूटि चली जैसे स्वतंत्र होने से नारी बिगड़ती है ... कहने का भाव, कि ... गटि के बह जाती ठिकाने में नहीं रहती । एसेही स्वतंत्र होने से नारी बिगड़ के ... जाती है । नारी कियारी के समान है, स्वतंत्र महा वृष्टि के समान है । यहां नीति है ॥

... विहिंचतुरकिसाना । जिमिबुधतजहिंमोहमदमाना

चतुर किसान कृषी को निरावते हैं जैसे बुध कहें पण्डित मोह मद मान तजते हैं । कृषी से तृण को भिन्न करना इसी को निरावना कहते हैं चतुर किसान कहने का भाव, तृण को निकाल के कृषी को रखते हैं यह किसान की चतुरता है मोह मद मान तृण है इनको हृदय से निकाल के भक्ति रूपी कृषी की रक्षा करते हैं यह बुध की चतुरता है मोह मद मान तज के भजन करै यथा,
... । बुध कहने का
मोह मद मान बुध ही त्याग कर सक्ते हैं अबुध नहीं । यथा, पुरु कुजोगी जिमि उर गारी, मोह बिटप नहिं सकहिं उपारी ॥ यहां ज्ञान है ॥

(१) श्लोक निशा मुखेषु खद्योता स्तमसा भांति नग्रहा ॥ इति भागवते दशमस्कंधे विंशो-ध्यायः ॥ टीका संध्या काल में अंधकार से जुगनू चमकते हैं ग्रहनहीं चमकते ॥

[illegible] ऽजिमिधर्मपराहीं

वर्षा ऋतु पाय के चक्रवाक षग नहीं देख पड़ते । जैसे कलि पाय के धर्म भाग जाते हैं । देषियत चक्रवाक षग नाहीं कहने का भाव, चक्रवाक कहूं रहते हैं देख नहीं पड़ते । ऐसेही कलि पाय के लोगों में धर्म नहीं देख पड़ते पुस्तकों में लिखे रहते हैं यथा, सकल धर्म विपरीत कलि, कलपित कोटि कुपंथ, पुन्य पराय पहार बन, दुरे पुरान सदग्रंथ । इति दोहावली ग्रंथे ॥ धर्म वृष रूप है कलियुग कसाई है । इसीसे कलियुग को देख के धर्म भागता है । यथा, कासी कामधेनु कलि कुहत कसाई है ॥ इति विनय पत्रिकायां ॥ यहां नीति है ॥

ऊसरबरषैतृननहिंजामा।जिमिहरिजनहियउपजनकामा

ऊसर भूमिपर वृष्टि होती है, तृण नहीं जमता जैसे हरिजन के हृदय में काम नहीं उपजता । तात्पर्य, तृण उपजने का हेतु वर्षा होती है, तृण नहीं उपजता ऐसेही हरिजन के हृदय मे काम उपजने का हेतु होता है, अर्थात् अनेक पदार्थ भोजन करते हैं, तदपि काम नहीं उपजता सब पृथ्वी पर तृण जमता है, ऊसर पर नहीं जमता ऐसेही सब के हृदय में काम उपजता है, हरिजन के हृदय में नहीं उपजता ॥ हरिजन कहने का भाव, हरि के जन हैं, उसकी रखवारी हरि करते हैं । हरि से काम डरता है, हरि सिंह हैं, काम हाथी है । यथा, कंदर्पनाग मृगपति मुरारि । इति विनय पत्रिका ग्रन्थे । यहां हरि शब्द श्लेष है, अर्थात् हरि शब्द सिंह और भगवान दोनो का वाचक है ॥ यहां निति ज्ञान है ॥

हंसागता मानसवासलुब्धाः प्रिया वियुक्ताः संप्रतिचक्रवाकाः इति वाल्मिकीये ॥

जन्तुसंकुलमहिभ्राजा। प्रजाबाढ़जिमिपाइ॥

बिबिधि जन्तुओं से संकुल कहे ब्याप्त अर्थात् भरीहुई पृथ्वी शोभा को प्राप्त है, जैसे सुन्दर राजा पाकर प्रजा बढ़ती है। तात्पर्य जन्तुओं के बढ़ने से पृथ्वी की शोभा है, प्रजा के बढ़ने से राजा की शोभा है। यहां नीति है॥

[illegible] (१)

जहां तहां अनेक पथिक थक रहे हैं, वर्षा में नहीं चल जैसे ज्ञान उपजने से इन्द्रीगन थक जाती हैं। इन्द्रियां चलत अर्थात् अपने अपने विषय को दौरती हैं। इसीसे पथिक की उपमा दी है॥ ज्ञान भए से सब इन्द्रियां जहां तहां थक के रहजाती हैं। यथा ज्ञानमान जहं एकौनाहीं, देषब्रह्म समान सबमाहीं। जब सब में समान ब्रह्म देख पड़ा तब इन्द्रियां किस के संग रमन यहां नीति और ज्ञान है॥

दोहा।

कबहुं प्रबल बहमारुत। जहंतहं मेघ बिलाहिं॥
जिमि कपूत के उपजे। कुल सद्धर्म नसाहिं॥१५॥

कबहूं पवन प्रबल बहता है, जहां तहां मेघ बिलाते हैं, जैसे कपूत के उपजने से कुल के अच्छे धर्म नष्ट होजाते हैं, एक पवन के चलने से अनेक मेघ नाश होते हैं, ऐसही एक कपूत के उपज ने से अनेक धर्म नाश होते हैं। वर्षा ऋतु में मेघ मुख्य हैं, इसीसे वर्षा के

(१) श्लोक किंकरोमि कगच्छामि किंगृह्णामित्यजामि किम्। आत्मना पूरितंसर्वं महाकल्पाम्बुनायथा॥ इति वेदान्ते॥ टीका क्या करूं कहां जाऊं क्या लिऊं क्या छोड़ूं आत्मा से प्रलय काल के जल की नाईं सब भर गया है॥

आरंभ में मेघ का आगमन कहा यथा, वर्षाकाल मेघ नभ छ वर्षा के अन्त में मेघ का नाश होना कहा है। यथा, कबहुंप्रबलबह मारुत जहंतहं मेघ बिलाहिं ॥ यहां नीति है ॥

दिवसम इतम। कबहुक प्रगट पतंग ॥
पाइकुसंग सुसंग ॥ १५ ॥

कबहूं दिन में सघन अंधकार होता है, कबहूं सूर्य प्रगट होते हैं, सता है, और सुसंग पाके उपजता है।

त्पय, सत्संग से ज्ञान की उत्पत्ति में बिलम्ब नहीं है, कुसंग से ज्ञान के नाश में बिलम्ब नहीं है। जैसे क्षण में सूर्य ढपजाते हैं, क्षण में खुल जाते हैं ॥ वर्षा के प्रारंभ में विष्णु भक्त का दर्शन कहा। यथा, गृही विरतिरत हरषजस विष्णुभक्त कहंदेषि ॥ वर्षा के अंत में सुसंग से ज्ञान की प्राप्ति कहा। यथा, विनसै उपजै ज्ञान जिमि, पाइकुसंग सुसंग ॥ यहां पहिले विनास कह के पीछे उपज ना कहते हैं। तात्पर्य, ज्ञान के विनाश में प्रसंग की समाप्ति नहीं किया। ज्ञान के उदय में प्रसंगकी समाप्ति किया ॥ यहां ज्ञान और नीति है ॥ कहत अनुजसन कथा अनेका, यहां से कबहुं दि निविड़तम इस दोहे तक वर्षा वर्णन प्रसंग है ॥

बरषा बिगतसरदरितुआई। लछिमनदेष

हे लछिमन देखो वर्षा ऋतु बीत गई परम सोहाई शरद आई वर्षा बिगत कहिके वर्षा वर्णन प्रसंग की समाप्ति किया। श रद ऋतु आई कहि के शरद ऋतु वर्णन के प्रसंग का प्रारंभ करते हैं ॥ वर्षा वर्णन के प्रारंभ में लछिमन सम्बोधन कहा। यथा, लछि

मन दगु मोर मन नाचत वारिद पेषि ॥ अब शरद वर्णन के प्रारंभ में लछिमन सम्बोधन कहते हैं । यथा, लछिमन देषहु परम सोहाई वर्षा को परम सोहाई कहा यथा, वर्षा काल मेघ नभ छाए गरजत

शरद को परम सोहाई

वर्षा बिगत सरद रितु आई लछिमन देषहु परम सोहाई ॥ यहां नीति है ॥ शरद वर्णन में जिन वस्तुओं का वर्णन करना चाहिये तिनको गुशाईं जी आगे वर्णन करते हैं ॥ दोहा अमल अकास प्रकास ससि मुदित कमल कुल कास, पंथी पितर पयान नृप सरद सुके सब दास ॥ इति कवि प्रियायां ॥

फूलेकास ई ।

ऐसे कास से सब पृथ्वी छायगई है जानो वरषा रितु प्रगट । कास के फूल श्वेत होते हैं जानो वर्षा के सेत केस । तात्पर्य कास के फूलने से बर्षा का अंत है । प्रगट कहने का भाव, बिना शरीर की बुढ़ाई अनुमान से जानी जाती है कास ने

है इसीसे वर्षा के प्रारंभ में मेघो का आगमन कहा जो श्यामता

नभ छ ।

द म उज्वलता मुख्य से शरद के प्रारंभ में कास का फूल ना कहते हैं ॥ यहां नीति

उदितअगस्तिपंथजलसोषा ।जिमिलोभहिसोषइसंतोषा

अगस्त ने उदय होके पंथ के जल को लिया संतो

। है । पंथ जल कहने का भाव, पंथ

का जल पथ का दृष्टांत ॥ तिसको अगस्त ने साफ कर । तात्पर्य महात्माओं का उदय पंथ के साफ करने के वास्ते है । यह अभिप्राय दिखाने के वास्ते पंथ का जल कहा ॥ जब तक पंथ में जल रहता है तब तक उस पंथ में कोई नहीं जाता । जब जल सूख जाता है तब उस पंथ में सब चलते हैं ॥ ऐसेही जब तक लोभ रहता है तब तक लोभी के पास कोई नहीं जाता । जब लोभ नहीं रहता तब सब लोग उसके पास जाते हैं ॥ पंथ जल कहने का दूसरा भाव । अगस्त के उदय से नदी तलाव कूप सब का जल सूखता है परन्तु सब जल नहीं सूखता कुछ बना रहता है इसीसे इनका नाम नहीं लिया ॥ पंथ का जल सब सूख जाता है इसीसे पंथ का जल कहते हैं ॥ ऐसेही संतोष से समस्त लोभ का नाश होता है ॥ पंथ के जल सूखने का तीसरा भाव । समुद्र के सोखने वाले अगस्त को पंथ का जल सोखने में कुछ श्रम नहीं है । ऐसेही संतोष होने से बिना श्रम लोभ का नाश होता है ॥ चौथा भाव, पंथ के जल की उपमा लोभ की है पंथ का जल सदा मलीन रहता है ऐसेही लोभ से हृदय सदा मलीन रहता है । यथा, सदा मलीन पंथ के जल ज्यों कबहुं न हृदय थिराने ॥ इति विनय पत्रिका ग्रंथे ॥ अगस्त से और पंथ के जल से बड़ा अन्तर है ऐसेही संतोष और लोभ से बड़ा अन्तर है । लोभ संतोष के समीप नहीं आता दूरही से नाश होजाता है ॥ यहां ज्ञान है ॥

सरितासरनिरमलजलसोहा संतहृदयजसगतमदमोहा ।

नदी तलाव का जल निर्मल होने से कैसा सोहता है जैसे अभिमान और अज्ञान के नष्ट होने से सन्तों का हृदय निर्मल होके सोहता है ॥ सरिता सर का जल प्रथम मलीन रहा यथा, भूमि परत भा ढाबर पानी सोई ढाबर पानी सरिता सर में भरा अब शरद ऋतु में निर्मल भया ॥ संत सरिता सर हैं, हृदय जल हैं, मद मोह मल हैं,

नदी तलाव का पानी रस रस कहे धीरे धीरे सूखता है जैसे ज्ञानी धीरे धीरे ममता को त्याग करता है । ममता का त्याग ज्ञान से होता है इसी से ममता का त्याग करना ज्ञानी को कहा है । यथा जासु ज्ञान रवि भव निसि नासा, बचन किरिनि मुनि कमल विकासा । तेहिकि मोह ममता नियराई इत्यादि ॥ यहां ज्ञान है ॥

शरद ऋतु जानि के खंजन आए जैसे समय पाकर सुन्दर सुकृत कहें धर्म आते हैं ॥ धर्म का चलाजाना दो प्रकार से कहा है । एक क्रोध से दूसरा कलि से ॥ प्रमाण करै क्रोध जिमि धर्महिं दूरी

(१) श्लोक सर्वत्राति प्रसन्नानि सलिलानि तथा भवन् ज्ञाते सर्वे गते विष्णौ मनांसी बसुमेधसाम् ॥ इति विष्णु पुराणे पंचमे अंशे ॥ टीका जल सब स्थानों में वैसाही निर्मल होगया है जैसे सद्बुद्धि वालों का मन सर्व व्यापी विष्णु के जानने से होजाता है ॥ यहां विनोक्ति है मल रहित जल सोहता है मद मोह से रहित संत हृदय सोहता है

(१) श्लोक शनकैः शनकैः स्तीरं तत्यजुश्च जलाशयाः ममत्वं क्षेत्र पुत्रादि रूढं सर्वे यथा बुधाः ॥ इति विष्णु पुराणे पंचमे अंशे ॥ टीका जलाशयों ने धीरे धीरे तीर को छोड दिया जैसे पण्डित लोग घर पुत्रादि में चिरकाल की ममता को छोड देते हैं ॥

पाय जिमि धर्म पराहीं । जो धर्म कलिको पाय के ग
या सा समय पायकर फिर आय गया । यथा, जानि सरद रितु खं-
जन आए, पाइ समय जिमि सुकृत सोहाए । जो धर्म क्रोध किये से
गया सो धर्म दूर गया फिर के न आया ॥ यथा, षोजत कतहुं मि
।नांह ।, करै क्रोध जिमि धर्महिं दूरी ॥ खंजन की उपमा सुकृ
तात्पर्य जो पक्षी बहुत देख पडते हैं तिनकी उपमा नहीं
, धर्म बहुत नहीं है जो पक्षी देखिनहीं पड़ते हंस
आदिक तीनकी उपमा नहीं देते क्योंकि, धर्म का बिलकुल
नाश नहीं सी से खंजन की उपमा देते हैं। खंजन हैं परन्तु बहुतन
खंजन की उपमा देने का दूसरा भाव, और पक्षियों के आ
ने का समय नहीं है खंजन के आने का समय है । शरद में
ऐसेही सब सुकृत समय पाय कर आते हैं ॥ यहांनीति है ॥

। नीतिनिपुननृपकैजासिकरनी ।

धूल के बिना पृथ्वी ऐसी सोहती है जैसी नीति नि-
पुन राजा करनी सोहती है ॥ पंकनरेनु कहने का भाव, ग्रीषम
से असोभित रही । वर्षा में कीच से असोभित रही
रहित धरनी सोहती है जैसे नीति निपुन राजा की
करनी है । तात्पर्य राजा न किसी पर गरम होय न किसी
प जैसा नीति में लिखा है तैसाही करता है । गरम
होना ग्रीषम का धर्म है सीतल होना वर्षा का धर्म है ॥ नृप करनी
उपमा देने का भाव, । धरनी सब को धारन करती
से नीति निपुन राजा की करनी सब को धारन करती है
से न चलै तो सब प्रजा नष्ट होजाय ॥ यहांनीति है

।। अबुधकुटुम्बीजिमिधनहीं

जल के संकोच अर्थात् कम होने से मीन बिकल भई जैसे धन हीन अबुध कुटुम्बी बिकल होता है॥ प्रथम जल का थोडा थोडा सूखना कहा। यथा, रस रस सूष सरित सर पानी। अब जल का इतना संकोच होगया कि मछली बिकल होगई॥ अबुध कहने का भाव,। जो बुध नहीं हैं सो बिकल होते हैं। यथा, बुध हरषहिं जड़ दुष बिलषाहीं। दोउ सम धीर धरहिं मन माहीं॥ अबुध कहने का दूसरा भाव, अबुध जो गुन हीन हैं धन की प्राप्ति नहीं करसक्के और कुटुम्बी हैं सो बिकल होते हैं॥ अबुध को मीन की उपमा देने का भाव,। मछली बहुत है जल कमती है जो सोभी सूखा जाता है। आगे मिलने की आसा नहीं है क्योंकि, बर्षने वाले मेघ चले गए। और निर्मल आकाश होने से बहुत धूप होती है तिस से मछली विकल है और जल छोड़ के मछली कहीं जा नहीं सक्की असमर्थ है। ऐसे ही कुटुम्बी के प्राणी बहुत हैं धन कम है जो है सो भी चुका जाता है आगे मिलने की आशा नहीं है रोजगार बन्द है जिनका सन्मान होना चाहिये तिनका सन्मान नहीं बनता येही शरद धूप की ताप है। घरछोड़ के कहीं जा नहीं सक्के क्यों कि अबुध हैं॥ यहां नीति है॥ गृहस्त का हाल कह के आगे विरक्त का हाल कहते हैं॥

बिनुघननिर्मलसोहअकासा हरिजनइवपरिहरिसबआसा

---

(१) श्लोक गाध वारि चरास्तापमविन्दन् शरदर्कजम् यथा दरिद्रः कृपणः कुटुम्ब्य विजितें द्रियः॥ इति भागवते दशमस्कन्धे विंशति अध्याय॥ टीका थोड़े जलकी मछली शरद् काल के सूर्य से उत्पन्न ताप को प्राप्त भई जैसे दरिद्र सूम कुटुम्बी इन्द्रियों के वशी भूत पुरुष विकल होते हैं॥

मेघ के बिना आकाश निर्मल सोहता है। जैसे सब आशा छोड़ के हरिजन सोहते हैं। तात्पर्य आशा छोड़ने से हरिजन की शोभा है आशा रहने से शोभा नहीं है। यथा, मोर दास कहाय नर आसा, करै तो कहहु कहां बिस्वासा। हरिजन हैं हरि की आशा करते हैं इसी से सब की आशा त्यागते हैं। घन से आकाश मलीन होत हैं आशा से हरिजन मलीन होते हैं ॥ यहां-बिबेक है ॥

[illegible] क्रिजि [illegible]

शरद ऋतु में कहूं कहूं वृष्टि थोरी होती है जैसे हमारी भक्ति कोऊ एक पाता है ॥ कहूं कहूं वृष्टि भई तिस में भी थोरी भई ऐसे ही कोई कोई हमारी भक्ति पाता है उसमें भी थोरी अर्थात् पूर्ण भक्ति नहीं पाता ॥ भक्ति पानें वालों के नाम आगे कहते हैं यथा, जिमि हरि भक्ति पाय श्रम तजहिं आश्रमी चारि, ब्रह्मचारी गृहस्थ वाणप्रस्थ संन्यासी इन में कोई पाता है चारो नहीं पाते तिस में भी एक पाता है सब नहीं। एक आश्रम में हजारों मनुष्य होते हैं सब नहीं पाते। कोउ इक पाव कहने से यह जनाते हैं कि ज्ञान से भक्ति दुलर्भ है। ज्ञान की प्राप्ति अनेकों को कहा है। यथा, नव पल्लव भए बिटप अनेका, साधक मन जस मिले विवेका ॥ भक्ति का मिलना एकही को कहते हैं। यथा, कोउ इक पाव भक्ति जिमि मोरी· शारदी वृष्ठि दुर्लभ है ऐसेही भक्ति दुर्लभ है। यथा,

---

यहां द्वितीय विनोक्ति अलंकार है। दोहा। है विनोक्ति द्वै भांतिको प्रस्तुत कछु बिनु छीन। अरु शोभा अधि कीक है प्रस्तुत कछु यक हीन ॥ इति भाषा भूषणे यहां घनबिना आकाश शोहता है ॥

सब ते सो दुर्लभ सुर राया, राम भक्ति रत गत मद माया ॥ शार दी वृष्टि होने से मुक्ता आदि अनेक पदार्थ उत्पन्न होते हैं। ऐसे ही भक्ति से मुक्ति आदि सब पदार्थ सिद्ध होते हैं॥ यहां भक्ति है॥

।

पितृ ।

। रि॥१

राजा तपस्वी वनिक भिखारी यह सब नगर छोड़के हरषि के चले जैसे हरि भक्ति पाके चारो आश्रमी श्रम तजते हैं । प्रथम कहि आए कि वर्षा में पथिक रुके हैं। यथा, जहं तहं रहे पथिक थकि नाना ॥ इसीसे सम्पूर्ण वर्षा की निवृत्ति कहा। यथा, वर्षा विगत शरद रितु आई। वर्षा बीत गई वर्षा के बाद पंथ में जल रहता है सोभी सूख गया। यथा, उदित अगस्त पंथ जल सोषा ॥ जल सू-खने के बाद कीच रहता है सोभी नरहा। यथा, पंक न रेनु सोह अस धरनी ॥ जब पंथ साफ होगया तब पथिकों का चलना कहते हैं ॥ हरषि कै चले कहने का भाव, हरि भक्ति के पाने से आश्रम के श्रम तजने में संदेह न करे। जैसे पथिक हरषि कै नगर त्याग ते हैं तैसे आश्रमी आश्रम के श्रम को त्याग करे ॥ प्रथम नृप क-हने का भाव, रामजी का मुख्य प्रयोजन नृपही के कहने का है कि सब नृप चले हमारा कार्य करने के वास्ते सुग्रीव नृप नचले ॥

(१) श्लोक उद्योग समयः सौम्य पार्थिवानामुपस्थितः इयं सा प्रथमा यात्रा पार्थिवानां नृपात्मज न च पश्यामि सुग्रीव मुद्योगं च तथा विधं ॥ इति वाल्मीकीये अष्टा विंशति सर्गे ॥ टीका हे सौम्य राजाओं के उद्योग का समय प्राप्त हुआ है हे राजाओं की पहिली यात्रा है न तो हम सुग्रीव को देखते हैं न वैसा उद्योग देखते हैं ॥

पाय के श्रम तजने का भाव, सब धर्मों का फल भक्ति

जहं लगि साधन वेद बखानी सब कर फल हरि

नी ॥ सो भक्ति जब प्राप्त भई तब श्रम करने का कौन प्रयोजन है ॥ जिस आश्रम में भक्ति मिले वहीं से क त्याग करे ॥ यह भाव है ॥ यहां भक्ति है ॥

। जिमिहरिसरननएकोबाधा ।

जो मीन अथाह जल में हैं सो सुखी हैं जैसे हरि के सरन में बाधा नहीं है ॥ प्रथम कह आए कि संकोच जल के मीन बिकल हैं ॥ यथा, जल संकोच बिकल भइ मीना । उसीके जोड़ में यहां कहते हैं किजो अगाध जल के मीन हैं सो सुखी हैं । संकोच जल के मीन की उपमा कुटुम्बी की है यथा, जल संकोच बिकल भइ मीना, अबुध कुटुम्बी जिमि धन हीना । अगाध जल के मीन की उपमा हरि भक्त की है । यथा, सुखी मीन जे नीर अगाधा जिमि हरि शरण न एको बाधा ॥ तात्पर्य जो हरि शरण छोड़ के कुटुम्ब सेवते हैं सो दुखी हैं जो हरि शरण सेवते हैं सो सुखी हैं हरि के शरण में एको बाधा नहीं है जो कदाचित बाधा आती है तो बाधा दूरि करने के वास्ते हरि अवतार लेते हैं । सो आगे क

उपमा देने का भाव । मीन जल का अत्यन्त स्नेही है ऐसेही हरि भक्त हरि के अत्यंत स्नेही हैं । हरि के आश्रय से जीते हैं भक्त का हाल कह कर आगे भगवत का हाल भक्ति है ॥

फूले १७ सोह १ ।।सगुन भए जैसा

कमल फूलने से तलाव कैसा सोहता है जैसा सगुन होने से निर्गुन ब्रह्म सोहता है । जल का गुन कमल प्रगट भया अर्थात् जल सगुन भया ऐसेही निर्गुन ब्रह्म सगुन भया । फूले कमल यह ईश्वर के आकार की शोभा है आगे गुन की शोभा कहते हैं । यथा, गुंजत मधुकर मुखर अनूपा इत्यादि ॥ कमल अनेक हैं ऐसे ही भगवान के अवतार अनेक हैं । कमल चार रंग के है श्वेत रक्त पीत कृष्ण । ऐसेही सगुन ब्रह्म चार रंग के है ॥ आश्रम धर्म से भक्ति प्राप्त भई । यथा, जिमि हरि भक्ति पाय श्रम तजहिं आश्रमी चारि । तब भक्त लोग हरि की भक्ति करते हैं । यथा, सुखी मीन जे नीर अगाधा, जिमि हरि शरन न एकौ बाधा। मीन की तरह से हरि के आश्रय रहते हैं तब भक्तों की भक्ति से भगवान अवतार लेते हैं । यथा, फूले कमल सोह सर कैसा निर्गुन ब्रह्म सगुन भए जैसा । तब भक्त लोग भगवान के गुण गाते हैं । यथा, गुंजत मधुकर मुखर अनूपा, सुन्दर खग रव नाना रूपा॥ यह भगवत और भक्त की परस्पर प्रीति कही है । आश्विन के प्रारंभ में कास का फूलना कहा । यथा, फूले कास सकल महि छाई । कार्तिक के प्रारंभ में कमल का फूलना कहा । यथा, कमल सोह सर कैसा ॥ यहां ज्ञान है ॥

भ्रमर गुंजते हैं तिन का शब्द अनूप है अनेक रूप के पक्षियों का शब्द सुन्द है । कमल फूलने के बाद भ्रमर का गूंजना क

(१) श्लोक शुक्लो रक्तस्तथा पीत इदानीं कृष्णतांगतः ॥ इति भागवते गर्गाचार्य बचनम् ॥
टीका भगवान श्वेत लाल और पीत रूप धारण करते हैं इस समय श्यामता को प्राप्त है ॥

हते हैं क्योंकि भ्रमर कमल का विशेष स्नेही है तिसके बाद सुन्दर पक्षियों का बोलना कहते हैं। जल कुक्कुट ... हंस आदि ऐसी कमल के स्नेही हैं। भ्रमर और पक्षियों के शब्द ... भक्तों और मुनियों की वाणी की उपमा देते हैं। ... भ्रमर और पक्षियों शब्द को अनूप और सुन्दर कहते हैं ॥ जब कमल फूलते तब पक्षी बोलते हैं और भ्रमर गुंजते हैं। ऐसेही जब निर्गुन ब्रह्म सगुन होता है तब भृत्य औ मुनि जन गुन गान करते हैं ॥ भृत्य की उपमा मधुकरकी है, प्रमाण । बिकसित कमलावली चले प्रपुंज चंचरीक गुंजत कल कोमल धुनि त्यागि कंज न्यारे, जनु बिराग पाइ सकल सोक कूप गृह बिहाइ भृत्य प्रेम मत्त फिरत गुनत गुन तिहारे ॥ मुनि की उपमा पक्षी की है प्रमाण, बोलत पग निकर मुखर मधुर करि प्रतीति सुनहु श्रवन प्रान जीवन धन मेरे तुम बारे, मनहुं बेद बन्दी मुनि वृन्द सूत मागधादि विरद बदत जय जय जय जयति कैटभारे ॥ इति गितावली ग्रंथे ॥ निर्गुन में गुन गाते नहीं बनता ॥ यहां ज्ञान और भक्ति है ॥

दुखलिखिपेषी। जिमिदुर्जनपरसंपतिदेषी

राति देख के चक्रवाक कहें चकवा के मन में दुःख होता है जै परार्इ सम्पति देख के दुर्जन के मन में दुःख होता है ॥ रात्रि

(१) श्लोक ब्रह्मन् ब्रह्मण्य निर्देश्ये निर्गुणे गुण वृत्तयः कथं चरंति श्रुतयः साक्षात्सदसतः परे ॥ इति भागवते दशमस्कंधे ॥ टीका हे ब्रह्मन् अनिर्देश्य अर्थात् जिस को कोई दिखाय नहीं सका गुणो से रहित और भले और निकम्मे से परे ऐसे ब्रह्म के विषय में सगुण वेद साक्षात् कैसे कह सकें ॥

(२) कोकश्च क्रश्चक्रवाकः इत्यमरः अर्थ कोक १ चक्र २ चक्रवाक ३ येतीनो चकवाके नाम हैं

चक्र वाक को दुखदाई है ऐसे ही पराई सम्पति दुर्जन को दुखदाइ है ॥ रात्रि के नाश में चक्र बाक सुखी होते हैं जैसे पराई सम्पति के नाश में दुर्जन सुखी होते हैं रात्रि को सम्पति की उपमा देने का भाव। रात्रि सब को विश्राम और सुख देती है ऐसेही सम्पति सब को विश्राम और सुख देती है ॥ यहां नीति है ॥

चाकतररटततृषाअतिवोही। जिमिसुषलहैनसंकरद्रोही।

पपीहा रटता है उस को अत्यंत प्यास है जैसे शंकर का द्रोही सुख नहीं पाता ॥ वर्षा के रहते चातक को सुख नहीं है ऐसेही सुख समाज के रहते शंकर के द्रोही को सुख नहीं है ॥ शंकर कहने का भाव, कल्याण करने वाले से द्रोह किये सुख कैसे मिले अब हरि की प्राप्ति का उपाय यहां बताते हैं। शंकर१ संत२ ब्राह्मण३ सद्गुरु४ चारो के बीच में हरि की प्राप्ति कहते हैं। यथा, जिमि सुष लहै न शंकर द्रोही (१) संत दरस जिमि पातक टरई [२] जिमि द्विज द्रोह किये कुल नाशा [३] सदगुरु मिले जाहिं जिमि संशय भ्रम समुदाय [४] यह चारो के बीच में, देषि इन्दु चकोर समुदाई, चितवहिं जिमि हरिजन हरि पाई, यह चौपाई है ॥ इस में हरि की प्राप्ति कहते हैं। तात्पर्य चारों की सेवा से भगवान मिलते हैं। शिव सेवा से मिलते हैं। यथा, जनक सुकृत मूरति बैदेही, दशरथ सुकृत राम धरे देही। इन सम काहुन शिव अवराधे, काहुन इन समान फल लाधे [१] संत सेवा से प्रभु मिलते हैं यथा, भवसागर कह नाव शुद्ध संतन के चरन तुलसी दास प्रयास बिनु मिलहिं राम दुष हरन (२) द्विज सेवा से भगवान मिलते हैं यथा, मन क्रम बचन कपट तजि जो कर भूसुर सेव,

मोहिं समेत बिरञ्च शिव बस ताके सब देव [३] सदगुरु की सेवा से भगवान मिलते हैं यथा, श्रीहरि गुरुपद कमल भजहु मन तजि अभिमान, जेहि सेवत हरि पाइये सुष निधान भगवान ॥ [४] शंकर १ संत २ ब्राह्मण ३ सदगुरु ४ और हरि ५ इन पांचों की सेवा बिना जीव संसार समुद्र से पार नहीं होता यथा, द्विज देव गुरु हरि संत बिनु संसार पार न पाइए ॥ इति विनय पत्रिका ग्रंथे ॥ इसी से पांचों की सेवा करने को कहते है ॥ यहां विवे-क और भक्ति है ॥

सरदातपनिसिससिअपहरई। संतदरसजिमिपातकटरई।

सरद के घाम की गरमी को रात्रि समय में चन्द्रमा हरता है जैसे संत के दर्शन से पाप टरता है ॥ निसि कहने का भाव। चन्द्रमा दिन में भी रहता है परन्तु गरमी रात्रिही में हरता है ॥ संत अपना दर्शन देकर जगत को सुखी करते हैं और भगवान का दर्शन करके आप सुखी होते है ॥ सरदातप निसि ससि अप हरई, संत दरस जिमि पातक टरई ॥ यहां संत को चन्द्रमा सम कहा देषि इन्दु चकोर समुदाई चितवहिं जिमि हरिजन हरिपाई । यहां हरि को चन्द्रमा सम कहा । संत और भगवान दोनो को चन्द्रमा सम कह के यह सूचित किया है कि जो सुख भगवान के दर्शन से संतों को है सोई सुख संतों के दर्शन से जगत वासियों को है ॥ यहां ज्ञान है ॥

देषिइन्दुचकोरसमुदा जिमिहरिजनहरिपाई

समूह चकोर चंद्रमा को देखते हैं जैसे हरि जन हरि को पाय

कर देखते हैं ॥ देखि इन्दु कहने का भाव । बर्षा में मेघों के समूह से चंद्रमा को नहीं देखते रहे अब शरद में देखते हैं । चितवहिं कहने का भाव, निर्गुन ब्रह्म देखते नहीं बनता रहा । जब सगुन भया तब देखते हैं ॥ हरि पाई कहने का भाव । हरि की प्राप्ति दुर्लभ है सदा काल हरि नहीं मिलते ॥ संत को चंद्रमा सम कह आए हैं । यथा, सरदा तप निसि ससि अप हरई, संत दरस जिमि पातक टरई, अब हरि को चंद्रमा सम कहते हैं । यथा, देषि इन्दु चकोर समुदाई, चितवहिं जिमि हरिजन हरि पाई ॥ इस से संत और हरि से अभेद दिखाते हैं ॥ भगवान संत रूप से जगत के लोगों को दर्शन देकर पाप ताप हरते हैं । यथा, संत दरस जिमि पातक टरई । निज रूप से अपने भक्तों को दर्शन का आनन्द देते हैं । यथा, चितवहिं जिमि हरिजन हरिपाई ॥ भक्तों में पाप ताप नहीं है इसीसे पाप ताप का नाश होना नहीं कहते दर्शन का आनन्द देना कहते हैं ॥ चंद्र चकोर के दृष्टान्त से भक्तों की अनन्यता दिखाते है अर्थात् भक्त लोग दूसरे को नहीं देखते जैसे, आकाश में अनेक नक्षत्र उगे हैं चकोर चंद्रमाही को देखता है ॥ वर्षा ऋतु में ज्ञान रीति से हरि की प्राप्ति कहा है । यथा, सरिता जल जलनिधि महु जाई, होइ अचल जिमि जिव, हरि पाई । जल में जल मिलगया ऐसेही जीव हरि में मिलगया । शरद में उपासना रीति से हरि की प्राप्ति कहते हैं । यथा, देषि इन्दु चकोर समुदाई, चितवहिं जिमि हरि जन हरि पाई । हरिजन हरि को पाय के देखते हैं यह कहने से उपासना भई ॥ यहां भक्ति है ॥

मसकदंसबीतेहिमत्रासा । जिमिद्विजद्रोहकियेकुलनासा ।

मसा और दंस अर्थात् बन की मक्खी जिसको लोग डांस कहते हिम की त्रास से बीने कहें नाश भए। जैसे ब्राह्मण से द्रोह कि कुल का नाश होता है॥ मसक छोटे हैं दंस बड़े हैं॥ तात्पर्य के कुल में जितने छोटे बड़े हैं सो सब नाश को प्राप्त । यहां विवेक है॥

दोहा।

भूमिजीव संकुल रहे। गए सरदरितु पाय॥

॥

भूमि में जीव सकुल कहे व्याप्त रहे शरदऋतु पाकर गए अर्थात् नाश भए॥ जैसे सद्गुरु मिलने से संपूर्ण संशय और भ्रम चले जाते हैं। भूमि जीव कहने का भाव, यहांतक जलचर नभचर कह आए अब भूमि के जीवों का हाल कहते हैं॥ सुखीमीन जहं नीर अगाधा, यहां जलचर कहा॥ गुंजत मधुकर मुखर अनूपा, यहां से मसकदंस हिम त्रासा यहांतक नभचर कहा॥ अब इस दोहा में थलचर कहते हैं॥ सुसंग का मिलना शरदऋतु के वर्णन का उपक्रम है, अर्थात्, प्रारंभ है॥ यथा, बिनसै उपजै ज्ञानजिमि पाय कुसंगसुसंग॥ सद्गुरु का मिलना इस प्रसंग का उपसंहार अर्थात् समाप्ति है॥ यथा, सद्गुरु मिले जाहिंजिमि संसय भ्रम समुदाय॥ यहां विवेक है॥ अब वर्षा शरद का मिलान कहते हैं हां गतग्रीषम वर्षारितु आई यहां वर्षाविगत सरदरितु आई (१) हां वर्षाकाल मेघ नभ छाए यहां बिनुघननिर्मल सोह अकासा (२)

:) दंशस्तु बन मक्षिका॥ इत्यमरः टीका बन की मक्खी को दंश कहते हैं॥

वहां, भूमिपरतभा डाबरपानी, यहां, सरितासर निर्मल जलसोहा (३) जं, [illegible] लातोराई, और, सिमिटि २ जलभराइ तलावा, यहां, रसरस सूष सरितसर पानी (४) वहां मह वृष्टि चलि फूटि कियारी यहां, कहुं कहुं वृष्टि सारदी थोरी, (५) वहां, हरित भूमि तृण संकुल समुझि परे नहिं पंथ, यहां, उदित अगस्ति पंथ जल सोषा (६) वहां, बिबिधि जंतु संकुल महि भ्राजा, यहां, भूमि जीव संकुल रहे गए सरद रितु पाय (७) वहां, देषियत चक्र वाक षग नाहीं, यहां, चक्रवाक मन दुष निसि पेषी [८] वहां जहं तहं रहे पथिक [illegible]नाना, यहां, चलेहरषि [illegible] भवा[illegible]

वर्षा शरद के वर्णन में गुशाईं जी ने बहुत वस्तु वर्णन किई है यथा, बेद पढ़े जनु बटु समुदाई, यह ब्राह्मण धर्म है, प्रजा बाढ़ जिमि पाइ सुराजा, यह क्षत्रिय धर्म है, उपकारी कै संपति जैसा यह वैश्य धर्म है, जिमि द्विज द्रोह किये कुल नाशा, यह शूद्र धर्म है, शूद्रस्तु द्विज सेवया सद् गुरु मिले जाहिं जिमि संशय भ्रम समुदाय, यह ब्रह्मचारी का धर्म है, गृही बिरति रत हर्ष जस विष्णु भक्त कहं देषि, यह गृहस्थ धर्म है, साधक मन जस मिल्यो विवेका, यह वाण प्रस्थ धर्म है, जिमि इन्द्रिय गन उपजे ज्ञाना, यह सन्यासी का धर्म है, संत लक्षण, षल के बचन संत सह जैसे, जिमि हरिजन हिय उपज न कामा, संत हृदय जस गत मद मोहा, हरिजन इव परि हरि सब आसा, 'खल लक्षण, षलके प्रीति यथा थिरनाहीं, जस थोरेहि धन षल इतराई, जिमि दुर्जन पर संपति देषी॥ कर्म ज्ञान उपासना की विधि, क्रोध रहित कर्म करै यथा, करै क्रोध जिमि धर्महि दूरी

साधन सहित विवेक करे यथा, साधक मन जस मिल्यो विवेका, काम रहित भक्ति करे, जिमि हरि जन हिय उपजन कामा, पाचों तत्वों का कार्य, ससि सम्पन्न सोह महि कैसी, सासि सम्पन्न होना यह पृथ्वी तत्व का कार्य है महावृष्टि चलि फूटि कियारी, कियारी का फूटना यह जल तत्व का कार्य है कबहुं दिवस मह निविड़ि तम कबहुंक प्रगट पतंग, प्रकाश करना यह अग्नि तत्व का कार्य है। कबहुं प्रबल बह मारुत जहं तहं मेघ बिलाहिं। मेघों का विलाना यह वायु तत्व का कार्य है विनघन निर्मल सोह अकासा, निर्मल होना यह आकाश तत्वका कार्य है, बुध लक्षण, बर्षहिं जलद भूमि नियराए, यथा, नवहिं बुध विद्यापाए। कृषीनिरावहिं चतुर किसाना, जिमिबुध तजहिं मोहमद माना। अबुध लक्षण, जलसंकोच बिकल भई मीना, अबुध कुटुम्बी जिमि धनहीना। मायाजीव ब्रह्म का लक्षण, भूमिपरत भा डावर पानी, जनु जीवहि माया लपटानी। जीव के स्वरूप को आवरण करना यह माया का लक्षण है, सरिता जलजल निधिमह जाई, होइ अचल जिमि जिवहरिपाई। हरि से विलग होना हरि में मिलना यह जीव धर्म है॥ फूले कमल सोह सर कैसा, निर्गुण ब्रह्म सगुन भे जैसा। यह ईस्वर का स्वरूप है। कर्म ज्ञान उपासना तीनो का फल, चातक रटत तृषा अति ओही, जिमि सुखलहै न संकर द्रोही, मसक दंस बीतेहिम त्रासा, जिमि द्विजद्रोह किये कुलनासा, दुःख सुख का होना कर्म का फल है। सरिता जल जल निधि मह जाई। होई अचल जिमि जिब हरि पाई॥

हरि होजाना यह ज्ञान का फल है॥ देखि इन्दु

चकोर समुदाई, चितवहिं जिमि हरिजन हरि पाई ॥ हरि को पाय कर हरि का दर्शन करना यह उपासना का फल है बर्षा बिगत शरद ऋतु आई, यहां से और भूमि जीव संकुल रहे इस दोहा तक शरद वर्णन प्रसंग ॥ राम जी वर्षा और शरद के सब अंग लछिमन जी को दिखाए इन्द्र धनुष नहीं दिखाया । तात्पर्य, इन्द्र धनुष का दिखाना धर्मशास्त्र में मना है ॥

वर्षा गत निर्मल ऋतु आई । सुधि न तात सीता कै पाई ॥

वर्षा बीत गई निर्मल ऋतु आई, हे तात सीता की सुधि न मीली बर्षा बिगत सरद रितु आई, और वर्षा गत निर्मल रितु आई- यह पुनरुक्ति है ॥ समाधान ॥ बर्षा बिगत सरद रितु आई यह लछिमन जी के दिखाने के वास्ते कहा है सोई आगे कहते हैं कि लछिमन देषहु परम सोहाई, और बर्षा गत निर्मल रितु आई, यह सीता की सुधि न पानेपर कहा है सो आगे कहते हैं, कि सुधि न तात सीता कै पाई ॥ इससे पुनरुक्ति नहीं है ॥ वर्षा गत कहने का भाव, वर्षा तक सीता की सुधि मिलने की अटक रही अब निर्मल रितु आई । सीता की सुधि मिलने लायक समय भया और सुधि न मिली ॥

(१) नदि वीन्द्रायुधं दृष्ट्वा कस्य चिद्दर्शयेद्बुधः ॥ इति मनुः ॥ टीका पण्डित लोगों को उचित है कि आकाश में इन्द्र धनुष देख कर किसी और को न दिखावें ॥

(२) श्लोक पश्य लक्ष्मण मे सीता राक्षसे न हृता बलात् मृता मृता वा निश्चेतुं नजाने घापि भामिनीम् । इति अध्यात्मे पंचम सर्गे ॥ टीका हे लक्ष्मण देखो हमारी सीता को राक्षस ने बलात्कार से हर लिया· वह स्त्री मरगई या जीती है इसका हम आजतक निश्चय नहीं कर सके हैं ।' यहां स्मृति भाव है ॥

एक बार कैसेहु सुधि जानों, कालहु जीती निमिषमह आनौं

एक बार कैसेहु सीता की सुधि हम जानैं तौ काल को भी जीति के उसको पल में ले आवैं गे। कैसेहु सुधि जानौं अर्थात् मरे की या जीते की॥ काल के जीतने का भाव, मरने पर जीव काल ही के यहां रहता है इसीसे काल को जीतना कहा॥ सुधि मिलने में वर्षों की अटक रही सुधि मिले पर ले आने में पल भर अटक न होगी। थोड़े काल का वाचक है अर्थात् थोड़े ही काल में ले आवैंगे॥

१७ [illegible] होई। तात जतन [illegible]।

कहीं रहै जौ [illegible] होगी तौ हठात सोई सीता को जतन कर के लेआवैंगे॥ काल के बस होना प्रथम कहते हैं जीना पीछे कहते हैं क्योंकि राक्षस के भय से मरी होगी या उन्हों ने उस को खा लिया होगा या हमारे वियोग में मरी होगी। इसीसे जीने में 'जौ' पद देते हैं॥ कतहुं रहौ कहने का भाव। मरे का ठिकाना काल के यहां है जीते का ठिकाना नहीं है। मरी होगी तो पल में लेआवैंगे कदाचित जीती होगी तो सुधि के लिये यत्न करना पड़ेगा॥

(१) श्लोक दृढं हि हृदये बुद्धिर्मम संपरि वर्तते नालं वर्तयितुम् सीता साध्वी मद्विरहंगता॥ इतिवाल्मीकीये प्रथम सर्गे॥ टीका हमारे हृदय में दृढ निश्चय है कि हमारे विरह को प्राप्त हुई पति व्रता सीता जीती न रह सकेगी॥

(२) श्लोक यदि जानामितां साध्वीं जीवंतीं यत्र कुत्रवा हृत्वा देवा हरिष्यामि सुधामिवपयो निधेः॥ इति अध्यात्मे पंचम सर्गे॥ टीका यदि हम उस सती को कहीं भी जीती हुई जानलैं तो हठात् अर्थात् जबरदस्ती उस को लेआवैंगे जैसे समुद्र से अमृत लाया गया है॥

त भेजने और पता लगाने में कुछ विलम्ब होगा ॥

वहुं सुधि मोरि विसारी। पावा राज कोस पुर नारी

आव ने भी हमारी सुधि विसराय दिई राज खजाना नगर और स्त्री पागये। तात्पर्य, राज कोश पुर नारी इनमें जो एक भी बाकी रहता तो सुग्रीव हमारी सुधि न विसराते ॥ सुग्रीवहु कहने का भाव, काल तो हमारे पर विपरीत ही है हम को ... ं द्वारा हमारी स्त्री का मरण किया और सुग्रीव ने भी हमारी सुधि ... म काल को भी जीतेंगे सुग्रीव को मारेंगे ॥ यह ... कहने से अपने को दुखी जनाते हैं ॥ ... कोश पुर नारी पायके हमारी सुधि विसराय दिई। यह कहने से सुग्रीव को कृतघ्नी सूचित किया ॥ विसारी कहने का भाव, सुग्रीव ने हमारी सुधि जान के विसराय दिई है सुधि विसर नहीं गई ॥

जेहि सायक मारा मैं बाली। तेहि सर हतौं मूढ़ कहं काली

जिस बान से हम ने बालि को मारा है तिसी बान से मूढ़ को कल मारैंगे यह बचन केवल भय दिखाने के वास्ते है आगे राम जी के वचन से स्पष्ट है। यथा, भय दिखाय लै आवहु तात सखा सुग्रीव ॥ मूढ़ कहने का भाव, हमारा कार्य उसने विसराय दिया

१) श्लोक सुग्रीवोपि दयाहीनो दुःखितं मां न पश्यति राज्यं निष्कंटकं प्राप्यस्त्रीभिः परिवृतो रहः। इति अध्यात्मे पंचम सर्गे ॥ टीका सुग्रीव भी दया हीन होकर मुझ दुःखी को नहीं देखता है अचल राज्य को पाय कर एकान्त में स्त्रीयों में आशक्त है ॥

२) श्लोक पूर्वोपकारिणं दुष्टः कृतघ्नो विस्मृतो हिमाम् इति अध्यात्मे पंचम सर्गे ॥ टीका दुष्ट और कृतघ्नी (सुग्रीव ने) मुझ पहले उपकार करने वाले को भुलाय दिया ॥

यथा, सुग्रीवहुं सुधि मोरि बिसारी, और हमारा उपकार भुलाय दिया यथा, पावा राज कोश पुर नारी ॥ हमारा बल बिसराय दिया यथा, जेहि सायक मारा मैं बाली, उस बान की खबर नहीं है इसी से मूढ़ कहा ॥

जासुकृपाछूटहिंमदमोहा। ताकहउमाकिसपनेहु कोहा।

हे उमा जिस के कृपा से मद मोह छूटते हैं तिसको क्या सपने में क्रोध होता है अर्थात् नहीं होता। यथा क्रोध मनोज लोभ मद माया, छूटैं सकल राम की दाया ॥ मद मोह कहने का भाव, । मद और मोह ये क्रोध के मूल हैं तेई जब राम कृपा से नाश होते हैं तब तिन को क्रोध कैसे होगा ॥ उमा संबोधन कहने का भाव, । उमा को संदेह भया कि ईश्वरके हृदय में क्रोध कैसे भया इसी पर महादेव जी ने समाधान किया है ॥ ईश्वर को स्वप्न नहीं होता । स्वप्न अज्ञानता है जो यहां स्वप्न कहा सो माधुर्य लीला के अनुकूल कहा है ॥

जानहिंयहचरित्रमुनिज्ञानी। जिन्हरघुवीरचरनरतिमानी॥

ईस चरित्र को मुनि और ज्ञानी और जिन्हों ने रघुबीर के चर-

---

(१) श्लोक मायया मोहितास्सर्वे जना अज्ञान संयुताः कथ मेषां भवेन्मोक्ष इति विष्णु र्विचिंतयन् कथां प्रथयतुं लोके सर्वलोक मलापहां रामायण विधां रामोभूत्वा मानुष चेष्टकः क्रोधं मोहंच कामंच व्यवहारार्थ सिद्धये । इति अध्यात्मे पंचम सर्गे ॥ टीका सब लोग माया से मोहित होकर अज्ञानी होगए उनका मोक्ष कैसे होगा यह चिन्ता कर के विष्णु भगवान ने लोक में कथा विस्तार के लिये सब लोगों के पाप नाश करने वाली रामायण को बनाया और मनुष्य शरीर धारण कर के व्यवहार निबाहने के लिये क्रोध मोह और काम को रामजी ने ग्रहण किया ॥

न में रति कहें प्रीति मानी है सो जान्ते हैं कि सब के कृतार्थ करने के अर्थ राम जी नर लीला करते हैं उन में काम क्रोध लोभ मोह नहीं हैं ॥ मुनि से अधिक ज्ञानी जान्ते हैं ज्ञानी से अधिक उपासक जान्ते हैं ॥ वर्षा गत निर्मल रितु आई यहां से जानहिं यह चरित्र मुनि ज्ञानी यहांतक राम रोष प्रसंग है ॥

लछिमन क्रोध वंत प्रभु जाना। धनुष चढाइ गहे कर बाना।

लछिमन जी ने राम जी को क्रोध वंत जाना तव धनुष चढाय के बान हाथ में लिया अर्थात् सुग्रीव के मारने को तैयार भए क्रोध वंत जाना कहने का भाव, प्रभु क्रोध वंत नहीं हैं ऊपर से क्रोध दिखाते हैं और लछिमन जीने जाना कि रामजी क्रोध वंत हैं ॥ शंका मुनि और ज्ञानी और चरन रत मानी जान्ते हैं कि प्रभु के क्रोध नहीं हैं और लछिमन जी ने प्रभु को क्रोध वंत जाना। इससे पाया गया की लछिमन जी ज्ञानी और चरन रतमानी नहीं हैं ॥ समाधान, लछिमन जी ज्ञानी और चरन रत मानी हैं । राम जी लछिमन जी को यह चरित्र नहीं जनावते ॥ क्रोध का मूल विरह है बिरह का मुल सीता हरण है सोई लछिमन जी को नहीं जनाया । यथा लछिमनहूँ यह मरम न जाना, जो कुछ चरित रचा भगवाना ॥ जो ये वातें लछिमन जी जानेतो रामजी से बिरहादि लीला न करते बने संकोच होय ॥

:) श्लोक विदंति मुनयः के चिज्जानन्ति सनकादयः मद्भक्ता निर्मलात्मानः सम्यक्जानन्ति नित्यदा ॥ इति अध्यात्मे पंचम सर्गे ॥ टीका इस चरित्र को कोई मुनि जानते हैं और सनकादिक जानते हैं और निर्मल आत्मा वाले हमारे भक्त अच्छी तरह सदा जानते हैं

। तात सषा सुग्रीव ॥ १८ ॥

राम जी करुणा के सींव हैं इसीसे तब लाछमन जी को समुझाया कि हे तात सुग्रीव सखा है भय दिखा के लेआव। सखा को मारना अनुचित है अपना बनाया आपहीं न बिगाडना चाहिये रघुपति कहने का भाव, सब रघुवंशी करुणा युक्त हैं॥ राम जी तो रघुवंशीयों के पति हैं इसीसे करुणा के सींव हैं अर्थात् करुणा में सब से अधिक हैं॥ करुणा सींव कहने का भाव, सुग्रीव पर राम जी की करुणा है क्रोध नहीं है। अनुज कहने का भाव, सुग्रीव हमारे सखा हैं इसीसे हमारे समान हैं और तुम्हारे मान करने के योग्य हैं क्योंकि तुम हमारे अनुज अर्थात् छोटे भाई हो॥

यहां हनुमान जीने हृदय में बिचार किया कि सुग्रीव ने राम काज बिसराय दिया शरद ऋतु आयके प्राप्त भई और वह अनेक सुख भोग रहे हैं रामकार्य की सुधि नहीं है जो सुधि होती तो हमसे कार्य करने को कहते। सुग्रीव को राम कार्य भूल गया हनुमान जीको नहीं भूला क्योंकि राम कार्य करने के वास्ते इनका

(१) गन्तु मभ्युद्यतं वीक्ष्य रामो लक्ष्मण मब्रवीत् नहन्तव्यस्त्वया वत्स सुग्रीवो मे प्रिय स्सखा किन्तु भीषय सुग्रीवं बालिवद्यहनिष्यसे ॥ इति अध्यात्मे पंचम सर्गे ॥ टीका—रामजी लक्ष्मणजीको जाने के लिये तय्यार देख कर बोले हे वत्स तुम मेरे प्रिय मित्र सुग्रीव को बालि की नाईं मत मारना परन्तु उसे भय दिखाना ॥

अवतार है ॥ यथा, राम काज लगि तव अवतारा ॥

श्लो०१ [illegible]

निकेट जायके चरणों में सिर नवाया तिन सुग्रीव को चारों [illegible] से कहि के [illegible] जाने का भाव, यह समाज में कहने लायक नहीं है इसीसे निकट जाय के कहा जिस में सुग्रीव ही सुनै दूसरा कोई न सुनै क्योंकि दूसरे के सुनने से राजा की हलकाई है ॥ राम जी का कार्य करने के वास्ते सुग्रीव को सिखापन देते हैं इसीसे चरणो में सिर नाय के बोले ॥ राजाओं से सिर नाय के नम्रता पूर्वक बोल ने की रीति है ॥ अब हनुमान जी चारों विधि से सुग्रीव को समझाते हैं कि राम जी ने तुम्हारे साथ प्रीति किई यह साम है तुम को राज्यदिया यह दान है बालि अंगद को राम जी को सौंपगया राम जी उसी को राज्य दें तो तुम क्या करसके हौ । यह भेद है, और जिन्हों ने बालि ऐसे वीर को मारा उन के सामने तुम क्या हौ यह दण्ड है, येही चारों बिधि हैं ॥ यहां पवन सुत हृदय बिचारा यह मन है ॥ निकट जाय चरनन्हि सिर नावा यह तन है । चारिहु बिधि तेहि कहि समुझावा यह वचन है अर्थात् मन से

(१) श्लोक हनूमान् प्राह सुग्रीव मे कान्ते कपि नायकम् शृणु राजन् प्रवक्ष्यामितवैव हित मुत्तमम् रामेण तेकृतः पूर्व मुपकारो ह्यनुत्तमं करोमीति प्रतिज्ञायसीतायाः परिमार्गणम नकरोषि कृतघ्नस्त्वं हन्यसे बालिवद्द्रुतम् ॥ इति अध्यात्मे चतुर्थ सर्गे ॥ टीका एकान्त में हनूमान जी वानरों के राजा सुग्रीव से बोले हे राजन् सुनो हम तुम्हारा सुन्दर हित कहते हैं रामजी ने तुम्हारा प्रथम बड़ाभारी उपकार किया है तुमने प्रतिज्ञा किई थी कि हम सीताकी खोज करेंगे सो यदि इस प्रतिज्ञा को पूरी न करोगे तो कृतघ्नी तुम बालि के समान शीघ्र मारे जावोगे ॥

स्वामी का हित विचारा तन से नम्र भए और बचन से हित कहा ॥

सुनिसुग्रीवपरमभयमाना। विषयमोरहरिलीन्हेउज्ञाना।

सुग्रीव ने सुन कर बड़ा भय माना कि विषय ने मेरे ज्ञान को हरलिया ॥ भय माना कह ने का भाव, अब तक सुग्रीव को भय नहीं रहा अब हनुमान जी के समझाने से भय भया।

अबमारुतसुतदूतसमूहा । पठवहुजहंतहंबानरजूहा।

हे पवन सुत अब जहां बानरों के जूथ हैं तहां बहुत से दूत उनके ले आने के वास्ते भेजो ॥ मारुत सुत कह ने का भाव, तुम जल्दी काम करने वाले हो इस से जल्दी करो। शीघ्रगामी बानरों को भेजो ॥ समूह दूत कह ने का भाव, दूतों की संख्या में अनेक मत हैं । अध्यात्म रामायण में देश हज्जार दूत भेजने को कहा बाल्मीकीय में सैकडों हज्जारों करोडों दूत भेजने को कहा है इसी से गुसाइं जी सब के मत के अनुकूल समूह दूत कहते हैं । दूतों की संख्या नहीं कहते ॥ जहां तहां कह ने का भाव, गुशाइं जी स्थान का भी नियम नहीं करते हैं क्यों कि इस में भी अनेक मत हैं । अध्यात्म में

(२) श्लोक शतान्यथ सहस्राणि कोट्यश्च मम शासनात् प्रयांतुकपि सिंघानां निदेशे मे येस्थिताः इतिबाल्मीकीये सप्तविंशतिः सर्गे ॥ टीका कपियों मेंश्रेष्ठहमारी आज्ञा पालन करने वाले सैकडों हजारों करोडों बानर हमारी आज्ञा से जावें ॥

सातो द्वीप कहे हैं। वाल्मीकीय में अनेक पर्वत गिनाए हैं ॥

कहेहुपाषमह आवनजोई। मोरेकर ताकरवध होई।

सुग्रीव ने कहा कि पाख भर में जो न आवैगा तिसका बध मेरे हाथ से होगा जो बुलाने जाते हैं, और जिनको बुलाने जाते हैं, सो सब पंद्रह दिन में न आवेंगे तो हमारे हाथ से मारे जांयगे। हे हनुमान तुम दूतों से ऐसा कहो और दूत जाकर बानरों से कहें॥

तवहनुमंतबुलाएदूता। सबकरकरिसनमानबहूता ॥

तव हनुमान जी ने दूतों को बुलाया। सब का बहुत सनमान करके ॥ तव कहने का भाव, जब सुग्रीव ने हुकुम दिया तब बुलाया विना राजा के हुकुम हनुमान जी कुछ काम नहीं कर सक्के रहे ॥

भयअरुप्रीतिनीतिदिषराई। चलेसकलचरनन्हिसिरनाई

(१) श्लोक सप्तद्वीप गतान्सर्वा वानरानानयन्तुते। इति अध्यात्मे चतुर्थ सर्गे ॥ टीका सातों द्वीपों में रहने वाले जोवानर हैं तिनको लेआवो ॥

(२) श्लोक महेन्द्र हिमवद्विन्ध्य कैलाश शिषरेषु च मंदरं पांडु शिखरे पंच शैलेषु ये स्थिताः इति वाल्मीकी ये सप्तत्रिंशतिः सर्गे ॥ टीका महेन्द्र हिमांचल विन्ध्याचल कैलाश मंदराचल आदि पर्वतों के शिखरों पर रहने वाले ॥

(३) श्लोक पक्षमध्ये समायान्तु सर्वे वानर पुंगवाः ये पक्षमति वर्तन्ते तेवध्या मेन संशयः ॥ इति अध्यात्मे चतुर्थ सर्गे ॥ टीका सब श्रेष्ठ वानर पंद्रह दिन के भीतर आवें जो पंद्रह दिन के उपरान्त आवेंगे वे निः संदेह मेरेसे मारे जाने के योग्य होंगे

(४) श्लोक सुग्रीवाज्ञा पुरस्कृत्य हनूमान् मंत्रिसत्तमः तत्क्षणे प्रेषया मास हरिन्द शद्दिशः सुधीः ॥ इति अध्यात्मे चतुर्थ सर्गे ॥ टीका सुग्रीव की आज्ञा को मानकर मंत्रियों में उत्तम और बुद्धिमान जो हनुमान हैं उन्हों ने उसीसमय दशों दिशाओं में वानर भेजदिये ॥

हनुमानजी भय और प्रीति और नीति बानरों को दिखाते भए सब बानर हनुमानजी के चरणों में सिर नाय के चले। पक्ष भर में ... फिरके न आवेगा तिसका वध राजा अपने हाथ से करेंगे ॥ यह भय दिखाया ॥ जो शीघ्र आवेगा उसपर राजा प्रसन्न होंगे यह प्रीति दिखाई ॥ सेवक का धर्म है कि स्वामी की आज्ञा मान के उसका काम करे। यह नीति दिखाई ॥ सुग्रीव का हुकुम भय दिखाने का है ॥ यथा, कहेहु पाख महं आवन जोई, मोरे कर ताकर वध होई। इसीसे प्रथम भय दिखाया। प्रीति और नीति अपनी ओर से दिखाई ॥

यहिअवसरलछिमनपुरआए। क्रोधदेषिजहंतहंकपिधाए।

इस अवसर में अर्थात् जब हनुमानजी दूत भेज चुके तब ... मनजी पुर में आए। लछिमनजी का क्रोध देख के बानर लोग उनसे लड़ने के वास्ते जहां तहां से दौड़े ॥ क्रोध देषि कहने का भाव, लछिमनजी ने क्रोध की चेष्टा दिखाई नेत्र लाल किये धनुष, ... या क्योंकि रामजी की आज्ञा मारने की नहीं है भय दिखा ने की है ॥

दोहा।

...ब। जारि करौं पुर छार।

तब। आयो बालि कुमार ॥

(१) श्लोक चक्रुः किल किला शब्दं धृत पाषाण पादपाः तान् दृष्ट्वा क्रोध ताम्राक्षो वानरान् लक्ष्मणास्तदा ॥ इति अध्यात्मे पंचम सर्गे ॥ टीका बानर लोग पत्थर और वृक्षों को हाथ में लियेहुये किल किलाने लगे उस समय लक्ष्मण के नेत्र उन बानरों को

लछिमन जी धनुष चढाय ये बोले कि अग्निबान से पुर को जला के हम भस्म करते हैं। तब नगर को व्याकुल देख के बालि कुमार आये॥ पुर भस्म करने का भाव, पुर भरे के बानर युद्ध करने को आए हैं इसीसे पुर भस्म करने को कहते हैं। जारि करौं पुर छार कहने का भाव, मुख से कह के भय दिखाते हैं ॥ जारि करौं पुर छार इतना सुनते ही नगर व्याकुल होगया। बालि कुमार कहने का भाव, अंगद बालि के समान बुद्धिमान हैं बालि के वचन से रामजी ने प्रसन्न हो के उनके सीस पर हाथ फेरा ॥ अंगद के वचन से लछिमन जी ने प्रशन्न होके अभय बांह दिई अथात् निर्भय किया ॥ दूसरा भाव, बालि नगर के रक्षक रहे इस समय अंगद ने भी नगर को बचाया॥ नगर से नगर वासी जानना यह निरूढ लक्षण है

चरननायासिरबिनतीकीन्ही॥लछिमनअभयबांहतेहिदीन्ही।

अंगद ने लछिमन जी के चरणो में सिर नाय के विन्ती किई अर्थात् अपराध क्षमा कराया। अंगद को लछिमन जीने अभय बांह दिई कितुम को कोई भय नहीं है तुम तो हमारे ही हो तुह्मारे

(१) श्लोक निर्मूलान् कर्तुं मुद्युक्तो धनुरालम्य वीर्यवान् ततः शीघ्रं समापत्य ज्ञात्वा लक्ष्मण मागतं निवार्य वानरान्सर्वा नंगदो मंत्रिसत्तमः॥ इति अध्यात्मे पंचम सर्गे ॥ टीका बलवान् धनुष को चढाय कर के बानरों के निर्मूल करने को तय्यार हुए तब लक्ष्मण का आगमन जानकर मंत्रियों में श्रेष्ठ अंगद ने शीघ्र आकर के सब बानरों को हटा दिया ॥

(२) श्लोक गत्वा लक्ष्मण सामीप्यं प्रण नाम सदण्डवत् ततोऽगदं परीष्वज्य लक्ष्मणः प्रिय वर्द्धनः ॥ इति अध्यात्मे पंचम सर्गे ॥ टीका लक्ष्मण के समीप जायकर दण्डवत् प्रणाम किया तब प्रीति के बढाने वाले लक्ष्मणजी ने अंगद को आलिंगन किया ॥

पिता हमको सौंप गए हैं तुम्हारे कहने से हम नगर को भस्म नहीं करेगें।

क्रोधवंतलछिमनसुनिकाना।कहकपीसअतिभयअकुलाना

लछिमन जी को क्रोधवंत कानो से सुनिके सुग्रीव अत्यंत भय से अकुलाते भये और बोले ॥ सुनि कहने का भाव, बानरों ने लछिमन जी के क्रोध को देखा। यथा, क्रोध देषि कपि जहं तहं धाए। सुग्रीव महल के भीतर हैं इसीसे उन्होंनें कानो से सुना। प्रथम अंगद को अभय बांह देना कहा पीछे सुग्रीव का सुनना कहा इससे पाया गया कि अंगद ने सुग्रीव को खबर दिई ॥ सुग्रीव के अति भय भीत होने का भाव, हनुमानजी के समझाने से सुग्रीव परम भय को मानते भये। यथा, सुनि सुग्रीव परम भय माना अब लछिमन जी का क्रोध सुन के अति भय से अकुलाय गए ॥

हनुमंत

हे हनुमान सुनो तारा को संग लेके बिन्ती करके कुमार जो लछिमन हैं तिनको जाके समझाओ। तारा के पठावने का भाव, स्त्री

(१) श्लोक उवाच वत्स गच्छत्वं पितृव्याय निवेदय मामागतं राघवेण चोदितं रौद्र मूर्तिं नातथे तित्वरितं गत्वा सुग्रीवायनि वेदयत् लक्ष्मणः क्रोध ताम्राक्षः पुरद्वारबहिस्थितः तच्छ्रुत्वा तीव संत्रस्तः सुग्रीवो वानरेश्वरः ॥ इति अध्यात्मे पंचम सर्गे ॥ टीका बोले कि हे वत्स तुम जाव अपने चाचा से निवेदन करो कि रघुनाथजी ने क्रोध युक्त हो कर लक्ष्मन को भेजा है ठीक है अंगद ने ऐसा कह के शीघ्र जाके सुग्रीव से कहाकि लक्ष्मन क्रोध से लाल आंख किये हुवे पुर द्वार के बाहर खड़े हैं ॥ अंगद के वचन सुनि के वानरों के राजा सुग्रीव अत्यन्त भय भीत भये ॥

(२) श्लोक नहि स्त्रीषु महात्मानः क्वचित्कुर्वंति दारुणम् ॥ इति वाल्मीकीये त्रयःत्रिंशःसर्गे टीका महात्मा पुरुष स्त्रीयों पर कभी कठोरता नहीं करते ॥

पर महात्मा क्रोध नहीं करते अथवा तारा को बड़ी बुद्धिमान समुझ के भेजा कि यह लछिमन जी को समझा के प्रसन्न करेगी और हनुमानजी को बुद्धि विवेक विज्ञान के निधान समुझ के भेजा ॥ करि बिनती समुझाव कहने का भाव जब बिनती से शीतल होजाय तब समुझाना ॥ कुमार कहने का भाव, लछिमनजी राज कुमार हैं उनको नीति शास्त्र से समझाव नीति में ऐसा लिखा है कि अपने बनाए को आपही न बिगाड़े आपने अपने हाथ से सुग्रीव को तिलक किया है ॥

तारा सहित जाय हनुमाना। चरन बंदि प्रभु सुजस बषाना।

तारा सहित जाके हनुमानजी ने लछिमनजी के चरणो की बंदना करके प्रभु के सुयश को बखान किया, जाय कहने का भाव, लछिमनजी दरवाजे के बाहर खड़े हैं उनको चलके मिले प्रभु का सुयश बखाना कि जन अवगुन प्रभु मान न काऊ, दीन बंधु अति मृदुल सुभाऊ ॥ पुनः न घटै जन जो रघुबीर बढ़ायो ॥ इति कवित्त रामायणे ॥

करि बिनती मंदिर लै आए। चरन पषारि पलंग बैठाए।

बिन्ती करके मंदिर में लेआए और चरण धोकर पलंग पर उनको बैठाया ॥ मंदिर में लेआए इससे यह सूचित भया कि सुग्रीव की आज्ञा उनको मंदिर में लेआने की रही ॥ मंदिर में लेआने से

१ श्लोक शांत्वयन्कोपि तं धीरं शनै रानय मंदिरम् ॥ इति अध्यात्मे पंचम सर्गे ॥
टीका कोपित बीर को शान्त करते हुवे धीरेधीरे मन्दिर में लेआओ ॥

लछिमनजी का अधिक मान भया और सेवा बनी सो सेवा आगे लिखते हैं चरन पषारि पलंग बैठाए ॥

तबकपीसचरनन्हिसिरनावा।गहिभुजलछिमनकंठलगावा।

तब सुग्रीव ने आय के चरणो में सिर नवाया और लछिमनजी ने सुग्रीव की भुजा पकड़के उनको कंठ में लगाया ॥ तब कहने का भाव, जब समुझाने से प्रभु के सुयश सुनाने से और सेवा कर ने से लछिमनजी का क्रोध शान्त भया तब सुग्रीव ने चरणो में सिर नवाया। कपीस कहने का भाव, सुग्रीव कपियों के राजा हैं नीति जान्ते हैं नीति के अनुकूल ऐसाही करना चाहिये ॥ उन्हों ने क्रम से लछिमनजी के क्रोध को शान्त किया प्रथम अंगद आए बिन्ती किई पश्चात् तारा आई पांव पड़ी बिन्ती किई तब सुग्रीव लछिमनजी के चरणो पर पड़े ॥

।मुनिमनमो [illegible] हीं।

हे नाथ विषय के समान और कोई मद नहीं है। मुनि जो मनन शील अर्थात, ज्ञान के बिचार करने वाले हैं, तिन के मन को क्षण में मोहित करता है। विषय सम और मद नहीं है, तात्पर्य, और मद अज्ञानियों को मोहते हैं, और विषय मद ज्ञानियों के भी मन को मोहता है ॥ मुनि मन मोह करहिं कहने का भाव, विष-

१ श्लोक घृताच्याकिल संशक्तो दश वर्षाणि लक्ष्मण अहोमन्यत धर्मात्मा विश्वामित्रो महामुनिः ॥ इति वाल्मीकीये पंच त्रिंश सर्गे ॥

टीका हे लक्ष्मण महामुनि धर्मात्मा बिश्वामित्र ने दशवर्ष तक घृताची [illegible] से आशक्त होकर अपने को धन्य माना ॥

य मन को मलीन करता है। यथा, काईविषय मुकुरमन लागी ॥

बिनीत अर्थात् नम्र बचन सुनतेही लछिमन जी सुखी भए और उन्होंनें सुग्रीव को अनेक प्रकार से समझाया कि तुम भय न मानो हम ने तुम पर क्रोध नहीं किया तुम रामजी के सखा हो तुम पर रामजी की कृपा है तुम महाराज के पास चलो॥

पवनतनयसबकथासुनाई। जेहिबिधिगएदूतसमुदाई ।

हनुमानजी ने सब कथा सुनाई जिस प्रकार से समूह दूत गए हैं अर्थात् चारों दिशा बानरों के जाने की कथा और संख्या कही॥ हनुमानजी ने लछिमनजी को क्रोधित जान के यह सब कथा प्रथम नहीं सुनाई अब समय पाय के सुनाई और सुग्रीव नेभी दूतों का जाना नहीं कहा कि हमारे कहने से लछिमनजी को विश्वास न होगा और यह जानेंगे कि सुग्रीव भय से बात बनाय के कहते हैं अभी दूत नहीं भेजे हैं इसी वास्ते उन्हों ने हनुमानजी से कहवाया कि इनके कहने से लछिमनजी को विश्वास होगा॥

दोहा।

हरषि चले सुग्रीव तब। अंगदादि कपि साथ।
रामानुज आगे करि । आए जहं रघुनाथ॥ २० ॥

तब सुग्रीव हर्ष करके अंगदादि कपियों को साथ में लेके चले लछिमनजी को आगे करके जहां रघुनाथजी हैं तहां आए ॥ रामजी के कार्य का प्रारंभ भया दूत गए इसीसे सुग्रीव

पास हर्ष से चले ॥ रामानुज कहने का भाव, लछिमनजी रामजी के अनुज हैं रामजी के समान मान के उनको आगे किया । व के चलने का प्रकार दोहा में दिखाते हैं । आगे लछिमनजी पीछे सुग्रीव हैं तिनके पीछे अंगद हैं अंगद के पीछे सब बानर हैं॥

नायचरनसिरकहकरजोरी। नाथमोहिकछुनाहिंनषोरी ।

सुग्रीव ने रामजी के चरणों में सिर नाय के हाथ जोड़ के कहा कि हे नाथ हमारा कुछ दोष नहीं है ॥ रामजी माथ के नवाने और हाथ जोड़ने से प्रसन्न होते हैं ॥ यथा, भल मानिहैं रघुनाथ जोरि जो हाथ माथो नाइ है, ततकाल तुलसी दास जीवन जन्म को फल पाइ है॥ और अपराध क्षमा कराने का उपाय भी यही है॥ बिन्ती करना चरणो पर पड़ना इसीसे सब चरणो पर पड़े और बिन्ती किई ॥ यथा, चरन नाइ सिर बिनती कीन्ही (१) चरन बंदि प्रभु सुजस बषाना [२] चरन पषारि पलंग बैठाए [३] तब कपीस चरनन्हि सिरनावा [४] नाय चरन सिर कह कर जोरी (५) इत्यादि सुग्रीव से अपराध भया सो अपराध औरों पर डारके आप निर अपराधी होते हैं ॥ उन्हो ने प्रथम कहा कि नाथ मोहि कछु नाहिंन षोरी, अब जिनकी खोरि है तिनको आगे कहते हैं ॥

अतिसयप्रबलदेवतवमाया । छूटहिरामकरहुजौदाया ।

हे देव तुम्हारी माया अत्यन्त प्रबल है हे राम जौ दाया करौ तो छूटै ॥ अतिसय प्रबल कहने का भाव, माया तुह्मारी ब्रह्मादि को भी वस करने वाली है । यथा, जाकी माया बस बिरंचि शिव नाचत पार न पायो ॥ छूटै राम करहु जौ दाया कहने का भाव, जब

तुमहीं दाया करौ तब छूटै और किसी के छुटाए से नहीं छूटती ॥ माया कहके आगे माया का परिवार कहते हैं विषय काम क्रोध लोभ ये सब माया के परिवार हैं ॥

विषयबस्यसुरनरमुनिस्वामी।मैंपांवरपसुकपिअतिकामी।

हे स्वामी सुर नर मुनि सब विषय के वस हैं सुर में ब्रह्मा ने सरस्वती को बना के आपही भोग करने की इच्छा किई ॥ इन्द्र ने अहल्यासे संग किया। नरों में मनु आदि । मनु ने कहा कि, होय न विषय विराग। भवन बसत भा चौथ पन। मुनियों में नारद काम केबस भए बिवाह करनेकी इच्छा किई। बिश्वामित्र ने उरवसी से संग किया। देवता सत्वगुण से भए ज्ञान के स्वरूप हैं, और मनुष्य का तन गुण ज्ञान का निधान है और मुनिलोग मनन शील हैं ॥ जब ये सब विषय के बस भए तब हम पांवर अर्थात् तुच्छ पशु अतिकामी हमारी क्या गिन्ती है। सुग्रीव ने लछिमन जी से जैसी निः कपट बात कही है। यथा, नाथविषयसम मद कछु नाहीं ॥ मुनिमन मोह करै छन माहीं ॥ तैसेही रघुनाथ जी से कहते हैं, कि, विषय वस्य सुरनरमुनि स्वामी। मैं पांवर पशु कपि अति कामी ॥ इसीसे दोनो भाई सुग्रीव पर प्रसन्न भए रूप रस गंध शब्द स्पर्श यह पांच विषय हैं, इन के बस वाहर की इन्द्रियां होती हैं ॥ काम क्रोध लोभ के बस अंतर की इन्द्रियां होती हैं, सो आगे कहते हैं ॥

नारिनयनशर जाहिनलागा। घोरक्रोधतमनिसिजोजागा

जिस को नारी के नयन सर नहीं लगे जो घोर क्रोध रूपी

अंधेरी रात में जागता है ॥ नारी के नयन को सर कहने का भाव, नेत्रों का कटाक्ष वाण की नाईं हृदय को वेधता है ॥ कामदेव भौंह रूपी कमान चढ़ाकर नयन बान से लोगों को मारता है, सुग्रीव काम के बस भए इसीसे प्रथम काम की प्रबलता कही ॥ क्रोध को अंधकार कहने का भाव, अंधकार में कुछ सूझता नहीं ऐसेही क्रोध होने से कुछ नहीं सूझता उस के बस होकर लोग अनुचित कर्म करते हैं ॥

लोभपासजेहि गरनबंधाया। सोनरतुमसमान रघुराया।

हे रघुनाथ जी जिसने लोभ की पास कहे फांसीसे अपना गर नहीं बंधाया सो नर तुम्हारे समान है ॥ लोभ नट है आशा पास है, यथा, लोभ मनहिं नचावकपि ज्यों गरे आशा डोरि। इति विनयपत्रिका ग्रंथे ॥ पुनः लोभ सबै नट के बसह्वै कपि ह्वै जग में बहु नाचन नाचै ॥ इति कवित्त रामायणे ॥ गर न बंधाया कहने का भाव, बांनर अपना गर आपही बंधाता है, ऐसेही जीव आशा मे आपही बंधता है ॥ काम क्रोध लोभ तीन कहने का भाव, ये तीन खल अत्यन्त प्रबल हैं, यथा, तात तीनि अतिप्रबल षल काम क्रोध अरु लोभ, मुनि विज्ञान धाम मन करहिं निमिषमह छोभ ॥

यहगुन साधनते नाहिंहोई। तुम्हरीकृपा पाव कोइ कोई।

यह गुन साधन करने से नहीं होता तुम्हारी कृपा से कोई कोई पाते हैं, तात्पर्य, यह गुन क्रिया साध्य नहीं है, कृपा साध्य है, और गुन साधन से होते हैं। यथा, धर्म ते बिरति योग ते ज्ञाना, इत्यादि ये गुन साधन से नहीं होते कि, साधन करने से काम

क्रोध लोभ हृदय में न व्यापे । तीनोको जो अपने पुरुषार्थ से जीते सो तुम्हारे समान है । ऐसा कहके अब पुरुषार्थ का तिरस्कार करते हैं, कि, यह गुन साधन से नहीं होते । अर्थात्, साधन करनेवाले तुम्हारे समान नहीं हैं । तुम्हारी कृपासे कोई कोई पाते है । तात्पर्य, तुम्हारे कृपापात्र तुम्हारे समान हैं ॥ अतिसय प्रबल देवतव माया, यहां माया कहा । विषयबस्य सुरनरमुनि स्वामी यहां मद कहा । बिषय मद है ॥ नारिनयन सर जाहि न लागा, यहां काम कहा । घोरक्रोध तम निसि जो जागा, यहां क्रोध कहा । लोभपास जेहि गर न बंधाया यहां लोभ कहा । ये सब रामजी की कृपा से छूटते हैं । यथा, क्रोध मनोज लोभमद माया । छूटहिंसकल रामकी दाया ॥

तबरघुपतिबोले मुसुकाई। तुमप्रियमोहिंभरथजिमिभाई।

तब रघुपति मुसुकाय के बोले कि,हे भाई तुम हमको भरथ के समान प्यारे हो ॥ तब कहने का भाव, जबसुग्रीव ने कहा कि, कामादि बिकार तुम्हारी कृपा से छूटते हैं, और हम काम के वस भये । इससे सूचित होता है कि, हमपर आपकी कृपा नहीं है, तब रघुनाथ जी ने हंस के सूचित किया कि, हमारी कृपा तुमपर है । यथा, हृदय अनुग्रह इन्दु प्रकासा । सूचित किरिन मनोहर हासा ॥ रामजी मुसकाय के बोले इससे अपनी प्रसन्नता दिखाई कि जिसमें सुग्रीव यह न समुझे कि हमारा अपराध समुझ के रामजी हमपर अप्रसन्न हैं ॥ भरथ सम कहने का भाव, हनुमानजी सुग्रीव के मंत्री हैं तिन को लछिमन के समान कहा है । यथा, सुनुकपि जिय मानसिजनि ऊना, तें ममप्रिय लछिमन तें दूना ॥

तब सुग्रीव को लछिमन के समान कैसे कहैं इसीसे भरथ के समान कहते हैं जैसे भरथ हम को प्रिय हैं तैसे तुम प्रिय हो जैसे भरथ भाई हैं, तैसे तुम भाई हो ॥ लछिमन क्रोध वंत प्रभुजान, यहां से तबरघुपति बोले मुसुकाई, तुमप्रियमोहिं भरथ जिमि भाई, यहांतक कपित्रास प्रसंग है, क्योंकि, जब रामजी ने प्रसन्न होके भरथ के समान भाई कहा तब सुग्रीव का त्रास दूर हो गया। अब आगे कीस पठावने की भूमि का कहते हैं ॥

अबसोइजतनकरहुमनलाई। जेहिबिधिसीताकैसुधिपाई।

अब मन लगा के सोई जतन करौ जिस प्रकार से सीता की सुधि मिले अब कहने का भाव, । जब सुग्रीव ने कहा किहम विषयके बस होके भूल गये आप के पास न आये, इसपर रामजी कहते हैं कि अब मन लगाय के जतन करौ अर्थात् अभी तक तुमने मन नही लगाया जेहि बिधि सीता की सुधि पाई, कहने का भाव, रामजी सुग्रीव से सीता की सुधि मात्र चाहते हैं सीता की प्राप्ति करने को नहीं कहते अपने पुरुषार्थ से सीता की प्राप्ति करेंगे यथा, कपिसेन संग संहारि निसिचर राम सीतहिं आंनि हैं ॥

दोहा।

एहि बिधि होत बत कही। आए बानर जूथ ॥
नाना बरन सकल दिसि। देषिय कीस बरूथ ॥ २१ ॥

इस प्रकार से वतकही होती रही की बानरों के जूथ आयगए

---

१ श्लोक सुग्रीवः पंचमो भ्राता । इति वाल्मीकीये ॥

अनेक वर्ण के हैं। सब दिशाओं में बानरों के बरूथ अथात् समूह देख पड़े आए बहु वचन है अथात् बहुत जूथ आए अनेक वर्ण के हैं॥ सकल दिसि कहने का भाव, सव दिशाओं के बानर बुलाए गए हैं सोसव आए हैं इसीसे सब दिशाओं में देख पड़े ॥ शंका हनुमान जी ने दूत भेजे इसी अवसर में लछिमन जी पुर में आए। भय दिखा के सुग्रीव को उसी दिन लेगए। रामजी और सुग्रीव से बात होते ही में सब बानर आगए । जिस दिन भेजे उसी दिन आए और सुग्रीव ने पाख भर की अवधि दिई है विना पंद्रह दिन बीते बानर आय नही सक्ते। समाधान हनुमान जी दूत भेज चुके रहे तब कई दिन पीछे रामजी ने क्रोध करके लछिमन जी को सुग्रीव के पास भेजा॥ जहां परमार्थ की वार्ता है तहां गुसाँई जी बत कही शब्द लिखते हैं। यथा, हंसहि वक दादुर चातक ही हँसहिं मलिन षल बिमल बतकही॥ १॥ करत बतकही अनुज सन मन

(१) श्लोक के चिदं जन कूटाभाः केचित्कनक सन्निभाः केचिद्रक्ता ननदना दीर्घवाला स्त थापरे शुद्ध स्फटिक संकाशाः केचिद्राक्षस सन्निभाः। इति अध्यात्मे षष्ठसर्गे॥ टीका कोई बानर कज्जल पर्वत् के समान कोई स्वर्ण के समान कोई अत्यन्त लाल मुख वाले कोई लम्मेवाल वाले कोई श्वेत मणि की नाईं कोई राक्षस के तुल्य भयंकर आए॥

(२) श्लोक उद्योगस्तु चिराज्ञसः सुग्रीवेण नरोत्तम काम स्यापि विधेयेन तवार्थ प्रति साधने॥ इति वाल्मीकीये त्रयः त्रिंश सर्गे॥ टीका हे नरोत्तम यद्यपि सुग्रीव काम के वश हैं तथापि आप के कार्य के वास्ते पहिलेही अर्थ साधन के विषय आज्ञा देचुके हैं॥

(३) श्लोक कृता सुसंस्था सौ मित्रे सुग्रीवेण पुरायथा अद्यैतवांनरैः सर्वै रागं तव्यं महा बलैः। इति वाल्मीकीये पंच त्रिंश सर्गे॥ टीका हे लक्ष्मण सुग्रीव पहिलेही सव प्रबंध करचुके हैं आज ही वे सब महा बलवान् बानर गण आवेंगे॥

सिय रूप लोभान ॥ २ ॥ दशकंधर मारीच बतकही जेहि विधि भई सो सब तेहि कही ॥ ३ ॥ यहि विधि होत बत कही आए वानर जूथ ॥ ४ ॥ तब बतकही गूढ मृगलोचनी समुझत सुषद सुनत भय मोचनी ॥ ५ ॥ काज हमार तासु हित होइ रिपुसन करब बतकही सोई ॥ ६ ॥ निज निज गृह गए आयसु पाई बरनत प्रभु बतकही सुहाई ॥ ७ ॥

बानर कटक उमा मैं देषा । सो मूरुष जो करन चहे लेषा ॥

हे उमा वानरों की सेना हमने देखी है जो लेखा अथात् गिन्ती किया चाहे सो मूर्ख है । तात्पर्य हम से देखतेही बना लेखा करते न बना असंख्य की संख्या करना मूर्खता है ॥ मैं देखा कहने का भाव, हम सुनी और लिखी बात नहीं कहते अपने आंखों की देखी कहते हैं। श्रीराम जी की सेवा में सब देव सिद्ध मुनि प्रवर्षण पहाड़ पर आए हैं प्रमाण मधुकर षग मृग तनु धरि देवा करहि सिद्ध मुनि प्रभु कै सेवा। तहां शिवजी भी आए हैं इसीसे कहते हैं कि हमने देखाहै

आइरामपदनावहिंमाथा । निरषिबदनसबहोंइसनाथा ।

आय के रामजी के चरणों में माथा नाते हैं मुख देख के सब सनाथ कहें कृतार्थ होते हैं। चरणो में माथ नावने का और दर्शन करने का सब बानरों को सावकाश मिला यह रामजी का रहस्य है अर्थात् प्रभुता है ॥

असकपिएकनसेनामाहीं । रामकुशलजेहिपुछा नाहीं ।

सेना में ऐसा कीर एक भी नहीं है कि जिस की कुशल राम

जी ने न पूछी होय। जिस सेनाकी लेखा करने की इच्छा शिवजी ने नहीं किई उस सेना में राम जी ने सब से कुशल पूंछी है॥ सब से कुशल पूंछने का भाव, सब कपि आय के माथ नवा ते हैं इसी से राम जी सब से कुशल पूंछते हैं। सेवक का धर्म है कि स्वामी के चरण बन्दन करे स्वामी का धर्म है कि सेवक का सन्मान करे सबसे कुशल पूंछना यह माधुर्य में राम जी की अधिक महिमा है इसी से आगे ऐश्वर्य में घटाते हैं यथा, यह कछु नहिं प्रभु कै अधिकाई, विश्वरूप व्यापक रघुराई। ऐश्वर्य्य में यह महिमां कुछ नहीं है॥

यहकछुनहिंप्रभुकैअधिकाई। विश्वरूप व्यापक रघुराई॥

यह कुछ प्रभु की अधिकाई अर्थात् बड़ाई नहीं है रघुराई विश्वरूप और व्यापक हैं विराट रूप करके विश्वरूप हैं। परमात्मा रूप करके सब में व्यापक हैं उनका सब से कुशल पूंछना यह कुछ अधिक बड़ाई नहीं है। रघुराई कहने का भाव, व्याप्य और व्यापक दोनो रूप रघुनाथही जी हैं॥

ठाढ़े जहं तहं आयसु पाई। कह सुग्रीव सबहिं समुझाई॥

आज्ञापाके जहां तहां खड़े भए तब सुग्रीव ने सब को समुझाके कहा भारी भीड़ है चलने का सावकाश नहीं है इसीसे जो जहां है उसको वहीं खडे रहने की आज्ञा दिई॥ आयसु पाई यह देहली दीपक है रामजी की आज्ञा पाकर जहां तहां बानर खड़े भए और

रामजी की आज्ञा पाके सुग्रीव ने सब को आज्ञा दिई ॥ वाल्मीकीय के चालीसवें सर्ग में लिखा है कि पृथ्वी भर का हाल सुग्रीव ने बानरों से समझा के कहा सो गुसांई जी ने यहां समुझाई पद से जो समु [illegible] अ [illegible]

[illegible] ॥

रामजीका कार्य है और हमारा निहोरा है अथात् हमारे पर तुम्हारा [illegible] है वानरों के जूथ चारों ओर जाव राम कार्य मुख्य है इसी से राम कार्य को प्रथम कहा और पीछे अपना निहोरा कहा ॥ राम कार्य और अपना निहोरा कहने का भाव, । राम कार्य करनेसे परलोक बनेगा और हमारे निहोरे से लोक बनेगा अर्थात् जो मागे सो देंगे कौन राम कार्य है सो आगे कहते हैं ॥

जनकसुताकहंषोजहुजाई। मासदिवसमहआयहुभाई ।

हे भाई जाय के जनक सुता को खोजो मास दिवस अर्थात् महीने भर में आना ॥ जनक सुता कहने का भाव, जनक जी ने रामजी को जनक सुता दिई तैसेही जो खोज लगावेगा सो जानो रामजी को जनकही की तरह से दिया ऐसे यश का भागी होगा मासदिबस मह आयहु भाई, यह मित्ररूप से उपदेश है ॥ अवधि

१ श्लोक आह सुग्रीव जाना सि सर्वत्वं कार्य गौरवं मार्ग नार्थं हिजानक्याश्मि मुख्य यदि रोचते ॥ १ ॥ श्रुत्वा रामस्य वचनं सुग्रीवः प्रीति मानसः प्रेषया मास बलिनो वानरान् वानरर्षभः ॥ इति अध्यात्मे षष्ठः सर्गः ॥ टीका रामजी बोले कि हे सुग्रीव तुम कार्य की गुरुता को जान्ते हो यदि तुम को रुचे तो जानकी के खोजने के लिये प्रबन्ध करो ॥ १ ॥ वानरों में श्रेष्ठ सुग्रीव रामजी के वचन को सुनकर प्रसन्न हो बलवान वानरों को भेजते भये ॥ २ ॥

मेटिजो बिनुसुधि पाए, आवै बनिहि सो मोहि मराए, यह प्रभुरूप से उपदेश है भय और प्रीति दोनो दिखाना चाहिये इससे दोनो दिखाये ॥ जनक सुता को खोज के जो मास दिवस में आवै सो हमारा भाई है, हम उसको अपने समान सुख देंगे ॥

हिं मो॥२

अवधि बिता के जो बिना सुधिपाए आवेगा उसको हम से बध कराए बनेगा अर्थात्, हम उसको वध करेंगे ॥ अवधि मेटिजो बिनुसुधि पाए कहने का भाव, सुधिपाए पर अवधि मिट जाय तो कुछ भय नहीं है। दूसरी बात यह है कि, बिना सुधिपाए अवधि

---

(१) श्लोक यश्च मासान्निवृत्तो ग्रे दृष्टासीतेति वक्ष्यति मत्तुल्यविभवो भोगैः सुखं स विहरिष्यति ॥ १ ॥ ततः प्रियतरो नास्ति मम प्राणाद्विशेषतः कृतापराधो बहुशो मम बंधुर्भविष्यति ॥ २ ॥ इति वाल्मीकीये एकचत्वारिंशत् सर्गे ॥ टीका सुग्रीव बोले कि हे वानरों जो एक मास पूरा होने के पहिले सीता मैंने देखी ऐसा कहेगा सो मेरेसमान ऐश्वर्य्यवान होकर भोगों से सुख बिहार करेगा ॥ १ ॥ उस के समान हमको अति प्रिय कोई नहीं होगा वह हमारे प्राण से अधिक होगा बहुत सेभी अपराध करे तथापि वह हमारा भाई होगा ॥ २ ॥

(२) श्लोक सीता मदृष्ट्वा यदि वो मासादूर्ध्वं दिनं भवेत् तदा प्राणांतिकं दंडं मत्तः प्राप्स्यथवानराः ॥ इति अध्यात्मे षष्ठ सर्गे ॥ टीका हे बानरों सीता को विना देखे जो बानर महीनेभर से एक दिन भी बाद आवेगा वह मुझ से प्राणान्तिक दण्ड पावेगा ॥

(३) श्लोक विचिन्त्यतु दिशां पूर्वां यथो क्तांसचिवैः सह अदृष्ट्वा विनतः सीतामाजगाममहाबलः ॥ १ ॥ दिशमप्युत्तरां सर्वां विविच्य समहाकपिः आगतः सह सैन्येन भीतः शतवली स्तदा ॥ २ ॥ सुषेणः पश्चिमा माशां विविच्य सह वानरैः समेत्य मासे पूर्णेतु सुग्रीव मुपचक्रमे ॥ ३ ॥ इति वालमीकीये सप्तचत्वारिंशः सर्गे ॥ टीका, बिनत नाम का महाबली बानर मंत्रियों सहित आज्ञा नुसार पूर्वदिशा को खोजकर महीना पूरा होने के पहिलेही सीता को बिना देखे आया ॥ १ ॥ शतबलि नाम का महाकपि सेनाके सहित उत्तर दिशाको सबतरह से खोजकर डरताहुवा आया ॥ २ ॥ सुखेन नाम का वानर बानरों के सहित पश्चिम दिशा को खोज कर महीने के पूर्वही सुग्रीव के पास आया ॥

मेट के न आवे अवधि के भीतर आवे तबभी बध न होगा यही बात समुझ के तीन दिशा के बानर मास दिवस के भीतर आए॥

दोहा

बचन सुनत सबबानर । जहं तहं चले तुरंत ॥
तब सुग्रीव बोलाए । अंगद नल हनुमंत ॥२२॥

बचन सुनतेही सब बानर तुरंत जहां तहां चले तब सुग्रीव ने अंगद नल हनुमान को बुलाया । जहं तहं चले अर्थात्, जिसको जिस दिशा की आज्ञा भई सो उस दिशा को चला ॥ तुरंत चलने का भाव, राम काज करने में बानरों को उत्साह है और स्वामी का निहोरा है । जो वानर तीन दिशा को चले तिन्हें प्रणाम करना भूलगया । यथा, बचन सुनत सब बानर जहं तहं चले तुरंत । क्योंकि इनके द्वारा सीता की सुधि नहीं मिलनी है ॥ जो बानर दक्षिण दिशा को चले सो प्रणाम करके चले । यथा, आयसु मांगि चरन सिर नाई, चले हरषि सुमिरत रघुराई, क्योंकि इनके द्वारा सीता की खबर मिलनी है । तुलसी करतल सिद्धि सब । सगुन सुमंगल साज । करि प्रणाम रामहिं चलहु । साहस सिद्धि सुकाज । इति रामाज्ञा ग्रंथे ॥

सुनहु नील अंगद हनुमाना । जामवंत मतिधीर सुजाना।

---

१ श्लोक१ उत्तरां तु दिशं रम्यां गिरिराज समावृताम् प्रतस्थे सहसा वीरो हरिः शत बलि स्तदा ॥ १ ॥

(२) श्लोक २ पूर्वां दिशं प्रति ययौ विनतो हरि यूथपः पश्चिमांच दिशं घोरां सुखेणः प्लवगेश्वरः ॥ इति वाल्मीकीये पंचचत्वारिंशः सर्गः ॥ शतबलि नाम का वानर महापर्वतों से युक्त ऐसी जो रमणीय उत्तर दिशा है उस को शीघ्रही प्रस्थान करता भया ॥ १ ॥ बानरों का यूथपति विनत नाम का वानर पूर्वदिशा कोगया और वानरों का स्वामी सुखेननामका वानर भयावनी पश्चिम दिशा को गया ॥ २ ॥

हे नील अंगद हनुमान जामवंत सुनो तुम सब मति के धीर और सुजान हौ ॥ सब बानरों के नाम लेने का भाव, नीति में लिखा है कि कार्य के समय में वीरों कामान करे इसीसे सुग्रीव ने सब का नाम लेकर सन्मान किया यथा, देषि सुभट सब लाय क जाने, लै लै नाम सकल सन्माने इत्यादि ॥

सकलसुभटमिलिदच्छिनजाहू।सीतासुधिपूंछेहुसबकाहू।

सब सुभट मिल के दक्षिण को जावो सीता की सुधि सब से पूंछना ॥ दक्षिण की खबर गीध से मिली है । यथा, लैदक्षिण दिसिं गयौ गोसाईं इसीसे सब सुभटों को दक्षिण भेजते हैं क्योंकि वहां रावण से युद्ध होने की संभावना है ॥ मिलि कहने का भाव, शत्रु से युद्ध करने के वास्ते सब इकठे रहना । सकल सुभठ दक्षिण जाव कहने का भाव, एक एक दिशा में एक एक सुभट गया है । पूर्व दिशा में सेना समेत विनत नाम का बानर गया । पश्चिम में सुखेन, गया । उत्तर में सत बलि गया । दक्षिण में तुम सब सुभट जाव ॥ सब से पूंछने का भाव, सब से पूंछने से नजाने सीता की खबर कहां मिल जाय ॥

मनक्रमबचनसोजतनबिचारेहु।रामचंद्रकरकाजसवांरेहु।

मन कर्म बचन से सो जतन बिचारना और बिचार के रामचंद्र का कार्य सवांरना अर्थात् अच्छेप्रकार से करना । जतन बिचारना मन है कार्य सवांरना कर्म है सीता की सुधि पूंछना बचन है ॥ सुग्रीव की जैसी आज्ञा भई तैसाही बानर करते भए यथा, यहां विचारहिं कपि मन माहीं बीती अवधि काज कछु नाहीं, यह मन

है चले सकल बन खोजत सरिता सर गिरि खोह, यह कर्म है सब मिलि कहहिं परस्पर बाता, बिनु सुधि लए करब का भ्राता, यह बचन है। रामचंद्र कर काज सवांरेहु, इहां चन्द्रमा कहा भानु पिठि इहां सूर्य कहा, सेइय उर आगी इहां अग्नि कहा, मन क्रम बचन सो यतन विचारेहु, यहां मनक्रम वचन कहा तात्पर्य्य मनक्रम वचन के साक्षी क्रम से चंद्र भानु अग्नि हैं रामजी का कार्य सुधारने में तुह्मारे मन का साक्षी चंद्रमा हैं कर्म का साक्षी सूर्य हैं बचन का साक्षी अग्नि हैं इसी से स्वामी को सब भाव से छल त्याग के भजो मन क्रम बचन में छल न रहै ॥

उर आगी। स्वामी स छलत्यागी।

को पीठ से सेइये अग्नि को उर से सेइये और स्वामी को छल त्याग के सब भाव, से अर्थात् माता पिता गुरु स्वामी मान के सेइये छल जो स्वार्थ है उसको छोड़के । यथा, सहज सनेह स्वामि सेवकाई । स्वारथ छल फल चारि बिहाई । सूर्य पीठ से सेवन करने से सुख दाता हैं अग्नि उर से सेवन करने से सुख दाता है और स्वामी सब भाव से छल त्याग के सेवन करने से सुख दाता हैं ॥ छल त्याग के कहने का भाव । सूर्य को पीठ से सेवते हैं छल करके कि पीठ से सेवन करने से शीत और वायु नहीं रहते ॥ यह स्वार्थ समुझ के पीठ से सेवते हैं ॥ सन्मुख सेवने से दृष्टिकी हानि होती है ॥ अग्नि को उर से सेवन करने से जठराग्नि बढ़ती है ॥

(१) श्लोक पृष्ठेन सेवये दर्कं जठरेण हुताशनं स्वामिनं सर्वभावेन परलोक हिते च्छया। इति वृद्ध चाराक्ये टीका, सूर्य का सेवन पीठसे करे अग्निका सेवन पेट से करे कपट छोड कर सर्व भाव से परलोक के हित की इच्छा करके स्वामी का सेवन करे ॥

पीठ से सेवन करने से काम की हानि होती है ॥ यह समुझ के लोग अपने हित के अनुकूल सेवन करते हैं यही छल है ॥
की सेवा छलरहित करे अर्थात् हानि लाभ दुःख सुख न
सूर्य औ अग्नि इन दोनो के दृष्टान्त देने का भाव । सूर्य को पीछे से सेवन करे आग्नि को आगे से सेवन करे और स्वामी को पीछे आगे एकही तरह से सेवन करे जैसे स्वामी के सन्मुख सेवा करे तैसेही पीछे करे ऐसा नकरे कि आगे कोमल बचन बनाय के कहे पीछे अनहित करे । यथा, आगे कह मृदु बचन बनाई, पाछे अनहित मन कुटिलाई ॥ श्लोक से चौपाई का मिलान नीचे लिखा है, यथा, पृष्टेन सेवये दर्कं भानु पीठि सेइय (१) जठरेण हुताशनं सेइय उर आगी (२) स्वामिनं सर्व भावेन स्वामिहि सर्व भाव छल त्यागी (३) परलोक हितेच्छया तजि माया सेइय परलोका (४)

तजिमायासेइयपरलोका। मिटहिसकलभवसंभवसोका।

माया तज के परलोक सेइये जिस से संसार संभव कहें उत्पन्न सब शोक नाश होय । देह गेह धन पुत्रादि में ममता माया है तिस को छोड़ के परलोक सेवै तब भव सम्भव शोक अर्थात् जन्म मरन मिटते हैं । भव संभव शोक माया कृत हैं ॥ प्रमाण, एक दुष्ट अतिसय दुख रूपा जाबस जीव परा भव कूपा ॥ आगे परलोक का सेवन लिखते हैं ॥

देहधरेकरयहफलभाई

हे भाई देह धरने का यह फल है कि सब काम छोड़ के राम जी का भजन करे ॥ यह फल कहने का भाव, जो राम जी की

(१) सर्वं त्यक्त्वा हरिं भजेत ॥

सेवा आगे प्राप्त भई है सो यह देह धरे का फल है ॥ भाई कहने का भाव, बडे लोग नम्रता से सिक्षा करते हैं। प्रधान बानरों को प्रीति दिखाते हैं ॥ सामान्य बानरों को भय और प्रीति दोनो दिखाते हैं। यथा· जनक सुता कहं षोजहु जाई, मास दिवस मह आयहु भाई । यह प्रीति है ॥ अवधि मेटि जो बिनु सुधि पाए, आवै वनिहि सो मोहि मराए, यह भय है ॥ सामान्य बानरों के द्वारा विशेष बानरों को भी भय दिखाया शाक्षात् नहीं ॥

सोइगुनग्यसोईबडभागी । जोरघुबीरचरनअनुरागी ।

सोई गुण का ज्ञाता है सोई बड़ा भागी है जो रघुवीर के चरण का अनुरागी अर्थात् प्रीति करने वाला है ॥ तात्पर्य तुम तो उन के कार्य में जाते हो तुम्हारे भाग्य की बड़ाई को करि सकै ॥ जो कहने का भाव, जाति जोनि स्त्री पुरुष नपुंसक किसी का नियम नहीं है ॥ सोई कहने का भाव, अन्य गुणों से गुणी नहीं है और समस्त पदार्थों की प्राप्ति से बड़ भागी नहीं है । सोई गुणी और वड़ा भागी है जो रघुवीर के चरण का अनुरागी है। इसीसे रामचरण अनुरागी को सब जगह वड़ भागी कहते हैं, यथा, अतिसय वड भागी चरणन लागी युगल नयन जल धार वही। १। ते पद पषारत भाग्य भाजन जनक जय जय सब कहैं। २। भूरि भाग भाजन भयो मोहि समेत बलि जाउं, जौ तुह्मरे मन छांडि छल कीन राम पद ठांउं। ३। नाथ कुशल पद पंकज देषे, भयों भाग्य भाजन जन लेषे। ४। परेउ लकुट इव चरण न लागी, प्रेम मगन मुनि वर वड़ भागी। ५। सोइ गुनज्ञ सोई बड़ भागी, जो रघुवीर चरन अनुरागी। ६। वड भागी अंगद हनुमाना,

चरण कमल चापत विधि नाना । ७ । अहह धन्य भागी, राम पदार विंद अनुरागी । ८ । और रामजी के चरण का विमुख अभागी कहा ता है । यथा, ते नर नरक रूप जीवत जग भव भंजन पद विमुख अभागी ॥ इति विनय पत्रिका ग्रंथे ॥

आयसु मांगि चरनसिरनाई । चलेहर्षि सुमिरत रघुराई ॥

आज्ञा मांग के चरणो में सिर नाय के हरषि के रघुनाथ जी को सुमिरन करते चले ॥ शंका, सुग्रीव तो आयसु देतेही हैं कि सकल सुभट मिलि दक्षिण जाहू । तो आयसु क्यों मांगते हैं ॥ समाधान सुग्रीव तो आयसु दे चुके हैं यह आयसु राम जी से मांगते हैं ॥ राम जी के चरणों में माथ नाते हैं और राम जी को सुमिरते चले हैं ।यह अर्थ आगे की चौपाई में स्पष्ट है ॥ हरषि के चले कि हम-बडे भाग्यवान हैं राम जी के कार्य को जाते हैं और हरषि के चलना शगुन है । आयसु मांगना बचन है सिर नावना तन है हर्षनामन है तात्पर्य तन मन बचन तीनो रघुनाथ जी में लगाए सुग्रीव ने तीन वात कही है कि स्वामि को सेइये भजिये और चरणो में अनुराग करिये । यथा, तजि माया सेइय परलोका यहां सेवने को कहा । भजिय राम सब काम विहाई, यहां भजने को कहा । जो रघुवीर चरण अनुरागी, यहां चरण में अनुराग करने को कहा । अब तीनो को घटाते हैं ॥ आयसु मागना सेवा है। प्रमाण । आज्ञा सम न सुसाहेब सेवा ॥ चरणो में सिर नवाना चरण में अनुराग है । सुमिरना भजन है ॥ राम जी के सुमिरने से सब काम सिद्ध होते हैं

।सु था।

हनुमानजी ने सब से पीछे प्रणाम किया। कार्य जाने के प्रभु ने उनको निकट बुलाया॥ पीछे सिर नावने का भाव, उस समय में सुग्रीव और हनुमानजी से कुछ वात होतीरही इसी से हनुमान जी ने सब बानरों से पीछे राम चरण में सिर नवाया जो वारता होतीरही सो वाल्मीकीय रामायण में स्पष्ट है॥ रामजी ने जाना कि हनुमानजी हमारा काम करेंगे॥ प्रमाण। जान सिरोम-नि जानिजिय, कपिबल बुद्धिनिधान। दीन्ह मुद्रिका मुदित प्रभु पाय मुदित हनुमान॥ इति रामाज्ञा ग्रंथे॥ शंका हनुमानजी ने जब चरण में सिर नवाया तब तो निकट ही हैं तब निकट बुलावा कैसे कहा। उत्तर, हनुमानजी चरण में सिर नायके चले तब राम जी ने उनको निकट बुलाया। चलना आशय से सूचित भया॥ निकट बुलाए कान में लग के गुप्त बात कहने के निमित्त॥ प्रमाण, कहँ हम पसु साखा मृग चंचल बात कहौं मैं विद्यमान की। कहं हरि सिव अजपूज्य ज्ञानघन नहिं बिसरति वह लगनि कान-की॥ इति गीतावली ग्रंथे॥

परसासीस सरोरुहपानी। करमुद्रिका दीनजनजानी।

रामजी ने अपना हस्त कमल हनुमानजी के सीस पर परसा अ-

(१) श्लोक अस्मिन् कार्येप्रमाणंहित्वमेव कपिसत्तम जानामिसत्वं तत्सर्वं गच्छपन्था शुभ स्तवः। इति अध्यात्मे षष्ठ सर्गे॥ टीका रामजी बोले कि हे कपिश्रेष्ठ इस काम में तु-मही प्रधान हौ तुम्हारे सब पराक्रम को हम जानते हैं सब प्रकार से तुम्हारी यात्रा सफल होय जाव॥

(२] श्लोक गच्छंतं मारुतिं दृष्ट्वा रामोवचन मब्रवीत्॥ अध्यात्मे षष्ठ सर्गे॥ टीका हनुमा-नजी को जाते देखकर रामजी बोले॥

र्थात्, फेरा। सेवक जान के मुद्रिका दिई जो हस्त कमल के सुमिरने से भव समुद्र तरने को सुगम होजाता है सो हस्त कमल रामजी ने हनुमानजी के सीसपर फेरा इससे समुद्र तरना अति सुगम किया। यथा, सुमिरत श्रीरघुवीर कि बांहें होत सुगम भव उदधि अगमअति कोउ नाघत कोउ उतरत था हैं॥ इति गीतावली ग्रंथे॥ और विनय पत्रिका में लिखा है कि, शीतल सुषद छांह जेहिं कर की, मेटति पाप ताप माया। इस से यह सूचित करते हैं कि हनु-मान जी को अग्नि की ताप और पुर जलाने का पाप और सुरसा सिंहिका मेघनाद आदि की माया कुछ न व्यापैगी॥ जन जानी कहने का भाव। माथे पर हाथ फेरा मुदरी दिई कान में लगकर गुप्त बात कही ऐसी कृपा जनही के ऊपर करते हैं॥

।कहि

बहुत प्रकार से सीता को समझाना हमारा बल और विरह कह कर तुम जल्दी आना॥ बहुत प्रकार का समझाना सुन्दर काण्ड में लिखाहै रामजी ने हनुमानजी सेयहां कान में लगकर गुप्त बात कही है, इसी से ग्रंथकार ने भी यहां गुप्त कहा। जहां खोलकर कहा जायगा तहां पर स्पष्ट लिखेंगे॥ बेगि कहने का भाव, तुम जल्दी आना जिस में हम सीताजी के प्राप्ति का उपाय जल्दी करैं॥ तुम आयहु कहने का भाव, सीता की सुधि लेकर आना अर्थात, सीता को ले न आना यही बात सुन्दर काण्ड में हनुमान जी ने सीताजी से कही है कि, अबहि मातु मैं जाउं लेवाई, प्रभु आयसु रामद ॥

।२ — दयधरिकृपानिधान।

हनुमानजी ने अपना जन्म सफल करके माना कृपानिधान जो रामजी हैं तिनको हृदय में धर के चले ॥ जन्म सफल मानने का भाव, हनुमानजी का जन्म रामजी के कार्य के निमित्त है। यथा, रामकाज लगि तव अवतारा, जब रामजी का कार्य मिला तब उन्हों ने अपना जन्म सफल माना ॥ प्रश्न जब कार्य होजाता तब जन्म सफल मानना रहा अभी सफल क्यों माना ॥ उत्तर, जब राम जी ने माथे पर हाथ फेरा मुदरी दिई और सीता को समुझाकर जल्दी आने को कहा तब कार्य होचुका कुछ संदेह नहीं है॥ कृपानिधान कहने का भाव, हनुमान जी ने जाना कि राम जी ने मेरे पर वड़ी कृपा किई मेरे माथे पर हाथ फेरा कार्य करने की आज्ञा दिई ॥

यद्यपि प्रभुजानत सब बाता। राज नीति राषत सुरत्राता।

यद्यपि प्रभु सब वात जानते हैं तदपि राज नीति रखते हैं देवताओं के रक्षक हैं । यद्यपि प्रभु हैं अर्थात् समर्थ हैं सब वात जान्ते हैं तथापि राज नीति की मरयादा रखते हैं कि जो हम ईश्वरता से काम करेंगे तो राज नीति की मर्य्यादा न रहेगी॥ राज नीति में राजाओं के वास्ते लिखा है कि दूत भेजके शत्रु का समाचार पाके तब चढाई करें ॥ सुर त्राता कहने का भाव, सुरों की रक्षा के अर्थ रामजी का अवतार है । सुरों की रक्षा माधुर्य से होगी ऐश्वर्य से नहीं क्योंकि रावण की मृत्यु मनुष्य के हाथ से है इसीसे माधुर्य के अनुकूल लीला करते हैं ईश्वरता के अनुकू

ल नहीं ऐसेही आरण्य काण्ड में कहा है । यथा, यद्यपि प्रभुजान त सब कारन, उठे हरषि सुर काज संवारन । इत्यादि ॥ अब सोई जतन करहु मन लाई यहां से और यद्यपि प्रभु जानत सब बाता, राज नीति राषत सुर त्राता यहां तक जेहि विधि कपि पति कीस पठाए यह प्रसंग है ॥

दोहा ।

। सरिता सर गिरि षोह ।
। बिसरा तन कर छोह ॥२३॥

सब बानर बन नदी तलाब पर्वत और खोह अर्थात् दो पहाड़ों का बीच खोजते चले ॥ राम काज की लयमें मन लीन है इसी से तन का छोह भूल गया । चले हरषि सुमिरत रघुराई और चले सकल बन षोजत ॥ यहां चलना दो बेर लिखते हैं यह पुन रुक्ति है ॥ उत्तर, चले हरषि सुमिरत रघुराई, यहां का चलना बिदा होने के अर्थ में है ॥ और चले सकल बन षोजत इस दोहा में रास्ता चलने का प्रकार कहते हैं कि बन सरिता सर गिरि खोह खोजते चले इसीसे पुनरुक्ति नहीं है ॥

कतहुं होई निसिचर सें भेंटा । प्राण लेहिं यकएक चपेटा ।

कतौं निशाचर से भेंट होती है तब वानर लोग एक एक चपेट कहें मुटिका मार के उसके प्राण लेते हैं ॥ कतहुं होइ निसिचर सें भेटा कहने का भाव षरदूषन त्रिशिरा के मारेजाने से भय से निशाचर भाग गएबहुत नहीं हैं इसी से कतौं भेट होती है । निशाचर को

रावण जानि के मारते हैं ॥

१७ ७

बहुत प्रकार से पहाड़ और वन हेरते हैं कोई मुनि मिलता है तिस को सब वानर घेरते हैं। सीता जी की खवर पूंछने के निमित्त कि मुनि लोग सब जगह की वात जान्ते हैं ॥ कोउ मुनि मिलइ कहने का भाव राक्षसों के भय से यहां बहुत मुनि नहीं रहते इसी से कोई कोई मुनि का मिलना कहते हैं ॥ चले सकल बन षोजत यहां से और बहु प्रकार गिरिकानन हेरहिं यहां तक सीता खोज सकल दिसि धाए यह प्रसंग है ॥

लागितृषाअतिसयअकुलाने।मिलैनजलघनगहनभुलाने।

प्यास के लगने से अत्यन्त अकुलाने जल नहीं मिलता सघन बन में भूल गए। गिरि कानन हेरने से बड़ा श्रम भया इसी से अत्यन्त प्यास लगी और अतिसय अकुलाने अर्थात् मरणावस्था को प्राप्त भए सो आगे स्पष्ट है। यथा, मन अनुमान कीन्ह हनुमाना, मरन चहत सब बिनु जल पाना ॥ अतिसय शब्द देहरी दीपक है अतिसय तृषा लगी अतिसय अकुलाते भए ॥ भुलाने अर्थात् कोइ दिशा का ज्ञान नरहा ॥

---

(१) श्लोक रावणोय मिति ज्ञात्वा के चिद्वानर पुंगवाः जघ्नु. किल किला शब्दं मुंचंतो मुष्टिभिः क्षणात् ॥ इति अध्यात्मे षष्ट सर्गे ॥ टीका यह रावण है ऐसा जान कर किसी श्रेष्ठ बानर ने किल किल शब्द करते हुवे मुक्कों से उसको मारा ॥

(२) श्लोक तृषार्ताः सलिलं तत्र नाविंदन् हरि पुंगवाः विभ्रमंतो महारण्ये शुष्क कंठोष्ठ तालुकाः ॥ इति अध्यात्मे षष्ठ सर्गे टीका श्रेष्ठ बानर गण प्यास से पीडित् हुवे वहां पर उन को जल नहीं मिला। सूखे हुवे कण्ठ ओठ और तालू से महाबन में फिरे ॥

मनहनुमानकीन्हअनुमाना। मरनचहतसबबिनुजलपाना।

हनुमान जी ने मन में अनुमान किया कि सब वानर विना जलपान मरा चाहते हैं ॥

हूदिशिदेखा। भूमिविवरएक ^(१)

गिरि के शिखर पर चढ़ के चारो दिशा में देखा भूमि के विवर अर्थात् बिल में एक कौतुक देखा । बन सघन है कुछ देख नहीं पड़ता इसी से पहाड़ पर चढ़ गए । पहाड़ पर भी बन है इसी से शिखर पर चढ़ गए ॥ कौतुक इस से कहा कि पक्षियोंका उडना कौतुक है हजारों पक्षी अनेक रंग के उड़ रहे हैं ॥

चक्रवाकबकहंसउड़ाहीं। बहुतकखग प्रविसहिंतेहिमाहीं

चकवा बकुला हंस उडते हैं और बहुत से पक्षी उस बिल में प्रवेश करते हैं ॥ चक्रवाक बक हंस ये जल पक्षी हैं इसी से इनके पंख भींजे हैं ये सव पक्षी उड़ के बाहर आते हैं वाहर के पक्षी जल के निमित्त प्रवेश करते हैं ॥

गिरितेउतरिपवनसुतआवा। सबकहँलैसोइविवरदिषावा।

हनुमान जी पहाड़ से उतर के आए सब को साथ लेके सोई विल दिखाई । पहाड़ से जल्दी उतरे इसी से पवन सुत कहा । स-

---

(१) श्लोक आर्द्र पक्षान् क्रौंच हंसान् निःसृतान् ददृशुस्ततः अत्रास्ते सलिलंनूनं प्रविशामो महागुहाम् ॥ इति अध्यात्मे षष्ठ सर्गे ॥ (टीका) तब हनुमान जीने भींगे पंख के क्रौंच और हंसो को गुफा से निकलते हुवे देखकर अनुमान किया कि निश्चय यहां जल है इस महागुहा में हम लोग प्रवेश करें ॥

व के दिखाने का भाव सब वानर व्याकुल हैं तिन को विवर दि· खाई कि इस विवर के भीतर जल है ॥

आगेकैहनुमंतहिलीन्हा। पैठेबिवरबिलम्बनकीन्हा।

हनुमान जी को आगे कर लिया बिवर में पैठे बिलम्ब न किया हनुमान के आगे करने का भाव, बिवर में अंधकार है भय से वानर लोग प्रवेश न कर सके। हनुमान जी भारी पराक्रमी हैं इसी से उन को आगे किया ॥ पैठने में बिलम्ब न किया क्यों कि बडे प्यासे हैं ॥ सब वानर पैठे इस से पाया गया कि वह विल वड़ा विस्तार है। हनुमान जी को आगे कर के पैठे इस से बानरों की मुख्यता भई क्यों कि हनुमान जी को बिवर में पैठने का कुछ प्रयोजन नहीं है प्रयोजन बानरों का है जो प्यासे हैं इसी से गुशाईं जी ने पैठने में कपियों की प्रधानता कही है ॥ बानरों को लेके हनुमान जी पैठे ऐसा कहते तो हनुमान जी की प्रधानता होती। हनुमान कहने का भाव, हनुमान जी की हनु कहें ठोड़ी ने इन्द्रके वज्र को चूर्ण किया यथा, जाकी चिबुक चोट चूरण कियो रदमदकुलिश कठोर को, ऐसे वलवान् हैं तिन को वानरों ने आगे कर लिया ॥

❁ दोहा ❁

दीषजाय उपबन बर । सरबिकसित वहु कंज।
मंदिर एक रुचिर तहं। वैठि नारि तप पुंज ॥ २४ ॥

श्रेष्ठ उपवन तलाव जिस में बहुत प्रकार के कमल फूले हैं जाय के देखा एक सुन्दर मंदिर है तहां तप की पुंज नारी बैठी है ॥ दीख जाय कहने से यह सूचित किया कि पहिले

अंधेकार रहा जब बहुत दूर गए तब पहुंचे ॥ बर कहने का भाव, बालमीक जी वृक्ष[2] तड़ाग मछली कमल भ्रमर सब सुवर्ण के वर्णन करते हैं सो गुशाईं जी ने बर शब्द से सूचित किये हैं कि वहां के सब पदार्थ श्रेष्ठ हैं ॥ तप पुंज अर्थात् तेज[3] की पुंज है यथा बिनु तप तेज कि कर बिस्तारा। तप से तेज होता है ॥

सरनावा। पूंछेनिजवृत्तान्तसुनावा।

सब वानरों ने तिसको दूर से प्रणाम । पूंछने से अपना वृत्तान्त सुनाया। इसँसे भय और भक्ति दोनो दिखाए भय से उस के पास नगए कि अनादर जान के स्राप नदे और उस को तपस्विनी जान के उन्होंने प्रणाम किया ॥ शंका बानर बहुत हैं सिर नाए और सुनाए बहु बचन चाहिये सिर नावा सुनावा यह एक

---

(१) श्लोक। अंधकारे महद्दूरं गत्वा पश्यन्कपीश्वराः ॥ इति अध्यात्मे षष्ठसर्गे (टीका) बड़ी दूर अंधेरे में जाकर कपीश्वरों ने देखा ॥

(२) श्लोक। महद्भिः कांचनैर्वृक्षैर्वृत्तं वालार्क सन्निभैः जातरूप मयैर्मत्स्यैर्महाद्भिः पाथ पंकजैः पुष्पितान्फलितो वृक्षान्प्रवाल मणि सन्निभान् कांचन भ्रमरांश्चैव मधूनिच समंततः ॥ इति वाल्मीये पंचाशत् सर्गे ॥ (टीका) उदय काल के सूर्य के समान प्रकाश वाले बड़े बड़े स्वर्ण के वृक्ष सुनहरी बड़ी बड़ी मछलियां और बड़े बडे जल कमल मूंगे और मणि के समान फूले फले वृक्षों के चारो तरफ फूलों के रस को पीते हुए सुनहरे भवरों को देखा ॥

(३) श्लोक तांचते ददृशुस्तत्र चीर कृष्ण जिनांवराम् तापसीं नियता हाराम् ज्वलन्ती मिव तेजसा ॥ इति वालमीकीये पंचाश सर्गे टीका, वस्त्र और काली मृगछाला पहने हुइ नियम से भोजन करने वाली तेज से अग्नि के समान प्रकाश वाली तपश्विनी को उन्हों ने देखा ॥

(४) श्लोक प्रणेमुस्तां महाभागां भक्त्या भीत्याच वानराः ॥ इत्यध्यात्मे षष्ट सर्गे ॥ टीका उस बडी ऐस्वर्य वती तपश्विनी को भक्ति और डरसे वानरों ने प्रणाम किया ॥

बचन कैसे लिखत हैं समाधान, जहां समूह है तहां एक वचनान्त भी होजाता है इहां बानर वहुत हैं इसीसे सिर नावा एक बचन कहा जैसे नगर लोग सब व्याकुल धावा और जो वृत्तांत सब बानर सुनावते तो बहु वचन कहते ॥ सब बानर विकल हैं वृत्तान्त[2] हनुमान जी ने सुनाया इसीसे सुनावा एक बचन कहा ॥

तेहि

तिसने तब कहा कि जल पान करो नाना प्रकार के सुरस और सुन्दर फल खाव। हनुमान जी जब अपना वृत्तान्त कहने लगे तब अपने को प्यासे सुनाया इसीसे उसने प्रथम जल पान करने को कहा पीछे फल खाने को कहती है। जो भूख सुनाते तो प्रथम फल खाने को कहती फल सुरस हैं अर्थात् जिनमें सुन्दर रस है और देखने में सुन्दर हैं॥

मज्जनकीन्हमधुरफलषाए।तासुनिकटपुनिसबचलिआए।

स्नान करके मीठे फल खाए पुनि तिसके निकट सब चल के आए ॥ शंका, बानरों को जल पीना मुख्य है सो नहीं कहते केवल फल खाने को कहते हैं॥ समाधान, बानरों ने जब मज्जन किया तब जल पी लिया इसीसे जल पान करना नहीं कहते केवल फल खाना कहते हैं॥ धूप सेतपे रहे और मज्जन से श्रम जाता है इसीसे प्रथम मज्जन किया॥ निकट आने का भाव, प्रथम बिना जाने भय मान के उन्होंने उसको दूर से प्रणाम किया।

(२) श्लोक तच्छ्रुत्वा हनुमानाह शृणु वक्ष्यामि देविते इत्यादि ॥ इत्य अध्यात्मे षष्ठ सर्गे ॥ टीका यह सुनके हनुमान जी बोले कि हे देवि हम तुम से कहते हैं सुनो ॥

यथा, दूरि ते ताहि सबन सिर नावा अब उसका शान्ति सुभाव जान के निकट आए ॥ चलि आए कहने का भाव, धीरे धीरे चल के आए दौड़ के नहीं आए जिस में वह क्रोध न करे ॥



तिसने अपनी सब कथा सुनाई और बोली कि मैं अब जहां रघुनाथजी हैं तहां जाऊंगी उस की सब कथा अध्यात्म रामायण में है ॥ अब जाब कहने का भाव, मेरी यहां रहने की अवधि इतनेही दिन की रही है ॥ हेमा अप्सरा मेरी सखी ने मुझको अज्ञा दिई कि त्रेता युग में रामजी बन में आवेंगे तिनकी स्त्री खोजने के अर्थ वानर तुम्हारे यहां आवेंगे तब तुम उनकी पूजा करके रामजी के पास जाना ॥ उस तपस्विनी ने अपनी कथा सुनाई इससे सूचित भया कि बानरों ने उससे पूंछा कि हे देवी इस स्थान में किस वास्ते रहती हो तुम कौन हो इस पर उसने अपनी कथा सुनाई ॥ जब बानरों ने उस की कथा पूंछीतब उस ने कहा कि तुम लोग जलपीके

---

(१) श्लोक त्रेता युगे दाशरथिर्भूत्वा नारायणोऽव्ययः । भूभार हरणार्थाय विचरिष्यति कानने ॥ १ ॥ मार्गंतो वानरास्तस्य भार्यां मायां तितेगुहां । पूजयित्वाथतान् गत्वा रामं स्तुत्वा प्रयत्नतः ॥ २ ॥ इति अध्यत्मे षष्ट सर्गे ॥ टीका मेरी सखी ने मुझसे ऐसा कहा था कि त्रेता युग में परमेश्वर दशरथ के पुत्र होकर पृथ्वीका भार उतार ने के लिये जंगल में घूमेंगे ॥ १ ॥ उनकी स्त्री को खोजने के लिये बानर लोग आवेंगे तब वे तेरी गुफा में भी आवेंगे तब तू उन का सत्कार कर के रामजी की स्तुति कर के ॥ २ ॥

(२) श्लोक त्वंवा किमर्थमत्रासि का वात्वंवदनः शुभे ॥ १ ॥ २ यथेष्ठ फल मूलानिजग्ध्वापीत्वा मृतं पयः आगच्छत ततो वक्ष्येमवृत्तांत मादितः ॥२॥ इति अध्यात्मे षष्ठ सर्गे॥ २ टीका हे कल्याणीतुम यहां पर क्यों हो और कौन हो यह हम लोगों से कहो ॥ १ ॥ वह तपस्विनी प्रसन्न हो कर बोली कि तुम लोग मन माने फल आदिक खायकर अमृत के समान जल को पीकर आओ तब प्रारंभ से मैं अपनी कथा कहूंगी ॥ २ ॥

फल खाय के आवो तब मैं अपनी कथा तुम को सुनाऊंगी इसीसे जा बानर लोग फल खाय के आए तब उसने अपनी कथा सुनाई॥

पैहहु सीतहि जनि पछिताहू।

आंखें मूदो और बिवर कहे बिल तजिके जाव सीता को पावोगे पछतावो न ॥ यहां जो पैठता है सो बाहर नहीं निकलता मैं अपने तप के बल से बाहर निकल सक्तीहूं बिना आंख मूदे नहीं निकल सक्तेहो इससे आखें मूदो ॥ सीता को पाओगे यह तपश्विनी का आशीर्वाद है सीता को पावोगे इतनाही कहा बताया नहीं कि सीता लंका में हैं क्योंकि उस को भविष्य ज्ञान है वह जान्ती है कि मेरे पहुंचाने से समुद्र के तीर जायंगे। इनको गिद्ध के द्वारा सीता की खबर मिलैगी उस गिद्ध के पंख जमेंगे यह समुझ के सीता की सुधि नहीं बताई ॥ जिस दिन बिल के भीतर बानर लोग गए उसी दिन महीना पूरा भया तब बानरों ने सोच बस होके स्वयंप्रभा से प्रार्थना किई कि हम को बिवर से बाहर करो सीता की खबर नहीं मिली अवधि बीत गई। इसी पर तपश्विनी कहती है कि मूदहु नयन बिवर तजि जाहू पैहहु सीतहि जनि पछिताहू ॥ यह कथा वाल्मीकीय रामायण में है ॥

नयन मूंदि पुनि देषहिं बीरा। ठाढ़े सकल सिंधु के तीरा ॥

आंखें मूंद के बीर पुनि देखते हैं कि सब समुद्र के तीर पर खड़े

(१) श्लोक जूयं [illegible] गमिष्यथ बहिर्गुहां ॥ इति अध्यात्मे षष्ठ सर्गे टीका, तुम लोग आखें बंद करलो तब तुरन्त गुफा के बाहर होजावोगे ॥

हैं ॥ नयन मूंद के पुनि देखा अर्थात् उस ने सब को एक पल में समुद्र के तीर पहुंचाय दिया ॥ वीर कहने का भाव, वीरता से बिवर के बाहर नहीं होसक्के रहे, तेई वीर नयन मूंद के बे परिश्रम बाहर भए । इस में वीरों की वीरता से तपस्विनी के तप का प्रभाव अधिक जनाया । ठाढ़े कहने का भाव, जब सबों ने आंखें मूदीं तब सब बानर खड़े रहे वैसेही समुद्र के तीर पहुंचे ॥

सोपुनि गईजहांरघुनाथा। जाय कमल पद नाइसि माथा।

सो स्वयं प्रभा पुनि जहां रघुनाथ जी हैं तहां गई जाय के चरन कमल में माथ नवाया । पुनि अर्थात् प्रथम बानरों को पहुंचाय के पीछे आप प्रवर्षण पहाड़ पर जहां राम जी हैं तहां गई ॥

नानाभांतिबिनयतेहिकीन्ही। अनपायनीभगतिप्रभुदीन्ही।

तिसने अनेक प्रकार की विन्ती किई राम जी ने अनपायनी कहें नाशरहित भक्ति दिई तात्पर्य अनपायनी भक्ति मिलनेही के अर्थ उसने नाना भांति की विनय किई है ॥ नाना भांति की विनय अध्यात्म रामायण के छठे सर्ग में स्पष्ट है ॥ तपस्विनी ने बड़ा तप किया तिस का फल रामजी के दासों का दर्शन भया । राम दासों के दर्शन से राम जी का दर्शन भया राम जी के दर्शन से अनपाइनी भक्ति मिली ॥

(१) श्लोक निमेषान्तर मात्रेण बिलादुत्तारि तास्तया ॥ इति वाल्मीकीये द्विपंचाशः सर्गे टीका, पल भर में उस गुफा से उन को उस ने बाहरकर दिया ॥

दोहा ❀

[illegible] गई । प्रभु अज्ञा धरि सीस ॥
चरण युग । जे बंदत अज ईस ॥ २५ ॥

सो तपस्विनी बदरी बन अर्थात् बदरिकाश्र म को गई प्रभुकी आज्ञा माथे पर धर के और जो चरण ब्रह्मा शिव वंदते हैं सो दोनो राम चरण हृदय में धरके ॥ प्रभु आज्ञा धरि सीस कहने का भाव, प्रभु की आज्ञा है उल्लंघ करने योग्य नहीं है इसीसे उस ने सीस पर धारण किया । सीस पर धारण करना आदर है ॥ अजईस कहने का भाव, ये दोनो देव सब से बड़े हैं जो चरण अजईश बंदते हैं तिन्ही चरणों का इस ने साक्षात दर्शन किया और उन को उर में धारण किया ॥ लागि तृषा अतिसय अकुलाने यहां से और बदरी बन कहँ सोगई इस दोहा तक बिवर प्रवेश प्रसंग है ॥

यहांबिचारहिंकपिमनमाहीं । बीतीअवधिकाजकछुनाहीं ।

यहां बानर मन में विचारते हैं कि अवधि बीतगई काज कुछनहीं भया । बीती अवधि कहने का भाव, स्वयं प्रभा के स्थान में अवधि पूरी होगई अब बीतगई । काज कछु नाहीं कहने का भाव, अवधि के भीतर सब काम होजाना चाहता रहा सोकुछ न भया ॥

सबमिलिकहैंपरस्परबाता । बिनुसुधिलियेकरबकाभ्राता ।

सब मिल के परस्पर अर्थात् एक एकसे बात कहते हैं कि हे भाइ बिना सुधि लिये क्या करेंगे अर्थात् सुग्रीव से कैसे बचेंगे । अवधि के बीतने पर मन में सोच उत्पन्न भया । यथा यहां बिचारहिं कपि

मन माहीं बीती अवधि काज कछु नाहीं, यह मन का सोच है। अब मन से बचन में आया सोच की बातें करने लगे यथा सब मिलि कहैं परस्पर बाता, अब बचन से कर्म में आया यथा बिनु सुधि लिये करब का भ्राता ॥

कहअंगदलोचनभरिबारी। दुहुंप्रकारभइमृत्युहमारी ॥

अंगद ने नेत्रों में जल भर के कहा कि दोनो प्रकार से हमारी मृत्यु भई प्रथम प्रकार यह है कि प्रायो पवेश करके अर्थात् समुद्र के तीर बैठ के मरजाना दूसरा प्रकार सुग्रीव के हाथ से वध होगा सो दोनो प्रकार की मृत्यु आगे कहते हैं ॥

यहां नसुधि सीता कै पाई। वहां गए मारिहि कपि राई ॥

येहां सीता की सुधि न प्राप्त भई वहां गए से कपिराय मारेंगे। तात्पर्य प्रथम जो काम करने को हमको दिया सो हम से न वन पड़ा तब हम मरने के योग्य भए इसीसे प्रायोपवेश करके यहां मर जांयगे। यहां न मरेंगे तो वहां गए कपिराय मारेंगे ॥

पिता बधे परमारत मोही। राखा राम निहोर न ओही ॥

पिताके बधे पर हम को सुग्रीव मारते राम जी ने रक्खा उनका

(१) श्लोक सीता नाधिगता स्माभिर्न कृतं राज शासनं यदि गच्छामि किष्किंधां सुग्रीवोऽस्मान्ह निष्यति ॥ इति अध्यात्मे सप्तम सर्गे ॥ टीका हम लोगोंने सीता को नहीं पाया राजा की आज्ञा का निर्वाह भी नहीं किया अब जो किष्किंधा को जांयगे तो सुग्रीव हम को मारेंगे ॥

निहोरा नहीं है ॥ पिता के बध होने पर हम को न रहने देते नीती है कि शत्रु का वंश न रहने देना । यथा भरथ कीन्ह यह उचित उपाऊ रिपु रिन रंच न राषव काऊ ।

पुनिपुनिअंगदकहसवपाहीं। मरनभयोकछुसंसयनाहीं।

अंगद पुनि पुनि सव से कहते हैं कि मरन भया कुछ संशय नहीं है ॥ पुनि पुनि कहना अति व्याकुलता का सूचक है राम जी ने हम को वचाया उन्हीं का काम हम से न वन पड़ा अव हमारी रक्षा राम जी भी न करें गे इसी से मरन भया कुछ संशय नहीं है ॥ सव से कहने का भाव, तुम सव बुद्धिमान हो जी नेका उपाय वतावो ॥

अंगदवचनसुनतकपिवीरा। बोलिनसकहिंनैनवहनीरा।

अंगद के वचन कपि वीर सुनते हैं वोल नहीं सक्के नेत्रों से जल वहता है ॥ यद्यपि सव वानर वड़े वीर हैं तदपि अंगद के वचन सुन के असमर्थ की तरह से रोने लगे ॥ प्रथम सव वानर सोच का वात कर ते रहे जव अंगद ने अपने मरने का निश्चय किया तव सव वानर सोच में व्याकुल हो गए कि जव सुग्रीव अंगदही को वध करेंगे तव हम कैसे बचेंगे ॥ प्रथम वानरों के आंसू नहीं

(१) श्लोक मयि तस्य कुतः प्रीति रहं रामेण रक्षितः इदानीं रामकार्यं मेनकृतं तन्मिषं भवेत् तस्य मद्धन नेनूनं सूग्रीवस्य दुरात्मनः ॥ इति अध्यात्मे सप्तम सर्गे । टीका हमारे पर उनकी प्रीति कहांहै हम तो राम जी से रक्षित भय अव जो हमने राम कार्य नहीं किया है इसीसे इस समय सुग्रीव दुरात्माको निश्चय कर के हमारे मारने का वहाना होगा ॥

...ए रहे अब आसू बहने लगे अर्थात् अंगद की दशा को प्राप्त भए। बोलि न सकहिं अर्थात् अंगद के वचन सुन के कुछ जवाब न देसके। वीर कहने का भाव, राजा का दुःख सुन के कुछ पुरुषार्थ नहीं चलता चुप हो गए पराक्रम का काम होता तो पराक्रम कर ते क्यों कि बीर हैं॥

छनयकसोचमगनहोइरहेऊ।पुनिअसवचनकहतसवभएऊ

एक क्षण सोच में बूड़ गए पुनि ऐसे वचन सब कह त भए अर्थात् सोच में बानी रुकी रही फिर धीरज धर के सब वानरों ने उत्तर दिया सो आगे कहते हैं॥

। कि

हे युवराज प्रवीन हम सीता की सुधि लिये विना कैसे जांयगे॥ बानरों के प्रथम वचन में कोई बात का सिद्धान्त नहीं भया रहा यथा, सब मिलि कहैं परस्पर बाता। बिनु सुधि लिये करबका आता॥ अब दूसरे वचन में सिद्धान्त भया कि हम सीता की सुधि लिये विना सुग्रीव के पास न जांय गे॥ युवराज प्रवीन कहने का भाव, तुम तो राजा हो प्रवीन हो सब जान्ते हो नीति में लिखा है कि जब राजा ऐसी आज्ञा दे तब कार्य करके जाय नहीं तो राजा के पास न जाय। दो प्रकार से मृत्यु है एक प्रकार की मृत्यु का समाधान वानरों ने किया कि सुग्रीव के पास हम न जांयगे तब वह कैसे मारेंगे दूसरे प्रकार की मृत्यु का समाधान न किया भया इसी से समुद्र के तीर कुश बिछाके मरने के निमित्त बैठे॥

जाई।

ऐसा कहके खारे समुद्र के तीर जाके दर्भ कहैं कुश बिछाय के सब वानर बैठ गए ॥ सब कहने का भाव, इस बात पर सबका सम्मत है। तट कहने का भाव, तीर्थ पति के तीर पर मरना उत्तम है। छन यक सोच मगन होइ रहेऊ यह वानरों के मन का हाल कहा। पुनि अस वचन कहत सब भयऊ यह वचन का हाल कहा, बैठे कपि सब दर्भ डसाई यह कर्म का हाल कहा। कुश बिछाय कर बैठने का भाव कुश आनस पर बैठ के मरना उत्तम है॥

जामवन्त अंगद दुख देखी। क ... ।

जामवंत ने अंगद का दुःख देख के विशेष उपदेश की कथा क कथा से दुःख दूर होता है यथा, रामचंद्र गुन बरनै लागा सुनतहि सीता कर दुष भागा ॥ उपदेश बिसेषी कहने का भाव, सोच दूर करने के अर्थ इससे अधिक और कोई उपदेश नहीं है अथवा व्यवहार लिये उपदेश सामान्य है परमार्थ लिये विशेष है सो आगे कहते हैं॥

तातरामकहनरजानिमानहु।निर्गुनब्रह्मअजितअजजानहु

। का मनुष्य न ... गु ब्रह्म

किसी से जीते नहीं जाते अज हैं जन्म नहीं लेते ऐसा जानो

(१) श्लोक सुग्रीव वधतोऽस्माकं श्रेयः प्रायोपवेशनं इति निश्चित्य तत्रैव दर्भा नास्तीर्य्य सर्वतः उपाविश्य सुस्ते सर्वे मरणे कृत निश्चयाः ॥ इति अध्यात्मे सप्तम सर्गे ॥ टीका हम लोगों का सुग्रीव के हाथ से वध होने की अपेक्षा प्रायोपवेश अर्थात् एक जगह पर बैठकर उपवास करके मरजाना कल्याण कारक है ऐसा निश्चय कर वहीं पर कुश बिछाय के वेसब मरने का निश्चय करके बैठे ॥

नर जनि कहने का भाव, जब तुम रामजी को नर मानते हो तब व्याकुल होके ऐसा कहते हो कि मरन भयो कछु संशय नाहीं। हम ईश्वर के दूत हैं ईश्वर के काम को आए हैं तब हमारा मरण कैसे होगा। हम को सीता की सुधि क्यों न मिलेगी॥ निर्गुन ब्रह्म कहन का भाव निर्गुन ब्रह्म सगुन भया है हम सब सेवक बानर भए हैं। अजित कहने का भाव, काल कर्म गुण स्वभाव और माया से नहीं जीते जाते। अज कहने का भाव, जैसे कर्म के बस सब जीवों का जन्म होता है तैसे ईश्वर का जन्म नहीं होता अपनी इच्छा से अवतार लेते हैं। ऐश्वर्य कहके उपदेश करने का भाव, ऐश्वर्य समझने से संदेह और दुःख दूर होते हैं॥

।

हम सब सेवक अत्यंत बड़ भागी हैं क्योंकि सगुन ब्रह्म के निरंतर अनुरागी हैं अति बड़ भागी कहने का भाव, विराग होने से भागी हैं विवेक होने से बड़ भागी हैं सेवक होने से अति बड़ भागी हैं क्योंकि विरागी विराग करते हैं ज्ञान के अर्थ ज्ञानी ज्ञान करते हैं मोक्ष के अर्थ। उस मोक्ष को त्याग के सेवक सगुन ब्रह्म की उपासना करते हैं। विराग से ज्ञान होता है ज्ञान से उपासना होती है॥ प्रमाण, जानिय तबहि जीव जग जागा। जब सब विषय बिलास विरागा। होय विवेक मोह भ्रम भागा। तब रघुनाथ चरन अनुरागा॥

✤ दोहा ✤

निज इच्छा प्रभु अवतरइ। सुर महि गो द्विज लागि।
सगुन उपासक संग तहं। रहहिं मोक्ष सब त्यागि॥२६॥

प्रभु अपनी इच्छा से देवता पृथ्वी गो ब्राह्मण के अर्थ अवतार लेते हैं । जहां भगवान अवतार लेते हैं तहां सगुन उपासक सब मोक्ष त्याग के संगही रहते हैं ॥ प्रथम कहा कि भगवान अज हैं यथा, निर्गुण ब्रह्म अजित अज जानहु जौं अज हैं तौ जन्म कैसे लेते हैं इसपर कहते हैं कि निज इच्छा से प्रभु अवतार लेते हैं ॥ अवतार लेने का हेतु कहते हैं यथा, सुर महि गो द्विज लागि॥ सब मोक्ष सालोक्य सारूप्य सायुज्य इनको त्याग के संग में रहते हैं अर्थात् सामीप्य मुक्ति को ग्रहण करते हैं ॥

ि । रिकं ।

इस प्रकार से बहुत भांति की कथा कहते हैं इन की बानी संपाती ने गिरि कंदरा से सुनी ॥ शंका, प्रथम जामवंत का कहना लिखते हैं यथा, जामवंत अंगद दुख देखी । कही कथा उपदेश विसेषी ॥ अंत में सब बानरों का कहना लिखते हैं यथा, एहि बिधि कथा कहहिं बहुभांती । यह कैसा ॥ समाधान प्रथम बानरों ने रामजी के बनवास से लेकर बालि का वध और सुग्रीव के ऊपर रामजी के कोप तक की कथा कही यह वाल्मीकीय में लिखा है । पीछे जामवंत ने कथा कही अंत में सब का कहना इस चौपाई में इकठ्ठा कहते हैं ॥ बहुभांती कहने का भाव, बहुत रामयणों में बहुत प्रकार की कथा मुनियों ने लिखी है इसीसे गुशाईं जी बहुत भांति की कथा कहना लिखते हैं गिद्ध ने कन्दरा से कथा सुनी । कथा के सुनने से रामजी के भक्तों का दर्शन भया । भक्तों के स्पर्श से पंख जमें और सब दुःख दूर भए । बानर सीता को खोजते खोजते व्याकुल

भए सुधि न मिली । कथा कहने से बैठेही संपाती से सुधि मिल गई यह राम कथा का प्रभाव है ॥

बाहेर होइ देषे बहु कीसा । मोहि अहार दीन्ह जगदीसा ।

बाहर होके बहुत बानरों को देख के कहा कि जगदीश ने हम को अहार दिया । जगत के ईश अर्थात् जगत के पालन करता हैं इसीसे मेरे निमित्त सब बानर यहां प्राप्त किये नहीं तो इतने बानर पराक्रम से इकठे किये न होते ॥

आजुसभन्हकोभच्छनकरऊं। दिनबहुचलेअहारबिनुमरऊं।

आज हम सबों को भक्षण करेंगे बहुत दिन बीत गए अहार विना मरते हैं ॥

कबहुंनमिलभरिउदरअहारा। आजुदीन्हबिधिएकहिबारा।

हमको पेट भर अहार कभी नही मिला सो ब्रह्मा ने आज एक ही वार दिया पेट भर न मिला अर्थात् कुछ मिलता रहा । बिधि कहने का भाव, बिधि हैं बिधान से सबको अहार देते हैं ॥

डरपेगीधवचनसुनिकाना । अबभामरनसत्यहमजाना ॥

गिद्ध के वचन कान से सुन कर डर बोले कि अब हमने जाना कि सत्यही मरण भया । तात्पर्य गिद्ध का स्वरूप देख के उसके बचन

(१) श्लोक विधिः किलनरं लोके विधानेनानु वर्तते । यथायं बिहितो भक्ष श्चिरान्मह्य मुपागतः ॥ इति वाल्मीकीये षट पंचाश सर्गे ॥ टीका संसार में ब्रह्मा कर्मानुसार फल देते हैं जैसा हम को आज बहुत दिनो के बाद अहार मिला है ॥

सत्य जाने कि ऐसे स्वरूप से यह सब को खासका है अब सत्य करके मरण भया अर्थात् सीता की सुधि न मिलने से चाहे सुग्रीव न मारते प्रायोपवेश से चाहे मरण न होता सीता की सुधि मिल-जाती अब सत्य करके मरण भया ॥ हनुमान जामवंत आदि बड़े हे ~ गिद्ध के बचन सुन के डर गए और कहने लगे कि अब ारा मरण सत्यही भया तब क्या सब योधा मिल के एक गिद्ध न लड़ सक्के रहे। उत्तर, इस समय में सीता के न मिलने के सोच से और दोनो प्रकार की मृत्यु के भय से सब बीर विकल हो रहे हैं इसी से गिद्ध के बचन सुन के डरगए और उनको अपने पराक्रम की सुधि न रहगई। भयभीत की गिनती निबल में है॥ प्रमाण, पंगु गुंगरोगी बनिकभीति भूखाजुत जानि अंध अनाथ अजाति शिशु अबला अबल बखानि ॥ इति कविप्रिया ग्रंथे

। जामवंत मन शोच विसेषी।

गिद्ध को देख के सब वानर उठे जामवंत के मन में विशेष सोच भया ॥ उठे कहने का भाव, सब वानर कुश बिछाकर बैठेरहे अब अत्यंत भय से उठ खड़े भए। विशेषी कहने का भाव, सब वानरों को सोच है जामवंत को विशेष सोच है। तात्पर्य, जामवंत ने अंगद का दुःख देख के कथा कह के उन का दुःख दूर किया अब यह दुःख दूर करने का उपाय कुछ नहीं सूझता अथवा जामवंत सब के सम्हार करता हैं इसी से इन को विशेष सोच भया कि हमारे देखतेही सब वानर खाएजाते हैं ॥

। धन्यजटायू समकोउनाहीं।

अंगद ने मन में बिचार के कहा कि जटायू के समान धन्य कोई नहीं है अंगद का दुःख देख के जामवंत बोले और जामवंत का दुःख देख के अंगद बोले। तात्पर्य, दोनो भारी बुद्धिमान हैं अंगद ने मनमें बिचारा कि यह गिद्ध है इस को गिद्ध का समाचार सुनावें धन्य जटायू सम कोउ नाहीं, कहने का भाव, जामवंत बोले कि हम सब सेवक अति बड़भागी हैं इस पर अंगद कहते हैं कि जटायू के समान कोई धन्य नहीं है क्योंकि, वह राम कार्य के निमित्त तन त्याग के हरिपुर को गया हम से भी अधिक बड़भागी है इसी से परम बड़भागी कहा। बड़भागी का हेतु गीतावली में बिस्तार से लिखा है॥

। हरिपु।

राम कार्य के कारण तन त्याग के बड़भागी जटायू हो गयो अर्थात्, सीता के निमित्त जटायू ने तन त्याग किया॥ परम बड़भागी कहने का भाव, पर कार्य के वास्ते शरीर त्याग करे सो भागी है। जटायू ने तो राम काज के निमित्त तन त्याग किया है इससे वह बड़ भागी हैं और भगवान की गोद में बैठ के तन त्याग किया भगवान के हाथ से दाह पाया हरि पुर को गये इससे वह परम बड़ भागी हैं॥

सुनिखगहर्षसोकयुतबानी। आवानिकटकपिनभयमानी।

१) अहो जटायु धर्म्मात्मा रामस्यार्थे मृतः सुधीः मोक्षं प्रापदुरावापं जोगिनामप्य रिंदमः॥ इति अध्यात्मे सप्तम सर्गे॥ टीका बडे आश्चर्य की बात है कि धर्मात्मा और बुद्धिमान और शत्रु नाशक जटायु ने रामचन्द्र जी के कार्य के अर्थ प्राणत्याग किये और उस मोक्ष को प्राप्त भये जो जोगियों को भी दुर्लभ है॥

खग कहें गिद्ध हर्ष शोक युत बाणी सुन के निकट आया तब कपियों ने भय माना बाणी में हर्ष शोक दोनो हैं जटायू का पुरुषार्थ और मुक्ति सुन के हर्ष भया और मृत्यु सुन के शोक भया॥ गिद्ध कंदरा के बाहर भया रहा अब वृत्तान्त पूंछने के निमित्त निकट आया कपि भय मानते भए कि हमारे खाने के निमित्त नगीच आता है॥

तिन्हैंअभयकरिपूंछेसिजाई।कथासकलतिन्हताहिसुनाई।

तिन्हैं अर्थात् बानरों को अभय कर के जाय पूंछा तिन बानरों ने तिसको सब कथा सुनाई॥ तिन्हैं अभय करि पूंछेसि जाई कहने का भाव, प्रथम दूरही से उस ने बानरों को अभय किया पीछे निकट आया कि जिस सें बानर भाग न जाय। सकल कथा कहने का भाव, प्रथम बानरों ने आपुस में संक्षेप से जटायू की कथा कही रही यथा, कह अंगद बिचारि मन माहीं, धन्य जटायू सम कोउ नाहीं राम काज कारण तनु त्यागी, हरि पुर गयो परम बड़ भागी। अब उस की कथा विस्तार से सुनाई सो कथा विस्तार से अध्यात्म के सप्तम सर्ग में है॥

सुनिसंपाति बंधुकै करनी।रघुपति महिंमा बहुबिधि बरनी।

संपाति ने भाई कि करनी सुन के रघुनाथ जी की महिंमा बहुत प्रकार से वर्णन करी की रावण ऐसे वीर को विरथ और मूर्छित किया यह रघुपति की महिमा है। यहां करनी शब्द पुरुषार्थ वाचक है यथा, जूझे सकल सुभट करि करनी और रामजी ने अपने हाथ से उसकी क्रिया किई सो करनी सुन के रघुपति की महिमा वर्ण-

न करी कि उन्होंने ऐसे अधम को ऐसी मुक्ति दिई। यहां करनी शब्द मृतक क्रिया का वाचक है। जथा पितुहित भरथ कीन्ह जसि इत्यादि॥

सिंधु तट। देउं तिलांजलि ताहि॥
। जाहि॥२७॥

मुझको समुद्र के किनारे लेजाओ तिसको मैं तिलांजुली देऊं से बचन सहाय करूंगा अर्थात् जहां ा हैं तहां बताऊंगा जिस को खोजते हो तिस को पाओगे। गिद्ध ने यह बात ज्ञान के बल से कही है॥ शंका। गिद्ध जब बानरों के निकट आया तब मोहिं लैचलहु सिन्धुतट ऐसा कहना रहा मोहिं लैजाहु क्यों कहा उत्तर, बानर लोग पहाड़ के नीचे बैठे हैं वह कदरा से निकस के इनके ऊपर पहाड़ पर आया यही निकट का ना है अब वह ऊपर से कहता है कि तुम लोग आओ मुझ लेजाओ मैं पहाड़ नहीं उतर सक्ता हूं॥ धर्म शास्त्र में लिखा है कि जब मृतक की बात सुने तभी शूतक लगता है इसीसे भाई का मरन सुन के क्रिया क्रिया मैं बचन से तुम्हारी सहायता करूंगा त्पर्य, तन से

१ श्लोक इच्छेयं गिरि दुर्गाच्च भवद्भिर वतारितुम्। यौवाद्दग्ध पक्षत्वान्न शक्नोमि विसर्पितुम् इच्छया पर्वतादस्मादवत तुमरिंदमाः॥ इति वाल्मीकीये षट् पञ्चाशत् सर्गे॥

१ टीका हे शत्रु नाशकों मेरी यह इच्छा है कि तुम लोग मुझे पर्वत् के नीचे उतारो सूर्य की किरिणों से मेरेपंख जलगए हैं इस से मैं उतर नहीं सक्ता हूं॥

२ श्लोक वाग् सहायकरिष्येऽहं भवतां प्लवगेश्वराः भ्रातुः सलिल दानायानयध्वं मां जलांतिकम् पश्चात् सर्वं शुभं वक्ष्ये भवतां कार्य सिद्धये॥ इति अध्यात्मे सप्तम सर्गे॥

२ टीका हे श्रेष्ठ बानरों मैं अपनी वाणी से आप लोगों की सहायता करूंगा मुझ को भ्राता की जलांजली के वास्ते जल के तीर लेचलो पश्चात् आप लोगों की कार्य की सिद्धि के वास्ते सब शुभ कहूंगा॥

होसक्ती क्योंकि मैं वृद्ध हूं ॥ शंका । जब गिद्ध को समुद्र के तीर तक जाने की सामर्थ नहीं रही तब सब बानरों के खाने को कैसे कहना रहा ॥ समाधान, बानर लोग अपनी मृत्यु कहते रहे कि हमारी मृत्यु भई यह बात सुन के गिद्ध ने कहा कि इनकी मृत्यु होगी तब मैं सब को भक्षण करूंगा ॥

अनुजक्रियाकरिसागरतीरा कहनिजकथासुनहुकपिबीरा

समुद्र के तीर अपने छोटे भाई की क्रिया कर के तब अपनी कथा कहता है कि हे कपि बीर सुनो अनुज की क्रिया मुख्य है इसीसे प्रथम क्रिया कर के पीछे अपनी कथा कही ॥ बीर कहने का भाव, तुम सब बीर हो हमारी बीरता सुनो ॥

। गगनगएरबिनिकटउड़ाइ ।

हम दोनो भाइ प्रथम तरुणाई में आकाश में उड़ के सूर्य के निकट गए । प्रथम तरुणाई अर्थात् चढ़ती जवानी में ॥

तेजनसहिसकसोफिरिआवा। मैंअभिमानीरबिनियरावा।

सो जटायू तेज न सह सका लौट आया मैं अभिमानी सूर्य के पास गया कि जो यहीं से मैंभी लौट जाताहूं तो दोनो भाइयों के

१ श्लोक परं पराणां भक्षिष्ये वानराणां मृतं मृतम् ॥

१ टीका बानरों की पंक्तियों में जो जो मरता जायगा उसको मैं खाता जाऊंगा ॥

मुझे बल का बड़ा अभिमान रहा
उस से अधिक बली हूं मैं यहां से क्यों फिरूं इस अभिमान से सूर्य के पास गया अभिमान का फल दुःख है सो आगे कहते हैं ॥

जरेपंखअतितेजअपारा। परेउं भूमिकरिघोरचिकारा।

अत्यंत अपार तेज से पंख जले तब मैं घोर चिक्कार कर के पृथ्वी पर गिर पड़ा ॥ अति तेज अपार है कि जिनका तेज पृथ्वी पर नहीं सहा जाता तिन के निकट के तेज की क्या कहिये ॥ जिस तेज को वह न सह सका तिसको मैंने सहा इसीसे मेरे पंख जलगए। भूमि में परेउं अर्थात् भूमि की भी ठोकर लगी ॥

चंद्रमा नाम के एक मुनि वहां रहे सो मु
दया लगी क्योंकि वह संत हैं संत का चित्त कोमल होता है ॥

बहुप्रकारतेहिज्ञानसुनावा। देहजनितअभिमानछोड़ावा।

तिस मुनि ने बहुत प्रकार से ज्ञान सुनाया देह से उत्पन्न अभिमान को छुड़ाय दिया। वाल्मीकीय में लिखा है कि चंद्रमा मुनि ने रामजन्म से लेकर यहां तक भविष्य कथा गिद्ध से कही
अध्यात्म रामायण में शरीर की उत्पत्ति कही है। और मुनियों ने और और प्रकार से ज्ञान का सुनाना लिखा है इसीसे गुसाईंजी बहुत प्रकार का ज्ञान सुनाना लिखते हैं। दया लगी तब ज्ञान सुनाया। तात्पर्य। गिद्ध ज्ञान सुन ने का अधिकारी नहीं रहा मुनि ने

१ श्लोक बोधयामासतं चंद्र नामा मुनि कुलेश्वरः ॥ इति अध्यात्मे अष्टम सर्गे ॥
टीका मुनियों में श्रेष्ठ चन्द्रमा नाम के मुनि मुझ को ज्ञान देते भये ॥

दया करके ज्ञान सुनाया। मैं देहाभिमानी रहा सो मेरा देह जनित अभिमान उन्हों ने छोड़ाय दिया कि देह से आत्मा भिन्न है इसीसे आत्मा को दुःख नहीं है देह जड़ है तिसको दुःख नहीं है देहाभिमानी होने से दुःख है यह अध्यात्म रामायण के अष्टम सर्ग में स्पष्ट है॥

॥ तासुनारिनिशिचरपतिहरिही।

त्रेता युग में ब्रह्म मनुष्य तन धारन करेगा तिस की स्त्री को निशाचरों का पति हरेगा। त्रेता कहने से पाया गया कि यह वृत्तान्त सतयुग का है त्रेता ब्रह्म मनुज तन धरिही यह बालकाण्ड है तासु नारि निशिचर पति हरिही यह आरण्यकाण्ड है। अयोध्या काण्ड भरथ चरित्र है इसीसे नहीं कहा। तासु षोज पठई प्रभु दूता तिन्हैं मिले तैं होव पुनीता यह किष्किंधाकाण्ड है। यहां तक चंद्रमां मुनि ने गिद्ध से कहा सोई कथा गिद्ध ने बानरों से कही है॥

हि प्रभुदूता। तिन्हहिमिले तैं होव पुनीता।

तिस के खोजने के वास्ते प्रभु दूत भेजेंगे तिन के मिलने से तैं पुनीत होगा॥ प्रभु कहने का भाव, भगवान सब जान्ते हैं राज की मर्यादा रखने के वास्ते दूत भेजेंगे॥

जामिहहिंपंषकरासिजनिचिंता। तिन्हैंदिषायादिहिसुतैंसीता।

तेरे पंख जमेंगे चिन्ता न कर तिन्हैं अर्थात् बानरों को तू सीता दिखाय देना। करसि जनि चिन्ता कहने से सूचित भया कि गिद्ध

(१) श्लोक कथं धारयतुं सक्तो विपक्षो जीवितं प्रभो॥ इति अध्यात्मे अष्टम सर्गे॥ टीका हे प्रभो बिना पंख के मैं प्राण कैसे धारण कर सकूंगा॥

चिन्ता करता रहा कि बिना पंख मेरा निर्वाह कैसे होगा ॥ प्रथम तेरा कार्य होगा पंख जमेंगे पीछे तू सीता दिखा देना इसी निमित्त मुनि ने उसको वहां रक्खा रहा नहीं तो मुनि में यह सामर्थ रही कि उसी समय में पंख जमा देते । ऐसेही अनुप्रास की चौपाई और भी हैं । यथा, चितवति चकित चहूं दिसि सीता, कहँ गए नृप किसोर मन चिंता ॥ पुनः मुष मलीन उपजी मन चिन्ता त्रिजटा सन बोली तब सीता ॥ इत्यादि ॥

मुनिकिगिरासत्यभैआजू। सुनिममबचनकरहुप्रभुकाजू।

मुनि की वाणी आज सत्य भई मेरा बचन सुन के प्रभु का काज करो मुनि की बाणी सत्य भई कि तुम मुझ को मिले और मेरे पंख जमे । आजु कहने का भाव, सत्य की आशा में मैं रहा कि कब मुनि की बाणी सत्य होगी सो आज सत्य भई ॥ मुनि की गिरा जो मुझ को सत्य भई तो तुम को भी सत्य होगी । तुम को सीता मिलेंगी ॥ करहु प्रभु काजू कहने का भाव । कार्य करने के वास्ते प्रभु तुम को सामर्थ्य देंगे ॥ मम बचन कहने का भाव, मेरा बचन सत्य है मुझ को ज्ञान के द्वारा देख पड़ता है कि तुम सीता को देख के लौट आओगे ॥ इसी से मेरे बचन पर विश्वास मान के कार्य करो । प्रथम गिद्ध राज वोले कि मैं वचन से सहायता करूंगा सो अव बचन से सहायता करते हैं सो आगे कहते हैं ॥

---

(१) श्लोक उत्साहेच लहं कर्तु मद्यैवत्वां सपक्ष कम् ॥ इति वाल्मीकीये द्विषष्टितमः सर्गे ॥ टीका मुनि ने कहा कि मै तुझ को अभी पंख सहित करसक्ता हूं ॥

(२) श्लोक ज्ञानेन खलु पश्यामि दृष्ट्वा प्रत्यागमिष्यथ इति वाल्मीकीये अष्ट पंचाश सर्गे। टीका गिद्ध बानरों से वोले कि ज्ञान दृष्टि से मैं देखता हूं कि तुम सीता को देख कर लौट आओगे ॥

गिरित्रिकूटऊपरबसलंका

त्रिकूट पहाड़ के ऊपर लंका बसी है तहां रावन सहजहीं शंका रहित रहता है। गिरि के ऊपर लंका बसी है इस से गिरि दुर्ग की श्रेष्ठता दिखाई तहां रावन रहता है अर्थात् लंका पुरी का स्वामी है। सहज असंक कहने का भाव, किले के भरोसे अशंक नहीं है अपने पुरुषार्थ से अशंक है॥ वाल्मीकीय में लिखा है कि जामवन्त ने गिद्ध से पूंछा कि रावन कहां रहता है और जानकी कहां हैं इसी से गिद्ध दोनों के रहने का ठिकाना बताते हैं। यथा, गिरि त्रिकूट ऊपर वस लंका तहँरह रावन सहज असंका॥ यह रावन के रहने का ठिकाना बताया। तहँ असोक उप बन ज सीता वैठिसोच रत अहई, यह सीता के रहने का ठिकाना कहा। गुशाईं जी ने यहां जामवंत का प्रश्न नहीं लिखा गिद्ध का उत्तर देना लिखा है। उत्तर के देने से प्रश्न का बोध होचुका॥

जहां सीता सोच में रत अर्थात् सोच करती हुई वैठी हैं तहां अशोक उपवन है। रावन लंका पुरी में रहता है जानकी जी अशोक उप

---

(१) श्लोक क सीता केनवा दृष्टा को वाहरति मैथिलीम् तदाख्यातु भवान्सर्वं गतिर्भव वनौ कसाम्॥ इति वाल्मीकीये एकोन षष्ठी तमः सर्गः॥

टीका जामवंत ने कहा कि सीता कहां हैं किसने उनको देखा है सीता को किस ने हरा है यह सब हम से कहो और हमारी गति हो अर्थात् हम सब वानरों की रक्षा करो

(२) श्लोक लंका नाम नगर्यास्ते त्रिकूट गिरि मूर्द्धनि तत्राशोक वने सीता राक्षसी भिः सुरक्षिता। इति अध्यात्मे सप्तम सर्गे॥

टीका गिद्ध बोले कि त्रिकूट पर्वत् के शिखर पर लंका नाम की नगरी है वहां राक्षसियों से रक्षित हुई अशोक बनमें सीता हैं॥

बन में रहती हैं तात्पर्य जहां रावन रहता है तहां जानकी जी नहीं हैं ॥ बैठी कहने से सूचित करते हैं कि सीता जी सदा बैठी ही रहती हैं। यथा, देषि मनहिं महं कीन्ह प्रनामा, बैठे हि बीति जात निसि जामा ॥

दोहा

मैं देखौं तुम [illegible] । [illegible] दृ [illegible] ।
बूढ़ भयौ नत करत्यौं । कछुक सहाय तुम्हार ॥ २८ ॥

मैं सीता को देखता हूं तुम नहीं देखते हौ क्यों कि गिद्ध की दृष्टि अपार है अर्थात् बड़ी भारी है। मैं बूढ़ा भया नहीं तो तुम्हारी कुछ सहायता करता मैं देषौं तुम नाहीं इस पर संशय न करना कि हम को नहीं देख पड़ता तो इन को कैसे देख पड़ता होगा इसी पर कहते हैं कि गिद्ध की दृष्टि अपार है कछुक सहाय कहने का भाव, जो मेरी वृद्धावस्था न होती तो चार सौ कोस जाय के सीता की खबर लेआना कुछ नहीं रहा ॥

जो नाघै सत जोजन सागर । करै सो राम काज मति आगर ।

जो सौ योजन का समुद्र नाघै और मति का आगर कहे घर होय अर्थात्, जिस के बल बुद्धि दोनो होंय सो राम काज करै । संपाती ने प्रथम सब बानरों को राम काज करने को कहा । यथा, सुनि मम बचन करहु प्रभु काजू, अब एकही को कहते हैं कि इतने बानरों में

(१) श्लोक समुद्रमध्ये सा लंका शतयोजन दूरतः गृध्रत्वा दूरदृष्टिर्मे नात्रसंशय तुंक्षमम् ॥ इति अध्यात्मे सप्तम सर्गे । टीका समुद्र मे सौ योजन की दूरीपर वह लंका है गिद्ध होने के कारण मेरी दृष्टि दूरतक पहुंचती है इस में सन्देह करना योग्य नहीं है ॥

जो सौ[1] योजन का समुद्र नाघै सो राम काज करै। प्रथम कहा कि, त्रिकूट गिरि के ऊपर लंका वसी है सो अव त्रिकूट का ठिकाना वताते हैं, कि सौ योजन समुद्र के पार में है॥ शत योजन कहने का भाव, जो सौ योजन न कहते तो संदेह रहता कि, लंका किस सागर के पार है, क्योंकि, सागर सब समुद्रों का नाम है। यथा, करहुसो मम उरधाम सदा क्षीर सागर सयन। दूध के समुद्र को भी सागर कहते हैं अब निश्चय भया कि जो सौ योजन का समुद्र है तिस के पार लंका है॥

मोहिंविलोकि धरहुमन धीरा। रामकृपाकस भयोशरीरा।

मुझ को देख के मन में धीरज धरो कि रामजी की कृपा से मेरा शरीर कैसा होगया। तात्पर्य, रामजी की कृपा का प्रभाव प्रत्यक्ष दीखता है कि अपनी आंखों से देखलो तुम्हारे देखतेही कैसा शरीर रहा और अब कैसा होगया॥ मन में धीरज धरो यह कहने का भाव, जब गिद्ध ने सौ योजन का समुद्र सुनाया तब वानरों के हृदय में कादरता आई और धीरज छूटगया इसपर गिद्ध कहते हैं कि धीरज धरो कदराई त्याग करो। यथा, मोहिं विलोकि धरोमन धीरा, और तासु दूत तुमतजि कदिराई॥

पापीउजाकरनामसुमिरहीं। अतिअपारभवसागरतरहीं।

(१) श्लोक शतयोजन विस्तीर्णं समुद्रं यस्तु लंघयेत् सएव जानकींदृष्ट्वा पुनरायास्यति ध्रुवं॥ इति अध्यात्मे सप्तम सर्गे॥ टीका सौ योजन विस्तार समुद्र जो नांघेगा सो अव एव जानकी को देख कर फिर आवेगा॥

(२) पश्यन्तुपक्षौ मेयातौ नूतनावति कोमलौ॥ इति अध्यात्मे अष्टम सर्गे॥ टीका देखो मेरे नवीन और कोमल पंख होगए॥

५।पी भी जिसका नाम सुमिरते हैं वह अति अपार भव समुद्र के पार होते हैं। मोहिं विलोकि धरहु मन धीरा, यह प्रत्यक्ष प्रमाण है अब शब्द प्रमाण कहते हैं कि पापी जिसका नाम सुमिर के भव सागर पार होते हैं यह बात प्रत्यक्ष नहीं है। वेद पुराण में है सोई प्रमाण है॥ पापिउ कहने का भाव, पापी भव समुद्र पार होने में अति असमर्थ है। अति अपार भव सागर कहने का भाव, पापी अति अपार भव सागर तरता है तब तुमको सौ योजन का समुद्र नांघना क्या है॥

तासु दूत तुम तजि कदराई। राम हृदय धरि करहु उपाई।

तुम तिनके दूत हौ कदराई छोड़के रामजी को हृदय में धरके उपाय करो॥ तासुदूत कहने का भाव, पापी से और प्रभु से कुछ सम्बन्ध नहीं है सो भी नाम लेके भव समुद्र पार होता है तुम तो उनके दूत हौ उपाय करने में कादरता त्याग करो कादरता के रहने से उपाय सिद्ध नहीं होता॥ राम हृदय धरि कहने का भाव, जिनके प्रतापसे मेरे पंख जमे जिनका नाम सुमिरने से पापी भव समुद्र तरता है तिनको सुमिर के उपाय करो कार्य सिद्ध होगा॥ यहां विचारहिं कपि मन माहीं, यहां से और तासु दूत तुम तजि कदराई, राम हृदय धरि करहु उपाई, यहां तक संपाति मिलन प्रसंग है॥

(१) श्लोक यन्नामस्मृति मात्रतोपरिमितं संसार वारांनिधिं तीर्त्वागच्छति दुर्जनोपिपरमं विष्णोःपदं सास्वतं, तस्यैव स्थिति कारिणस्त्रिजगतां रामस्यभक्ताः प्रियाः यूयंकिन्न समुद्रमात्र तरणे शक्ताः कथं वानराः ॥ इति अध्यात्मे अष्टम सर्गे ॥ टीका, जिन के नाम स्मरण मात्र से पापी भी अपार संसार समुद्र को तर के अविनाशी विष्णु पद को प्राप्त होता है उस त्रैलोक्य रक्षक प्रभु रामचंद्र के तुम प्रिय भक्त वानर चार सौ कोस के समुद्र तरनें में कैसे समर्थ न होगे॥

हैं अतिविस्मयभयऊ।

हे उमा ऐसा कह कर जब गिद्ध राज चले गये तब तिनके अर्थात् बानरों के मन में समुद्र देख के अति विस्मय भया ॥ अति विस्मय होने का भाव, सीता के न मिलने का विस्मय रहा अब समुद्र लंघनका अति विस्मय भया, ॥ यथा, वनचर विकल विषाद बस देषि उदधि अवगाह इति रामाज्ञा ॥

निज निज बल सब काहू भाषा। पार जा ॥

अपना अपना बल सब ने कहा पार जाने का संशय सबां न रक्खा सब काहू भाषा कहने से प्रमाण न रहा कि कितने बानरों ने अपना अपना बल कहा। पार जाय कै संशय राषा यह कहने से प्रमाण होगया कि सौ योजन का समुद्र है इसीमें पारजाने का संशय है प्रथम सब बानरों ने अपना अपना बल कहा तब जाम वंत ने अपना बल कहा तब अंगद ने कहा इससे यह निश्चय भया कि जब अंगद ने अंत में सौ योजन जानें को कहा तब जामवंत ने नब्बे योजन जाने को कहा और वानरों ने अस्सी योजन तक जाने को कहा ॥ सब वानरों के अपना अपना बल कहने का प्रमाण वाल्मीकीय रामायण के पैंसठ के सर्ग मे लिखा है ॥

भयौं अब कहै रि सा। नहि । प्रथम बल लेसा।

रीछों के ईश जामवंत कहते हैं कि हम अब बूढ़े भये तन में

(१) श्लोक, आकाश मिवदुःपारं सागरं प्रेक्ष्य वानराः विषेदुः सहिताः सर्वे कथं कार्यमिति ब्रुवन् ॥ टीका सब वानर आकाश के समान अपार समुद्र को देखकर क्या करैं ऐसा कहतेहुए सब दुखित भए ॥

प्रथम वल का लेश नरहा। तात्पर्य यह काम हमारे बल के लेशही से होजाता प्रथम बल क्या रहा सो आगे कहते हैं॥

जबहि त्रिविक्रम भए परारी। तब मैं तरुण रहेउं बल भारी।

पर कहे दुष्ट तिन के अरि भगवान जब त्रिविक्रम कहें बावन रूप भए तब हम भारी वलवान तरुण अवस्था को प्राप्तरहे। परारि कहने का भाव, भगवान खर कहें राक्षसों के अरि हैं तिनके परास्त करने के अर्थ और देवताओं के आनन्द देने के निमित बावन भए, अथवा खरारि कहें रामजी जब त्रिविक्र भए क्यों कि खर दूषण के अरि रामही जी हैं॥ जामवंत ने भारी बल से जो भारी पुरुषार्थ किये सो आगे कहते हैं॥

❀ दोहा ❀

बलि बांधत प्रभु बाढ़ेउ सो तनु बरनि न जाय।
उभय घरी महँ दीन्ही। सात प्रदच्छिन धाय॥ २९॥

भगवान राजा बलि के बांधते में जो बढ़े सोतन वरनी नहीं जाता तब हम ने दोघड़ी में उनकी सात प्रदक्षिणा दौड़ के किई। एक पग में सातों पाताल और मृत्युलोक नापे एक में साते स्वर्ग नापे और एक के वास्ते बलि को बांधा। प्रभु कहने का भाव, बलि के बांधने की सामर्थ भगवान ही के रही और इन्द्रादि देव सब हार रहे। सो तनु बरनि न जाय कहने का भाव, जिस तन का वर्णन नहीं होसक्ता कि कितना बड़ा रहा तिस तन की हम ने दो घड़ी में सात प्रदक्षिण किई इतना भारी बल रहा। उभय घड़ी कहने का भाव दो घड़ी वह रूप रहा इसीसे हम ने धाय कर प्रद-

क्षिणा किई नहीं तो धाय के प्रदक्षिणा नहीं किई जाती ॥

अंगद कहै जाउं मैं पारा। जिय संसय कछु फिरती बारा।

अंगद कहते हैं कि हम पार जांयगे जीमें कछु संशय फिरती वार की है चारसौ कोस समुद्र कूदने से बड़ा श्रम होगा इसीसे लौटने में संशय है। जब सब बानर बोले तब अंगद नहीं बोले क्योंकि सिपाह की पंक्ति में राजा के बोलने की शोभा नहीं है। राजों की पंक्ति में राजा के बोलने की शोभा है। जब जामवंत बोले तब अंगद बोले जामवंत राजा हैं इसीसे उन को रिच्छेस कहा है ॥ जाउं मैं पारा कहने का भाव, जब सब बानरों ने पार जाने का संशय रक्खा तब अंगद ने लौटने का संशय कहा। जिय संशय कछु कहने का भाव, जाने में तो कुछ संशय नहीं है परन्तु लौटने में कुछ संशय है ॥

जामवंत कह तुम सब लायक। पठइय किमि सबही कर नायक।

जामवंत ने कहा कि तुम सब लायक हौ सब के नायक हौ हम तुम को कैसे भेजें। सब लायक कहने का भाव, अंगद ने फिरने में संशय कहा इस पर जामवंत[२] कहते हैं कि तुम सब लायक हौ

(१) श्लोक अंगदो प्याह मे गंतुं शक्यं पारं महोदधेः पुनर्लंघन सामर्थ्यं न जाना म्यस्ति वानरा ॥ इति अध्यात्मे नवम सर्गे ॥ टीका अंगद बोले कि समुद्र के पार हम जासक्ते हैं फिरलांघने की हम में सामर्थ है यानहीं यहहम नहीं जान्ते ॥

(२) श्लोक तमा हजाम्ब वान्वीरं त्वं राजानो नियामकः न युक्तं त्वां नियोक्तुं मे त्वं समर्थो ऽसि यद्यपि ॥ इति अध्यात्मे नवम सर्गे ॥ टीका जामवंत अंगद से बोले कि हे वीर तुम हमको आज्ञा देने वाले राजा हौ तुम को हम आज्ञा देनेके योग्य नहीं हैं यद्यपि तुम समर्थ हौ ॥

जाने लायक और कार्य करके लौट आने लायक हो। सब कर नायक कहने का भाव, राजा काम करे सिपाह बैठा रहै यह अनुचित है॥

कहैरीछपतिसुनुहनुमाना। काचुपसाधि रहेहुबलवाना।

जामवंत कहते हैं कि हे बलवान हनुमान सुनो तुम क्या चुप साध रहे हो। रीछ पति कहने का भाव, जामवंत सब से बड़े हैं और राजा हैं वेही हनुमानजी को प्रेरणा कर सक्ते हैं। हनुमान कहने का भाव, जन्म काल में तुम को इन्द्र के बज्र ने बाधा नहीं किई तुम ऐसे बलवान हो। का चुप साधि रहेहु कहने का भाव, सब बानरों ने अपना अपना बल कहा तुम बलवान होके क्यों नहीं बोलते हो॥

पवनतनयबलपवनसमाना। बुधिबिबेकबिज्ञाननिधाना।

तुम पवन के पुत्र हो और बल में पवन के समान हो और बुद्धि विवेक विज्ञान के निधान हो॥ यहां पवन तनय कह के सूचित किये कि जामवंत ने हनुमानजी के जन्म की कथा कही है जन्म की कथा कहिके हनुमानजी के बल की बड़ाई किई है। यथा, जयति बाल कपि केलि कौतुक उदित चंड कर मंडल ग्रास कर्त्ता, राहु रवि शक्र पवि गर्व पर्वी करण शरण भय हरण जय भुवन भर्त्ता, इति विनये। पुनः जाको बाल बिनोद समुझि जिय डरत दिवाकर

(१) श्लोक इत्युक्त्वा जांववा न्प्राह हनूमन्त मवस्थितं हनूमन् किं रहस्तूष्णीं स्थीयते कार्य गौरवे ॥ इति अध्यात्मे नवम सर्गे ॥ टीका ऐसा कह कर जामवंत हनुमान को चुपबैठे देख कर बोले कि हे हनुमन्त बडे कार्य के समय एकान्त में चुपसाध कर तुम क्यों बैठेहो ॥

भोर को जाकी चिबुक चोंट चूरण कियो रद मद कुलिस कठोर को। इति विनये ॥ बुद्धि विवेक विज्ञान के निधान कहने का भाव, बल बुद्धि विवेक और विज्ञान जिस के हैं वह सब काम कर सक्ता है बुद्धि से कार्य समझै बल से कार्य सिद्ध करै कार्य में विवेक रक्खे जिस में अनुचित न होने पावे और विज्ञान से कार्य का अनुभव करे सो येसब तुम में हैं ॥

कौनसोकाजकठिनजगमाहीं। जोनहिंहोयताततुमपाहीं।

हे तात जगत में सो कौन कठिन कार्य है जो तुम से न होसके जिसके कारण तुम चुप होरहे हौ ॥

रामकाजलगितवअवतारा। सुनतहिंभयो पर्वताकारा।

राम काज के लिये तुम्हारा अवतार है यह सुन तेही पर्वताकार भए कौन पर्वत के आकार भए सो आगे लिखते हैं कनक बरन तन तेज विराजा, मानहु अपर गिरिन कर राजा। राम काज लगि तव अवतारा यह सुनते ही पर्वता कार भए अर्थात् उनके हृदय में बड़ा हर्ष भया यथा, रामकाजलगि जनम जग सुनि हर्षे हनुमान। इति रामाज्ञा जामवंत बोले कि राम काज लगि तव अवतारा यह सुन के हनुमान जी ने अपनी देह बढ़ाई। का चुप साधि रहेउ बलवाना यह सुन के सिंह नाद कर के अपना बल दिखाया यथा,

(१.) श्लोक राम कार्यार्थ मेव त्वं जनितोसि महात्मना श्रुत्वा जांबवतो वाक्यं हनूमानति हर्षितः ॥ इति अध्यात्मे नवम सर्गे ॥ टीका हे हनुमान महात्मा वायु ने रामचन्द्र के कार्य के लिये तुम को उत्पन्न किया है जाँबवतो का यह वचन सुनकर हनुमानजी अति हर्षित भए ॥

सिंह नाद करि बारहिं बारा, लीलहि लांघौं जल निधि पारा ॥

कनकबरनतनतेजबिराजा। मानहुअपरगिरिन्हकरराज।

सुवर्ण की नाईं बरन कहें रंग है औ तन में तेज विराजता है मानो अपर कहें दूसरा गिरिन का राजा अर्थात् सुमेर है। सुमेर की उपमा देने का भाव, हनुमान जी कनक वरण हैं सुमेर पर्वत भी कनक का है। हनुमान जी का स्वरूप भारी है सुमेर भारी है सुमेर सब पर्वतों का राजा है हनुमान जी सब कपियों के राजा हैं प्रमाण, जयति मर्कटाधीश मृगराज विक्रम महादेव मुद-मंगला लय कपाली ॥ इति विनये

सिंहनादकरिबारहिंबारा। लीलहिनांघौंजलनिधिषारा।

बार बार सिंह नाद कर के बोले कि खारे समुद्र को कौतुक ही में नाघैंगे लीलहिं लांघौं जल निधि खारा कहने का भाव, सब समुद्र हम नाघ सक्ते हैं यह खारा समुद्र सब से छोटा है इस को तो लीला ही मात्र में नाघ सक्ते हैं ॥

सहितसहायरावनहिमारी। आनौइहांत्रिकूटउपारी।

सहाय सहित रावन को मार के त्रिकूट पर्वत् उखाड़ के यहां ले आवैं संपाती ने कहा कि गिरि त्रिकूट ऊपर बस लंका इस से सूचित किया कि लंका गढ़ कठिन है तहं रह रावन सहज असंका

(१) श्लोक रावणं सकुलं हत्वा नेष्ये जनक नन्दिनीं लंका सपर्वतां धृत्वा रामस्या ग्रेक्षिपाम्यहम् ॥ इति अध्यात्मे नवम सर्गे ॥ टीका हनुमान जी बोले कि कुल सहित रावण को मार के जानकी को हम लेआवैं और पर्वत के सहित लंकाको उठाकर राम जी के आगे फेंक देंगे ॥

इससे सूचित किया कि रावन भारी बीर है इसपर हनुमान जी कहते हैं कि सहित सहाय रावनहि मारी, आनौ यहां त्रिकूट उपारी ॥

जामवंत मैं पूछौं तोही। उचित सिषावन दीजहु मोही।

हे जामवंत हम तुमसे पूछते हैं हम को उचित सिषावन दीजिये। तात्पर्य तुह्मारे कहनेसे हम ने अपना बल कहा अब जो उचित होय सोकरें। उचित कहने का भाव, जो हमने अपना वल कहा रावण का मारना सीता को ले आना सो अनुचित है क्यों कि इस में राम जी का यश नहीं है अपमान है। यही वात अंगद ने रावन से कही है यथा जो न राम अपमा नहिं डरऊं, तोहि देषत अस कौतुक करऊं, दोहा तोहि पटकि महि सेन हति चौपट करि तव गांव, तव जुवतिन समेत सठ जनक सुतहि लैजांव। जव हनुमान जी इस वातको अनुचित समुझते हैं तवजामवतं से उचित सिखापन मागते हैं।

यतना करहु तात तुम जाई। सीतहि देषि कहहु सु

हे तात तुम जाके इतना करो कि सीता को देख के आय के सुधि कहो ॥ यतना करहु कहने का भाव, अभी इतना ही पुरुषार्थ करना उचित है कि सीता कि खबर लेआवो।

तबनिज भुजबल राजिवनैना। कौतुक लागि संग कपि सैना।

तव अपने भुज बल से कमल नयन रामचन्द्र कौतुक के निमित्त वानरों की सेना साथ में लेकर ॥ निज भुज बल कहने का भाव, रामजी अपने भुजबल से राक्षसों का संघार करेंगे सेना तो केवल

कौतुक के निमित्त है। राजिव नैन कहने का भाव, जब कृपा दृष्टि होती है तब राजिव नयन कहते हैं। यथा, देषी राम सकल कपि सैना, चितै कृपा करि राजिव नैना। पुनः राजिव नयन धरे धनु सायक, भगत विपति भंजन सुष दायक। इत्यादि तात्पर्य निशाचरों पर रामजी की कृपा है मार के मुक्ति देगें इसीसे यहां राजिव नयन कहा है। यथा, उमा राम मृदु चित करुना कर, वैर भाव सुमिरत मोहिं निसिचर, देहि परम गति सो जिय जानी, अस कृपालु को कहहु भवानी॥

कपिसेन संग संहारिनिशिचर ॥
नि नारदा

वानरों की सेना संग में लेके निश्चरों को मार के रामजी सीता को लैआवेंगे तीनो लोक का पवित्र करने वाला सुयश देवता और नारदादि मुनि बखानेंगे॥ नारदादि कहने का भाव, राम चरित्र बखान करने में नारद मुनि सब के आदि में हैं ॥ चंद्रमा मुनि की कही रामायण संपाती ने वानरों से वालकाण्ड से किष्किंधाकाण्ड तक बर्णन किई है। यथा, त्रेता ब्रह्म मनुज तनु धरिही यह वालकाण्ड है तासु नारि निशिचर पति हरिही यह आरण्य काण्ड है। तासु षोज पठइहि प्रभु दूता, तिन्हे मिले तैं होब पुनीता यह किष्किंधा काण्ड है अब सुन्दर काण्ड से उत्तर काण्ड तक जामवंत कहते हैं यथा, इतना करहु तात तुम जाई, सीतहि देषि कहहु

(१) श्लोक। यस्या वतार चरितानि विरंचि लोके गायंति नारद मुखाभव पद्मजाद्याः॥ इति अध्यात्मे॥ टीका जिस रामचन्द्र के अवतार का चरित्रों को ब्रह्मलोक में नारदादि शिव ब्रह्मादि गाते हैं॥

। आई, यह सुन्दर काण्ड है कपि सेन संग सँहारि निशिचर र सीतहिं आनि हैं यह लंका काण्ड है ॥ त्रैलोक्य पावन सुजश सुर मुनि नारदादि बखानिहैं, यह उत्तर काण्ड है । रामजी के जस का जानना उत्तर काण्ड में लिखा है । यथा, राजा राम अवध रजधानी गावत गुन सुर मुनि वर बानी ॥ किष्किंधा काण्ड की समाप्ति में सातो काण्ड समाप्त किये इसीसे यह दिखाया है कि इस काण्ड के पाठ करने से सातो काण्ड के पाठ का फल है । अब आगे सुयश का महात्म कहते हैं ॥

जो सुनत गावत कहत समुझत परम पद नर पावई ।
रघुबीर पद पाथोज मधुकर दास तुलसी गावई ।

जो सुनते गाते कहते समुझते हैं सो नर परम पद पाते हैं रघुबीर के चरण कमल के मधुकर तुलसी दास गाते हैं ॥ जो श्रोता होके सुनते हैं राग से गाते हैं वक्ता होके कहते हैं अर्थ को समुझते हैं । सुनने से गाने से कहने से समुझने से उनको परम पद की प्राप्ति होती है । सो परम पद अर्थात् मुक्ति चार प्रकार की है सालोक्य सामीप्य सारूप्य सायुज्य । सुनने वाले सालोक्य पाते हैं गाने वाले सामीप्य पाते हैं क्योंकि जहां हमारे भक्त गाते हम रहते हैं । कहने वाले सारूप्य पाते हैं क्योंकि व्यास [१] का स्वरूप है । समझ ने वाले सायुज्य पाते हैं । यथा, जानत तुम्हहिं तुम्हहिं होइ जाई । सुनने वाले, गाने वाले कहने वाले समुझने वाले, ये चार हैं । इन चारों में गुसाईंजी अपने को गाने वाले

(१) मद्भक्ताः यत्र गायंति तत्र तिष्ठामि नारद ॥ टीका हे नारद जहां हमारे भक्त गान करते हैं वहां पर हम रहते हैं ॥

५   ; दास तुलसी गावहि ॥ सुयश गाके नर परम ५८

पाते हैं तुलसी राम चरन में प्रीति होने के लिये गाते हैं ॥ तात्पर्य राम चरित्र रामचरन में रती और परम पद दोनो देता है। यथा रामचरन रति जो चहै अथवा पद निर्वान। भाव सहित सो यहि कथा। करै श्रवन पुट पान ॥ रघुबीर के पद कमल के मधु कर तुलसीदास हैं तात्पर्य मधुकर मकरंद पान करता है तुलसी राम पद में अनुराग करते हैं यही मकरंद का पान करना है। यथा, पद पदुम परागा रस अनुरागा मम मन मधुप करै पाना। मधुकरगूंजता तुलसी गाते हैं। नर कहने का भाव ना दादि के बखाने जो चरित हैं तिनके सुनने के अधिकारी नर हैं नारी नहीं जदपि जोषिता अन अधिकारी। इत्यादि ॥ इसीसे परम पद का पाना नर को कहा है नारी को नहीं। यथा परम पद नर पावई और तुलसी जो भाषामें राम चरित गाते हैं तिस के अधिकारी नर नारी दोनो हैं ॥ इसीसे सुनहिं जे नर अरु नारि कहते हैं ॥ प्रथम सुनना कहने का भाव, श्रवण भक्ति प्रथम है। सुनने से श्रवण भक्ति कहा और गाने से कीर्तन भक्ति कहा। कीर्तन में दो भेद हैं गान रीति और कथा रीति इसीसे गाना और कहना दोनो भेद कहे हैं। समुझने से स्मरण भक्ति कहा। रघुबीर पद पाथोज से पाद से वन भक्ति कहा ॥

भव भेषज रघुनाथ जस। सुनहिं जे नर अरु नारि।
न्ह   । सिद्धि करहिं त्रिशिरारि ॥

(२) श्लोक, श्रवणं कीर्तनं विष्णो स्मरणं पाद सेवनं ॥ इति भागवते ॥ टीका श्रवण कीर्तन विष्णुका स्मरण और चरण सेवा ॥

नील उपल कहें नील मणी के समान श्याम तन है तिस तन की शोभा कोटि काम से अधिक है जिनका नाम पाप रूपी पक्षी का वधिक है तिनके समूह गुण सुनिये। रूप गुण नाम तीन कह के यह जनाते हैं कि रूप हृदेमें धरे गुण श्रवण करे नाम जपे॥ प्रमाण, श्रुति राम कथा मुख रामको नाम हिये पुनि रामहि को थलुहै इति कवित्त रामायणे॥ नीलो पल तन श्याम काम कोटि शोभा अधिक॥ इस कहने से रूप का नियम किया कि जिस रूप से मनु के आगे प्रगट भए उसी रूप का ध्यान धरो। मनु को इसी रूप से भगवान ने दर्शन दिया है॥ प्रमाण, नील सरोरुह नील मनि नील नीर धर श्याम, लाजहिं तन सोभा निरखि कोटि कोटि सत काम, सुनिय तासु गुन ग्राम यह कहने से गुण का नियम किया कि राम चरित मानस सुनो मनु प्रार्थित मूर्ति का चरित्र मानस रामायण है॥ प्रमाण, लीला कीन्ह जो तेहि अवतारा, सोसब क-हिहौं मति अनुसारा। जासु नाम अघखग बधिक। इससे नाम का नियम किया कि राम नाम जपो॥ अघ षग वधिक राम नाम है। है प्रमाण, राम सकल नामन ते अधिका। होउ नाथ अघ खग गन बधिका॥ बधिक की उपमा देने का भाव, बधिक स्वाभाविक पक्षियों का बध करता है ऐसे ही राम नाम स्वाभाविक पापों का नाश करता है। राम जी के रूप गुण नाम का माहात्म्य कह के यह काण्ड समाप्त किया॥

इ ग जब गयऊ यहां से नीलो पल तन श्याम

सब कथा कुमारा यह प्रसंग है॥ किष्किन्धा

(१) श्लोक तस्मादभारत सर्वात्मा भगवान् हरि रीश्वरः, श्रोतव्यः कीर्तितव्यश्च स्मर्तव्यश्चे च्छता भयं॥ इति भागवते॥ टीका हे अर्जुन अभय चाहने वाले पुरुष सर्वात्मा भगवान् हरि ईश्वर को श्रवण कीर्तन और स्मरण करें॥

काण्ड में १४ प्रसंग हैं ॥ प्रमाण मारुती मिलन प्रसंग १ पुनि सुग्रीव मिताई २ बालि प्रान कर भंग ३ कपिहि तिलक करि ४ प्रभुकृत शैल प्रवर्षन बास ५ वर्णन वर्षा ६ सरद रितु ७ राम रोष ८ कपि त्रास ९ जेहि बिधि कपि पति कीस पठाए १० सीता खोज सकल दिसि धाए ११ बिवर प्रवेस कीन्ह जेहि भांती १२ कपिन बहोरि मिला संपाती १३ सुनि सब कथा समीर कुमारा १४ ॥ ये सब प्रसंग जहां जहां पूरे भए हैं तहां तहां उनकी समाप्ति दिखाई गई है।

इति श्रीराम चरित्र ... सकल कलि कलुष विध्वंसने विशुद्ध संतोष संपादनोनाम चतुर्थः सोपानः समाप्तः

सोपान के नाम का हेतु यह है कि काण्ड के अंत में जो फल स्तुति है सोई सोपान का नाम है। यथा, बाल काण्ड की फल स्तुति में व्रत बंध विवाह का वर्णन है सो यह सब कर्म है ॥ कर्म का फल सुख है इसीसे बालकांड सुख संपादन नाम का सोपान है ॥ अयो[illegible] काण्ड की फल स्तुति में प्रेम वैराग्य का वर्णन है यथा सीय राम पद प्रेम, अवसि होय भव रस बिरति इसीसे प्रेम वैराग्य संपादन नाम का सोपान है। आरण्य काण्ड की फल स्तुति में वैराग्य वर्णन है। यथा दीप शिषा सम जुवती तन मन जनि होसि पतंग। इसीसे विमल वैराग्य संपादन नाम का सोपान है ॥ किष्किन्धा काण्ड की फल स्तुति में मनोर्थ की सिद्धि है। यथा तिनके सकल मनोरथ सिद्धि करहि त्रिशिरारि। मनोर्थ की सिद्धि से संतोष है इसीसे विशुद्ध संतोस संपादन नाम का सोपान है॥ सुन्दर काण्ड की फल स्तुति में ज्ञान की प्राप्ति है। यथा, सकल सुमंगल दायक रघुनायक गुन गान। सुमंगल ज्ञान का नाम है इसीसे ज्ञान संपादन

नाम का सोपान है ॥ लंका काण्ड की फल स्तुति में विज्ञान का वर्णन है। यथा, कामादि हर विज्ञान कर सुर सिद्ध मुनि गावहिं मुदा। इसीसे विज्ञान संपादक नाम का सोपान है ॥ उत्तर काण्ड की फल स्तुति में अविरल हरि भक्ति वर्णन है। यथा तिमि रघुनाथ निरंतर प्रियलागो मोहिं राम। इसीसे अविरल हरि भक्ति संपादन नाम का सोपान है॥ वाल काण्ड में धर्म का वर्णन है आरण्य में वैराग्य किष्किन्धा में संतोष सुन्दर में ज्ञान लंका में विज्ञान उत्तर में अविरल हरि भक्ति कहा है ॥ इसी प्रकार से धर्म वैराग्य संतोष ज्ञान विज्ञान हरि भक्ति की प्राप्ति क्रम से है। धर्म का फल वैराग्य है वैराग्य का फल संतोष संतोष का फल ज्ञान ज्ञान का फल विज्ञान और विज्ञान का फल हरि भक्ति है ॥

इति श्रीराम चरितमानसे किष्किन्धा काण्डे श्रीपण्डित राम कुमार कृत मानस तत्व भास्कर तिलकः समाप्तः ॥

